रूप अरूप

सामाजिक उपन्यास

लेखक

श्रीराम शर्मा 'राम'

कृष्णा ब्रदर्स, अजमेर

प्रकाशक :

जयकृष्ण अग्रवाल

कृष्णा ब्रदर्स

कचहरी रोड, अजमेर ।

मूल्य : सात रुपया पचास पैसे

मुद्रक :

एच० सी० कपूर

टाइम्स प्रिन्टिग प्रेस, ब्रह्मपुरी अजमेर ।

एक

संन्ध्या का आँचल ओढ़ते ही, लता गुलाब की कली के समान खिल उठी। संयोग की बात थी कि उस दिन वह दिन भर ही उदास और उन्मन बनी रही। लेकिन जब साँझ आई, तो बंगले में प्रवेश करते ही लता के पिता ने सहसा सुनाया—'आज अतुल आ रहा है।' और जब वह आराम कुर्सी पर बैठ गये, तो बोले—'लता बेटी, आज अतुल ने अपने एक मुकदमे में जिस प्रकार की जिरह की, उसे सुनकर मेरा यह निश्चित मत बना कि वह अच्छा वकील भले ही बने, परन्तु रुपया उपार्जित नही कर सकता।'

उसी समय लता की माँ भी वहाँ आ गई। पिता की बात सुनकर लता चुप थी। उसके मन में केवल एक बात थी कि अतुल आ रहा है। वह इधर कई दिन से नहीं आया था। उसे आना चाहिए था। लेकिन जब पिता ने उस अतुल के प्रति अपना अभिमत प्रकट किया, तो कदाचित् वह उद्देश्यरहित नहीं था। उसका एक अभिप्राय था। इस बात को लता भी अनुभव करती थी कि अब उसे जवान समझ लिया गया है। इस विषय में स्वयं लता का व्यक्तिगत मत क्या था, वह भले ही, उसे प्रकट करने की क्षमता न रखती हो, परन्तु इतना उसे भी पता

था कि अब उसे कोई गुनगुनाता भौंरा चाहिए । ऐसा साथी चाहिए कि जो उसके मानस में भरे प्रेम और समर्पण के भाव को समझे । आतुर बनी हुई लता यह भी चाहती कि वह किसी के पास बैठ कर अपनी भावना का प्रदर्शन करे । कुछ अपनी कहे, कुछ उसकी सुने । अतएव, जब पिता से सुना कि आज अतुल आने वाला है, तो वह मन-ही-मन इतनी आकुल बनी कि बरबस, उसके आने की प्रतीक्षा करने लगी । उसमें खो गयी ।

किन्तु उसी समय जब लता की माँ उधर आयी और अतुल के प्रति पति का अभिमत उस कमरे के द्वार पर आते-आते उसने सुना, तो सहज भाव से मुस्कराती हुई बोली—'आरम्भ में आप के लिए भी ऐसे ही विचार थे, लता के बाबा जी के ।' उसने कहा—'अतुल अभी—अब तो अदालत के दरवाज़े पर पहुँचा है । यही कहना है न आपको, जवान है, भावना से भरा है । काम में लापरवाही करता है । पैसे को तुच्छ मानता है ।'

पति का नाम जगजीवन बाबू था । वह नगर के प्रसिद्ध वकील थे । अपनी वकालत से लाखों रुपया उपार्जित करने में सफल हुए थे । अतुल वकालत की परीक्षा पास करके उनका शिष्य बना था । दो-तीन वर्ष पूर्व वह लता का ट्यूटर भी रह चुका था । जगजीवन बाबू के लिए यह दुःख की बात थी कि उनके घर में प्रचुर धन होते हुए भी, सन्तान के नाम पर केवल लता थी । अतएव, उस लता पर घर का पैसा तो समर्पित था ही, माँ-बाप का दुलार भी सुगमता से ढरकाया गया था । लता ने उस प्यार का पूर्णता से उपभोग किया था ।

फलस्वरूप, पत्नी की बात सुनकर जगजीवन बाबू सहज भाव से हँस दिये— 'अजी, राधारानी, तुम्हारी नज़र में तो मैं अब भी अयोग्य ही हूँ ।' वह बोले—'अदालत में जाकर आदमी को दूसरा बनना पड़ता है । हाड़-माँस का नहीं, वहाँ पर पत्थर का इन्सान चाहिए । वहाँ आत्मा

और परमात्मा का स्वर नहीं सुना जाता। मुवक्किल की जेब से पैसा निकालने के लिए कुटिल व्यवहार भी करना पड़ता है।'

राधारानी हँस दी—'ज़ी हाँ, मैं खूब समझती हूँ। सच को झूठ और झूठ को सच सिद्ध करना ही वकील का काम है।' वह बोली—'मेरा तो आज भी मत है कि यदि वकील न हो, अदालतों में तिलस्मी तमाशा न दिखाया जाता हो, तो समाज का बहुत सा रोग स्वतः ही दूर हो सकता है। कानून के नाम पर वहाँ इन्सान ठगा जाता है। वह बेचारा मूर्ख भी बनता है।'

प्रस्तुत वार्ता विवाद में जा रही थी और लता को उसमें कोई रुचि नहीं थी, अतएव वह उठी और बंगले के लॉन में पहुँच गयी। संयोग से उस समय पड़ोस के बंगले के कुछ बच्चे वहाँ आ गये। पड़ोस में एक जज साहब रहते थे। उनके कई लड़के लड़कियाँ थीं। लता, उसकी माँ और पिता प्रायः उन बच्चों से खेलते। कदाचित् यही कारण था कि वे सब बिना बुलाये भी उस बंगले के लॉन में आ जाते उनमें दो लड़के थे, तीन लड़कियाँ, चार, पाँच और सात वर्ष को आयु से वे अधिक के नहीं थे। अतएव बे सब सरल और सुहावने लगते थे।

लेकिन जब लता कमरे से चली, तो माता पिता के मध्य जिस प्रकार की चलती हुई बात वह छोड़ आई, वह भले ही उसकी दृष्टि में रोचक नहीं थी, लेकिन उद्देश्यमूलक अवश्य थी। अतएव, लॉन में पहुँचकर भी वह उसी चर्चा पर अटकी रही। जब वह जूही और चमेली के पेड़ों के पास पहुँची, तो तभी, सहसा उसके मन में बात आई, ठीक तो कहते हैं पापा, यह अतुल जाने किस प्रकृति का आदमी है। जितना ऊपर से सरल और सीधा लगता है, कदाचित् मन से वैसा नहीं......उस दिन कहा था मैंने, अतुलजी, अब आप अपना निर्णय दीजिये। एक बार पापा से कह दीजिये, मुझे प्रस्ताव स्वीकार है। मैं

अब लता का हूँ और लता मेरी है। किन्तु महाशय ने आज तक भी अपना विचार व्यक्त नहीं किया।

अपने मन की उसी ऊहापोह में लता ने चमेली के पेड़ से एक छोटी कली तोड़ ली और बरबस उसे अपने मुलायम हाथों से मसलती हुई बोली—लेकिन जब हजरत ने अभी तक कोई भी जवाब नहीं दिया, तो भला क्यों ! किसलिए यह निर्णय नहीं किया गया। उसने कहा—जब मैंने बार-बार टँकोरा, तो सहज भाव से मुस्करा भर दिया। मेरी बात को हँस कर टाल दिया।

उसी समय लता के मन के विचार विचलित हो गये। वह एकाएक आतुर और व्यग्र बन उठी। परन्तु तभी पड़ोस की एक छोटी बालिका उसके पास आयी और बरबस दुलार भाव में लता की साड़ी को पकड़कर बोली-जीजी !

मानो अज्ञात भाव में लता ने कह दिया—'कुमुद'

कुमुद ने कहा—जीजी, मुझे फूल दो। और वह लता से चिपटने के लिए भी आतुर हो उठी।

किन्तु उसी क्षण अन्य बच्चे भी वहाँ आ गये। वे सब भी लता को घेर कर खड़े हो गये। इतनी देर में लता ने हाथ में ली हुई चमेली की कली मसल दी थी और झटके के साथ फेंक दी। उसी समय याद आई उस राजीव की, जो किसी समय उसके साथ कॉलेज में पढ़ता था। कई मास बाद एकाएक ही वह पिछले दिनों होटल में मिल गया। स्वतः ही लता बोली, वह राजीव मुझे देखते ही खिल गया। वह इतना आतुर बना कि मानो जिन्दगी की पगडण्डी पर मुझको ही खोजता फिर रहा था। कितना सुहावना मौसम था उस दिन ! वासन्ती बयार चल रही थी। होटल का वह शानदार हॉल सजा हुआ था। उस दिन प्रोग्राम भी विशेष था। सुमधुर स्वर में ऑरकेस्ट्रा बज रहा था।

अपने आप लता बोली, उस राजीव को देखते ही, मैंने कहा—'जनाब कहाँ से दिखायी दे गये, राजीव बाबू ! पोशाक से तो लगता है, फौज में चले गये ।' उसने कहा—और मै उसी के पास कुर्सी पर बैठ गयी । यह तो मैंने जाते ही देख लिया कि राजीव उस सन्ध्या के सुहावने प्रहर में एकान्तभाव से शराब के नशे में झूम रहा था । उसकी मेज पर तरह-तरह का सामान रखा था । आमलेट, शामी कवाब, सोडा और शराब । लगा कि वह देर से वहाँ बैठा था । ऐश-ट्रे में सिगरेट के अनेक टोंटे पड़े हुए थे । माचिस और सिगरेट का पैकेट भी रखा था । लेकिन मै यह देखकर चकित थी कि किसी समय का दुबला वह राजीव उस समय कद्दावर जवान बन चुका था । उसका ऊँचा ललाट, चौड़ी छाती । यह मुझे सुगमता से दिखाई दे गया कि उसके कोट के अन्दर कमर पर पिस्तौल भी पड़ी थी ।

उसी समय राजीव ने कहा—'तुम्हें कुछ देर हो गयी लता रानी । अभी अभी एक डान्स यहाँ हो चुका । बैठो, अब दूसरा आइटम सामने आयेगा, और उसने सहसा प्रश्न किया—'बोलो, क्या लोगी, ठंडा या गरम ? यह गिलास उठाने के लिए तो मैं तुमसे नहीं कहूँगा ।' यह कहते ही वह खिलखिला कर हँस पड़ा ।

सुनकर, मैं कुछ विचलित बनी—'भई राजीव बाबू, मैं कॉफी ले लूँगी ।'

'और साथ में क्या ? हाँ, कुछ खाने को ?'

'कुछ नहीं, सच कुछ नहीं ।'

'नहीं, एक आमलेट । और वह बोला—'कैसी अजीब बात है, स्कूल से छूटे, तो छूट ही गये । भूल गयी उस बात को जब पिकनिक में तुम नदी में गोता खा बैठी थी ?'

'ओह, ! बड़ी पुरानी बात याद दिला दी ।' लता ने कहा— 'उस घटना को जब-तब याद करती हूँ तो रोमांचित हो जाती हूँ । तभी

तुम्हारी याद आती है। सच उस समय तुम मुझे नदी से न निकालते तो मै आज क्या तुम्हारे समक्ष इस होटल में बैठी दिखायी देती ?'

उसी समय बैंरा आया और राजीव ने एक कॉफी और आमलेट का आर्डर देने के साथ एक और पैग लाने को कहा। लता की बात सुनकर वह बोला—'देवीजी, वह समय तुम्हारे लिए भयानक था। खैर यह हुई कि तुम नदी के तेज़ बहाव में नहीं पड़ीं। तुम्हें चीखते चिल्लाते देखकर मैं तुरन्त कूद पड़ा था, नदी की उस गहराई में !'

लता ने सहज लज्जा से कहा—'सचमुच, वह बड़ा ही करुण दृश्य था, मेरे लिए ! मैं तब नग्न-प्राय: भी हो चुकी थी।'

राजीव ने अपने स्वर पर ज़ोर दिया—'वे सब नगण्य बातें हैं। विवशता क्षम्य होती है। और सुनाओ क्या करते हैं तुम्हारे पति ? बैरिस्टर हैं या डाक्टर ?' वह बोला—'तुम्हारे पिता तो स्वयं मालदार है। इस शहर के सबसे बड़े, वकील हैं। लगता है, अभी माँ नही बनी हो ! और हाँ, आज अकेली कैसे ! इस सुन्दर प्रोग्राम में पतिदेव को नहीं लायीं।'

लता खिलाखिला पड़ी—'राजीवबाबू, मैं अभी अकेली हूँ। अविवाहित हूँ।' और उसने प्रश्न किया—'आप सुनाइये अपनी बात, कितने बच्चों के बाप बन चुके हैं। यही प्रश्न मेरा है, यहाँ अकेले कैसे ?'

राजीव ने अनुभव किया कि लता की बात घिसीपिटी है। अतएव न वह हँसा, न मुस्कराया। अपितु निरे तटस्थ भाव में बोला—'देवीजी मै न विवाहित हूँ, न विधुर हूँ। यह समझ लीजिये कि बहता पानी हूँ। जिसका बहना ही स्वभाव है। चार साल हो गये हैं मुझे फौज में गये, सौभाग्य की बात है कि अभी अभी समाप्त हुई लड़ाई में मुझे मेजर का पद प्राप्त हो गया।'

कॉफी आ गयी । साथ में आमलेट । जब राजीव एक और नये पैग में सोडा डाल चुका, तो एक और नयी सिगरेट जलाकर बोला—'आश्चर्य है कि तुम अभी अकेली हो । यह जवानी के दिन सूनेपन में बिता रही हो ।' उसने शराब का घूँट भरा और कहा—'मालूम होता है, कोई उपयुक्त साथी नहीं मिला ।' और तभी अपने आप बोला—'तुम्हारे साथ एक अच्छाई है और वह बुराई भी कि तुम्हारे पिता के पास प्रचुर पैसा है। उस सब पर तुम्हारा आधिपत्य है । अतएव, ऊँचाई की ओर ही तुम देख सकती हो, नीचे की ओर नही ।'

लता ने कहा—'नही राजीव बाबू, मैं ऐसा विचार नहीं रखती । परन्तु इतना ज़रूर सोचती हूँ, विवाह एक सुखद राग भी है, रोदन भी । उसमें जहाँ सुख है, तो पीड़ा भी । सचमुच, कभी-कभी तो मैं विवाह के नाम पर काँप जाती हूँ । डरती हूँ, जो कुछ मेरे पास है, तब वह नहीं रहेगा । पराया हो जायगा । कहिये तो कैसा हीन और क्षूद्र व्यापार है, इस नारी का ।'

राजीव ने गिलास का शेष घूँट भी भर लिया । वह घड़ी की तरफ देखकर बोला—'मैं अभी इस विषय में पारंगत नहीं । मेरा किसी से लगाव भी नहीं । एक तुम थीं, तो ऊँचाई अधिक थी तुम्हारी, पकड़ से बाहर थीं । अतएव, तुम्हारी ओर बढ़ने की बात मन में आई भी और बलात् तिरोहित हो गयी, वह मेरे मानस में उमड़ती घुमड़ती रही ।'

एकाएक लता बोल पड़ी—'राजीव बाबू !'

राजीव कुर्सी से उठा—'अच्छा, अब जाऊँगा । समय हो गया । मेरा जहाज़ प्रतीक्षा में होगा । मैं कुछ लेट भी हो गया ।'

लता भी खड़ी हो गयी और व्यस्त बनकर बोली—'तो क्या हम फिर नहीं मिल सकेंगे ?'

'हाँ, क्यों नही । इसी रवीवार को । इसी होटल में । इसी समय ।' और वह तभी लता का मुलायम हाथ अपने हाथ में दबाकर बोला—'लतारानी, सचमुच, मैंने तुम्हें प्यार किया था । मुझे आज भी याद है, मेरी गरीबी पर तरस खाकर तुमने मुझे पढने के लिए अपरोक्ष रूप से कुछ रुपया देना चाहा था । किन्तु तब की तरह, मेरा आज भी यह मत है कि रुपया और रूप धूप-छाँह की तरह आते और जाते है । मैं भावना का पोषक हूँ । जब तुम्हें नदी में से दोनों हाथों पर उठाकर बाहर लाया था, तो वह दृश्य मेरे मानस पर अक्स की तरह छा गया है । तुम्हारा वह नंगा रूप इस ढके रूप से अधिक मोहक और जागरूक था । लगता है, आज भी मैंने तुम्हें नग्न-प्राय: अवस्था में अपनी दोनों बाँहों पर उठा रखा है । यह कहते हुए राजीव अत्यन्त भारी बन गया—'गरीब था न मैं, तो तुम्हारा ध्यान मेरी ओर नहीं गया । तभी मुझे पता चल गया था कि तुम्हारी कोठी में आने वाला युवक वह अतुल तुम्हारा अध्यापक था । वह तुम्हारे मन मे अपनी जगह बना चुका था ।'

बरबस, मानो अज्ञात भाव में लता चीख पड़ी—'वह सभी झूठ है, छलावा है, आपका भ्रम है, राजीव बाबू !'

राजीव कुछ और समीप आ गया—'लताजी, अब मैं फौज में नौकर हूँ । कभी भी मर सकता हूँ । बस, इतना समझ लो, यदा-कदा तुम्हें याद करके सुख पा लेता हूँ । तुम सुखी रहो, जहाँ जाओ, सौभाग्यवती रहो, हृदय से इसकी कामना करता हूँ ।'

व्यग्र और आतुर बनकर लता बोली—'राजीव बाबू अजीब बात है, यह ! मुझे उलझन में डाल दिया है, आपने !' और उसने साँस भर कर कहा—'अच्छा, तो इस रविवार को आप मिलेंगे । जरूर न ?'

राजीव ने कहा—'हाँ, आशा करता हूँ । न आ सका, तो खबर भेज

दूँगा ।' और उसने तभी बैंरा द्वारा लाये बिल का भुगतान कर दिया । फिर उसने घड़ी देखी और विदा लेकर चला गया ।

किन्तु अपने उस लॉन में, बच्चों से घिरी हुई लता ने एकाएक माथे में बल डाले हुए कहा, लेकिन वह राजीव फिर नहीं आ सका । पत्र तो कई आये, परन्तु लगता है, उसे आने का अवकाश नहीं मिला । उसी समय पूर्णतः वह विस्मित बनी और बोल पड़ी—'अरे, आप ? आइये, आइये आप तो इधर का रास्ता ही भूल गये ।'

सरल, सौम्य और सुन्दर वह अतुल मुस्कराता हुआ वहाँ आया और लता के पास आकर खड़ा हो गया ।

———

दो

तभी तब, बच्चे खेलते हुए अपने बंगले की ओर लौट चुके थे। जब अतुल लॉन में पड़ी कुर्सी पर आकर बैठा, तो सहसा उसके मन में बात आई कि आज यह लता अपेक्षाकृत अधिक भली लग रही है। कुछ आतुर भी है। स्वयं उसके लिए भी वह आत्मीय भाव से भरी तन्मय दिखायी देती है। उसी समय लता ने पूछा—'कहिये, क्या लेंगे आप—कॉफी या ठण्डा पेय ?'

अतुल ने कहा—'मैं इस समय कुछ नहीं लूँगा। कचहरी से लौटा, तो माँ ने पेट भर दिया।'

बरबस लता ने कहा—माँ का स्नेह अलभ्य है। दुष्प्राप्य भी है।'

अतुल ने बात सुनी, तो मन में बोला, यह बात भी इस लता के स्वभाव के विरुद्ध है। किन्तु उस समय स्वयं उसके मुँह से माँ के अस्तित्व को स्वीकार करने की बात उसे भली लगी। तभी बोला—'मेरा मत है, माँ के दुलार से अधिक प्यार और अभिन्न भाव इस पुरुष को कहीं अन्यत्र प्राप्त नहीं होता।'

एकाएक लता के मुँह से निकला—'नारी से भी नहीं ! मेरा तात्पर्य है, पत्नी से ! वह भी तो अपना समर्पण करती है।'

इतना सुनते ही, सीधे-स्वभाव अतुल बोला—'पत्नी का दुलार नहीं हो सकता । समर्पण का भाव हो सकता है, परन्तु बहुधा वह सुगमता से प्राप्य नहीं ।' उसे लगा कि लता कुछ कहने को सन्नद्ध दिखायी देती थी । उसकी श्याम रंग की अलकें भी खिली थीं ।

तभी सहसा लता के मुँह से निकला—'आह, आपका विश्लेषण कठोर है, अमानवीय भी ।' वह बोली—'अतुलजी, पत्नी का समर्पण नगण्य नहीं । उसकी आत्मानुभूति भला सर्वमान्य क्यों नहीं ।' निश्चय ही वह अपनी बात पर दृढ़ थी । परन्तु उस बात को सुनकर, अतुल कुछ कड़वे भाव से मुस्कराया—'लताजी, मत-वैभिन्य स्वाभाविक है । मैं कह सकता हूँ, स्वार्थ माँ का भी है, परन्तु पत्नी का स्वार्थ कितना विस्तृत है, कदाचित् वह अभी तुम्हारी दृष्टि से दूर है ।'

लेकिन लता को वह प्रसंग पसन्द नहीं था । सन्ध्या के उस अवसान में उसे बंगले से दूर जाना अधिक प्रिय था । अतएव, वह बोली—'यदि अनुपयुक्त न लगे, तो हम लोग घूमने चलें । आज का दिन सुहावना है । मन करता है, बंगले से बाहर निकला जाय ।'

अतुल बोला—'मुझे तुम्हारे पिताजी से काम था । एक नये मुकद्दमे के सिलसिले में विचार विनिमय करना था ।'

लता कुछ कहती कि तभी उसके पिता लॉन में निकल आये । देखकर अतुल खड़ा हो गया । अतुल को देखते ही उन्होंने कहा—'अतुल जी, भावना और है, जीवन का वास्तविक रूप और । आपने आज जिस औरत के चरित्र का पिष्ठ-पोषण किया, वह सर्वथा कानून के विरुद्ध था । व्यवहार की दृष्टि से भी सर्वमान्य नहीं था । कहिये, यदि आपकी औरत आपको छोड़ दे, तो आप क्या करेंगे ? निश्चय ही आप कानून का सहारा लेंगे । उस औरत को मार नहीं देंगे । परन्तु आपने यह क्या दलील दी कि पुरुष सर्वथा दोषी है । जब कि औरत किसी दूसरे

आदमी की ओर बढ़ चुकी है। कह सकते हो, उसे प्यार करती है। तब आप एक अकेले पुरुष को कैसे दोषी मानते हैं ?'

अतुल ने कहा—'मेरा अब भी यही अभिमत है कि पुरुष हिंसक है। नारी पर ज़ोर-ज़बरदस्ती करता है।'

'न, न, मेरे भाई।', जगजीवन बाबू ने कहा—'औरत समाज की भावना का दुरूपयोग करती है। पुरुष की निर्बलता उसकी सहायक बनती है।'

एकाएक लता ने कहा—'पिताजी, आप यह क्या कहते हैं ? बेचारी नारी को कानून के न्याय की तुला पर क्यों रख रहे हैं ?'

किन्तु जगजीवन बाबू ने पुत्री की बात पर ध्यान नहीं दिया। उन्होंने अतुल बाबू को सम्बोधित किया—'वह औरत चालाक है। दो नावों पर सवार होना चाहती है। पुरुष को मुक्ति-पत्र भी नहीं देना चाहती। चूँकि पुरुष के पास जायदाद है, इसलिए अपने गुज़ारे की बात अदालत के सामने रखती है। सौभाग्य से आप उसे एक भावुक और नये वकील मिले हैं, तो यही बात वह अदालत में आप से कहलाना चाहती है। परन्तु यह विधि-विरुद्ध है।'

अतुल ने आश्वस्त होकर कहा—'हाँ बाबूजी, स्थिति ऐसी ही है।'

जगजीवन बाबू हँसे—'मुझसे मजिस्ट्रेट ने कहा था कि आपके शिष्य सरल हैं। मुकद्दमे की वास्तविकता से भी दूर हैं। वह बोले—'आजकल मजिस्ट्रेट बड़े चालाक होते हैं। मुकद्दमे के साथ वे वकील भी देखते हैं। मुद्दई और मुद्दालय भी। तो भाई, उन दोनों का फैसला करा दो। ऐसा न हो, तो औरत से त्याग-पत्र दिलवा दो। यह नहीं हो सकेगा कि औरत एक आदमी की पत्नी भी बनी रहे और दूसरे आदमी से भी सम्बन्ध रखती रहे। यह कानून का उल्लंघन तो है ही, सामाजिक रूप से उसका यह कर्म व्यभिचार भी है।'

लता ने कहा—'अच्छा पापा, हम घूम आयें। आप तो यहाँ भी कचहरी की बात ले बैठे। कितना रूखा और विवादास्पद विषय है, यह आपका।, कहीं औरत-मर्द का झगड़ा, कहीं जायदाद का झगड़ा। झगड़ा ही झगड़ा है, आप की उस दुनिया में।'

बाबू जगजीवन राम हँसे—'अरी, बिटिया, उस झगड़े से ही पैसा आता है। इस दुनिया के लिए अमन चैन के साथ झगड़ा भी चाहिए। जैसे हिंसा के साथ अहिंसा।' वह बोले—'हाँ, तुम लोग घूम आओ। गाड़ी खड़ी है, नदी की तरफ चले जाओ।'

उसी समय लता ने अतुल की ओर देखा और कहा—'अब तो चलिये आप! मैं समझती हूँ कि आप की समस्या हल हो गयी होगी।'

बाबू जगजीवन राम ने कहा—'सरल बात को उलझटदार नहीं बनाना चाहिए। अपने स्थान पर दोनों सरल हैं और दोनों ही निर्मम। परिस्थिति की बात अवश्य ध्यान में रखनी चाहिए।'

अतुल ने कहा—'वह औरत पति को त्याग-पत्र नहीं देना चाहती। हो सकता है, ऐसा समाज की बदनामी से नहीं करना चाहती। और यह तो स्पष्ट है कि उसका पति यह सिद्ध नहीं कर पाया कि उस औरत का किसी दूसरे आदमी से सम्बन्ध है।'

बाबू जगजीवन राम ने कहा—'तब तो मैं कहूँगा कि वह औरत कुटिल है। किसी बड़े षडयन्त्र की भागीदार है। यह भी हो सकता है कि वह अपने पति को ज़हर खिला दे। उसका नाम मिटा देने का प्रयत्न करे।' वह बोले—'मैं पूछता हूँ वह पति के साथ क्यों नहीं रहती? स्पष्ट है, वह प्रायः कहीं अन्यत्र रहती है।'

अतुल ने विस्मित बनकर कहा—'क्या यह सम्भव है? ऐसा भी कर सकती है, वह औरत? वह केवल माँ-बाप के पास जाती है।'

बाबू जगजीवन राम विषाद भाव से हँसे 'भैया, औरत सभी कुछ कर सकती है। यह इस धरती का मायावी प्राणी है।' वह बोले—'कोई आदमी सरलता से अपनी पत्नी को दुराचारिणी नहीं बताता। लेकिन जब अदालत में ऐसा बयान देता है, तो समझ लो, सत्य ही है।'

स्पष्ट था कि लता को अपने पिता की यह बात भी पसन्द नहीं आई। लेकिन उसने अतुल की ओर देख कर कहा— 'आप आइये, मैं गाड़ी में बैठी हूँ।'

फलस्वरूप, जब वह गाड़ी की तरफ चली, तो तभी, अतुल ने बाबू जगजीवन राम से कहा—'समस्या जटिल है। संयोग की बात है कि मैं औरत का वकील हूँ। अपने कर्त्तव्य की बात सोचता हूँ।'

बाबू जगजीवन राम बोले—'नहीं, नहीं, बिलकुल सरल है यह समस्या। औरत से कहो कि वह समझौता करले। अन्यथा वह व्यक्ति मजिस्ट्रेट को दरख्वास्त दे सकता है। यदि वह चाहे तो ऐसे फोटो भी अदालत में पेश कर सकता है कि जिन में वह औरत अन्य व्यक्ति के साथ बैठी हो, बात करने में तन्मय हो।' वह बोले—'अब आप जाइये। लता प्रतीक्षा में होगी। बड़ी गुस्सैल है लड़की, देर होने पर गाड़ी से उतर आयेगी।'

अतुल उस ओर बढ़ गया। वह गाड़ी में जा बैठा। रास्ते में ही, उसने लता से कहा—'लगता है, तुम्हें नारी का निर्बल पक्ष स्वीकार करने योग्य नहीं लगता। परन्तु मैंने इस मुकद्दमे को केवल इसीलिए अपने हाथ में लिया है कि समझूँ, नारी कहाँ निर्बल है, कहाँ बलवान है। अन्ततः यह स्पष्ट है, पुरुष के समान नारी का मनःलोक भी स्वस्थ और सफल नहीं दिखायी देता। यदि पुरुष बर्बर है तो नारी का पक्ष भी सरल नहीं लगता।'

उसी समय कठिनाई से लता बोली—'अभी आप के दिमाग में अदालत है। मुकद्दमा है। परन्तु श्रीमान्, मैं न तो आपकी मुअक्किल हूँ और न जीवन में ऐसी आशा ही करती हूँ, कि किसी पुरुष पर मुकद्दमा चलाऊँगी। देखती हूँ यदि ऐसी स्थिति भी आई तो मैं जीत नहीं सकती। जब एक वकील को पति बनाने की बात सोचती हूँ, तो भला ऐसी स्थिति को किस प्रकार अपने अनुरूप बना सकूँगी।'

अतुल ने लता द्वारा व्यक्त किये वकील पति की बात पर ध्यान नहीं दिया। वह केवल अपनी बात लेकर बोला—'तुम तो सबल हो, लता रानी ! धनिक और सम्पन्न पिता की पुत्री हो। तुम्हारे पिता भी वकील हैं। जानती तो हो, अदालत में पैसा चलता है। वहाँ पर राई को पहाड़ बनाना सरल है।'

लता ने बात सुनी और चुप रह गयी। उसी समय नदी का किनारा आया और वह गाड़ी से नीचे उतर कर खड़ी हो गयी। जब दोनों नदी तट की ओर चले, तो तभी रास्ते में लता बोली—'यह वकालत का पेशा पैसा भले ही लाता हो, परन्तु निंद्य है। मेरा अपना व्यक्तिगत मत है, समाज के मस्तिष्क में जितनी खिड़कियाँ हैं जहाँ से गन्दी और अच्छी प्राण वायु मिलती है, उन्हीं में से एक यह प्रणाली है। नितान्त गन्दी और दूषित है। पापा ने ऐसे अनेक मुकद्दमे लड़े हैं कि जिनमें अपराधी साफ बच गया, निरपराधी सजा पा गया।'

अतुल हँस दिया—'और फिर भी तुम अपने पापा के रुपये का उपयोग करती हो। उन्हें सफल वकील मानती हो। आखिर क्यों ?'

एकाएक खिन्न बनकर लता बोली—'आप मुझ से प्रश्न क्यों करते हैं।' उसने कहा—'आइये, वह नाव खाली है। उसमें बैठेंगे। नदी में घूमेंगे।'

अतुल बोला—'तो क्या हमें देर तक रुकना होगा ? मुझे जल्दी लौटना है ।'

लता ने चकित बनकर कहा 'हाँ-हाँ, क्यों नहीं, आप कामकाजी आदमी हैं न ! वकील हैं । स्याह को सफेद करने वाले ।'

'अजी, लता देवी ! मुंशी आयेगा । वह कल के मुकद्दमों को बतायेगा कि किस में मुझे क्या करना पड़ेगा ।' वह बोला—'इस दुनिया में यही सब होता है । कहीं सफेद का स्याह करना पड़ता है ।'

लता हँसी—'तो मैं समझी, अब श्रीमानजी पापा के चक्कर में पडे हैं । धनवान बनना चाहते हैं ।'

अतुल ने कहा—'हाँ, यदि धनवान न भी बना, जीवन-यापन तो करना पड़ेगा । अब यह ज़िन्दगी है, तो टेढ़ी-मेढ़ी पगडण्डी पर चलते हुए मंजिले मकसूद पर जाना होगा ।'

लता ने अपनी वे सुरमई आँखें तरेरीं—'ज़रा सुनूँ तो, क्या है, आपकी मंज़िले मकसूद ।' वह बोली—'मैं तो आज तक यही सुनती आई हूँ कि आदमी धरती पर पैदा होता है । रुपया कमाता है । उससे मौज लेता है । अन्त में मर जाता है । बस, यही है, आपका चिर लक्ष्य !'

मानो मस्त बन कर अतुल बोला—'हाँ, हाँ, यह भी ।' तभी उसने कुछ आतुर बनकर कहा—'लेकिन तुम इसे इतने हल्के रूप में क्यों लेती हो ! यह तो सब माध्यम है, उस लक्ष्य की ओर बढ़ने का कि जिसे यह आदमी चिर-पुरातन से पाता और खोजता आया है ।'

दोनों नाव में जा बैठे । नाव चल पड़ी । लेकिन लता के मन में बात घुमड़ रही थी, अतएव बोली—'तो फिर क्या,—मोक्ष ! इस जीवन पर विराम चिन्ह !' वह हँस पड़ी—'अजी, अतुल साहब, यह भी आदमी का एक बड़ा फ्रॉड है,—छलावा है—और दम्भ ! उसने

कहा—'आदमी जीवन पाकर मज़े लेना चाहता है और फिर मरने के बाद मोक्ष पाने की कल्पना करता है। सुनती हूँ, स्वर्ग में कोई इन्द्र महाराज हैं, वे बड़े पहुँचे फकीर हैं, जैसे निखालिस अवधूत। उनके दरबार में किन्नरियाँ और अप्सराएँ नृत्य करती हैं। उन्ही अप्सराओं में से कोई-एक पाने की बात इस धरती के आदमी भी सोचते हैं। कहिये तो, कितना चालाक है यह आदमी ? धरती के वैभव भी पाना चाहता है और स्वर्ग के भी। इस प्रकार बेचारी इस औरत को न धरती पर चैन मिलता है, न उस स्वर्ग लोक में ! दोनों जगह आपकी नस्ल के देवता इसका हलाक़ करते हैं।'

'ओह, लताजी !' एकाएक अतुल ने नदी के गहरे पानी पर आँखें तैराते हुए कहा—'तुम कठिन हो, गहरी हो।'

तुरन्त ही, लता बोली—'नहीं जनाब, मैं नहीं, गहरे आप हैं। सोच लिया न, औरत का किनारा आदमी है। वही उसकी सीमा है। तो खूब छकाता है। तरसाता है। ऐसे रास्ता काटता है कि पकड़ा नहीं जाता। औरत के हाथ नहीं आता।'

अतुल हँस दिया—'क्या कोई पहेली बुझा रही हो ?'

तब एकाएक ही लता भारी बन गई—'कहेंगे आप, आज कितने दिन में आये हैं, मेरे घर। वह भी पापा के पास काम से आये। कभी सोचा, मेरे मन में क्या कुछ घुमड़ रहा है। वह मुझे किस तरह बेचैन बना रहा है।' उसने अपने स्वर पर ज़ोर दिया—'मित्र अतुल, यह तो मैं जानती हूँ कि आप पुरुष हैं। परन्तु कभी सोचा कि नारी का भी कोई अधिकार है ? उसके मन में भी भावना का ज्वार-भाटा उठ सकता है ?' यह कहते हुए लता का स्वर एकाएक अवरुद्ध हो आया।

उस समय अतुल स्वयं भारी बन गया। नदी के वक्ष पर नाव तैरी जा रही थी। मल्लाह का लड़का दूर बैठा हुआ चप्पू चला रहा था। नगर का भव्य दृश्य आँखों के समक्ष था। कभी-कभी नदी के पानी में कोई मछली उछलती और फिर पानी की गहराई में खो जाती। अतुल की आँखों ने देखा कि अनेक बार कछुवे ने ऊपर आकर अपना मुँह निकाला और शूँ करने के साथ लोप हो गया। परन्तु स्थिति यह थी कि अतुल ने उस समय कुछ भी नहीं देखा। न नगर का वह विहंगम दृश्य देखा, न जल के वे जीव-जन्तु। वह बलात् लता की बात पर टिक गया। वह सोच नहीं पा रहा था कि लता से क्या कहे। क्या बार-बार अपनी बात की पुनरावृत्ति करे ! यह सत्य था कि लता अब अधिक आतुर थी। हो सकता है, उसे माता-पिता की ओर से प्रेरणा मिली हो कि वह अतुल को चुन ले। क्योंकि वह सुप्राप्य था। लता के पिता द्वारा आभारित बना था। किन्तु अतुल की यह भी कठिनाई थी कि वह उस यौवनमयी, प्रेरणामयी लता को यह बताने में असमर्थ था कि उन दोनों का सम्बन्ध उपयुक्त नहीं। स्वयं लता दाम्पत्य जीवन को जिस दृष्टि से देखती है, उससे अतुल सहमत नहीं। यद्यपि वह शिक्षित है, भावुक है, परन्तु पुरुष और नारी का सम्बन्ध जिन विचारों पर आधारित है, लता की दृष्टि में वे रूप मान्य नहीं। अतएव जब लता ने अपनी बात कही, तो बलात् अतुल चंचल बन गया और उसकी तरफ अपना मुँह करके बोला—'लताजी, मेरी अपनी कुछ विवशताएँ हैं। देखती हो, अभी अब मैंने वकालत का काम आरम्भ किया है। काम भले ही कम हो, परन्तु उसका उत्तरदायित्व मुझे समझना है। सचमुच, मैं आजकल कहीं नहीं जाता। इधर मेरी भाभी अस्वस्थ है। उसकी परिचर्या में मेरा अधिक समय लगता है।'

मानो एकाएक झुंझलाकर लता बोली—'तो यह कहिये, इन सभी कामों में, उत्तरदायित्वों में मेरा कहीं स्थान नहीं। आपका मेरे प्रति

कोई अनुराग नहीं। यहाँ आग लगी है, मन झुलसा जा रहा है और एक आप हैं कि जिन्हें उस आग की तपन का तनिक भी आभास नही।'

अतुल ने अपना गरम हाथ लता के ठण्डे हाथ पर रखा—'ऐसा मत कहो, लतारानी! मुझे ध्यान है। सचमुच, मुझे प्रायः उसका आभास मिलता है।'

और तभी उसने नाव को वापस चलने के लिए कह दिया। वह किनारे की तरफ झुक गया।

तीन

लता को बंगले पर छोड़कर जब अतुल अपने घर पहुँचा, तो उसे यह देखकर चकित रहना पड़ा कि उसकी मां को सन्ध्या समय से बुखार था। उस पर कई कपड़े पड़े थे और जाड़े से उसका शरीर कांप रहा था। किन्तु मां को एकाएक अस्वस्थ देखकर अतुल को जितना दु:ख हुआ, उससे अधिक विस्मय और कोलाहल का भाव भी उसके मन:लोक में उमड़ आया। उसने देखा कि पड़ोस की चिर-परिचित स्नेहमयी और यौवनमयी राधा उसकी माँ के पास बैठी थी। वह मां का सिर दबा रही थी। जब अतुल मां के पास आकर बैठा, तो तभी उसे मां के द्वारा पता चला कि जब उसने उल्टी की तो इस राधा ने साफ कर दी। यह सुन पाते ही, अतुल ने राधा की ओर देखा। परन्तु उस समय स्वयं राधा का सिर झुका था। वैसे भी वह स्वभाव की इतनी लाजभरी संकोची थी कि अतुल के समक्ष न तो ठीक से बोल पाती, न मुँह से कुछ कह पाती थी। अतएव उस समय भी, उसने अपना सिर नहीं उठाया। मुँह से भी कुछ नहीं कहा।

लेकिन जब अतुल ने माँ से उल्टी करने की बात सुनी, तो वह तुरन्त बोला—'मां, यह काम इस राधा का नहीं, मेरा था। मुझे करना

था ।' और तब उसे यह अच्छा नहीं लगा कि वह क्यों लता के साथ घूमने चला गया । यहाँ घर में मां को बुखार है और वह नाव की सैर करता फिरा । फिर वहाँ से होटल गया । यह भी संयोग की बात थी कि उस दिन उस होटल के मालिक ने अपने ग्राहकों के लिए विशेष रूप से नृत्य और गायन का प्रोग्राम रखा था । यही कारण था कि वह रात में देर से घर पहुँचा । उस समय बाजार भी बन्द हो चुका था । डॉक्टर का मिलना भी सुगम नहीं था ।

किन्तु अतुल को व्यस्त तथा चिन्तित बना देखकर माँ बोली—'बेटा, बुखार है । मौसमी है । आज आया है । सुबह तक उतर जायगा ।' उसने कहा—'देख, राधा ने तेरे लिए खाना बना लिया है, तू खा ले । जा, कपडे उतार । यह राधा तेरे कमरे में ही खाना परोस कर दे आयेगी ।'

इतना सुनते ही अतुल आतुर बन गया । उसने तब भी राधा की ओर देखते हुए कहा—'इन्हें क्यों कष्ट दिया, माँ !' तभी उसके मन में बात आयी कि कह दे कि वह जगजीवन बाबू की पुत्री के साथ घूमने गया था । नाव में नदी की सैर की थी, और फिर नगर के सबसे बड़े, होटल में पहुँच गया । वहाँ देर तक बैठना था, तो कुछ खाना भी था । लता ने बहुत-सा सामान मँगा लिया । परन्तु मुँह में आई बात को अतुल रोक गया । निश्चय ही, उसने सहज-स्वभाव से कल्पना की कि इतनी बात का माँ के मन पर तो विपरीत प्रभाव पड़ेगा ही, इस राधा को भी सुखकर नहीं लगेगा । अतएव, वह खड़ा हो गया और कमरे की ओर जाता हुआ बोला—'माँ, इस राधारानी को कष्ट मत दिया करो । मुझे तो इस समय खाने की इच्छा भी कम है । तुमने व्यर्थ ही खटराग कराया । मैं कुछ खा आया था ।'

लेकिन जब अतुल अपने कमरे में पहुँच गया और कपड़े, बदल कर निरुद्देश्य भाव से कमरे में खिड़की के पास जा खड़ा हुआ तो तभी,

राधा खाना लेकर वहाँ पहुँची। उसने अतुल को जब दूसरी तरफ मुँह किये खड़ा पाया, तो अत्यन्त मधुर स्वर में बोली—'खाना कहाँ खाइयेगा! मेज़ पर ?'

सुनते ही, अतुल ने राधा की ओर देखा। बिजली के प्रकाश में उस समय राधा का वह भोला-भाला चेहरा, वह गोरा रंग, उसकी बड़ी-बड़ी आँखें और गुलाब की तरह खिला हुआ उसका यौवन मानो बरबस ही निमन्त्रित कर रहे थे, उस अतुल को। संयोग से उस रात मे राधा ने लाल किनारी की जिस साड़ी को पहन रखा था, वह भी उसके रंग-रूप पर फिट बैठ रही थी। यह देखते ही अतुल एकाएक खो गया। क्षण भर में ही उसने कल्पना की और तुलना करता हुआ अपने-आप बोला, वह लता पासंग भी नहीं, इस राधा के सामने!

लेकिन जब राधा ने अतुल को एकटक अपनी ओर देखते पाया, तो वह और अधिक सिकुड़ गयी। उसके पैर काँपने लगे। हाथों में खाने का थाल था, अतएव वे भी लरजने लगे। इसी से, वह एकाएक आतुर बनकर बोली—'आप मेज़ पर खायेंगे, या पलंग पर ?'

अतुल ने कहा—'मेज पर रख दो।'

परन्तु जब राधा उस थाल को मेज़ पर रखकर जल्दी से लौट जाना चाहती थी तो तभी, अतुल ने उसकी पीठ पर लटकी सिर के बालों की लम्बी लटों को देखते हुए कहा—'राधारानी, एक बात सुनोगी ?'

कमरे से जाती-जाती राधा रुक गयी। वह द्वार से टिक गयी।

अतुल ने कहा—'तुम इस घर के लिए बहुत कष्ट उठाती हो, राधा। सोच नहीं पाता, मैं कल्पना भी नहीं कर सकता कि तुम कितनी स्नेहमयी हो। सचमुच, निरी भावनामयी!'

तभी एकाएक राधा ने कहा—'देखिये, खाना देर का बना है।

अब हवा लगेगी तो और ठण्डा हो जायेगा। देख लीजिये, साग में नमक तो कम नहीं।'

लेकिन अतुल ने तब भी खाने की ओर नहीं देखा। वह स्वयं अतिशय भावना और अनुभूति से भर गया। अपने मन की उसी अवस्था को लेकर बोला—'राधारानी, यह घर तुम्हारा ऋणि है। मै प्रायः सोचता हूँ कि तुम्हारे लिए किस रूप में काम आऊँ। कैसे उपयुक्त बनूँ! जानती तो हो, इस दुनिया में पारस्परिक व्यवहार चलता है। बोलो, तुम्हारा इस विषय में क्या मत बना है?'

एकाएक जैसे किसी स्वप्न से छूटकर राधा ने कहा—'जी!' वह बोली—'मैं कुछ समझी नहीं। मांजी की सेवा करना मैं अपना कर्त्तव्य मानती हूँ।'

अतुल ने भोजन शुरू कर दिया था। अपनी बात कहने के साथ राधा भी वहाँ से हट गयी। वह सीधी रसोई घर में गयी और वहाँ से खाना लेकर फिर लौट आयी। लेकिन जब अतुल की थाली में खाना रखने लगी, तो वह तुरन्त ही बोला—'न, न, बहुत हो गया। अब नहीं खा सकूँगा।'

इतना सुन, राधा कुछ सहम गयी। वह धीर-भाव से बोली—'क्या साग ठीक नहीं बना?' और तभी उसने अपने आप कहा—'देखिये, मेरे घर में इतनी सम्पन्नता नहीं। इसलिए सलीकेदार व्यंजन बनाने या सीखने का मुझे अवसर नहीं मिला। मांजी ने कहा था कि आप मिर्च नहीं खाते। सो लगता है कि मेरे हाथ की सब्जी रुचिकर नहीं बनी!'

अतुल ने खाना रोक दिया। वह राधा की ओर देख कर बोला—'तुम भ्रम में हो, राधारानी! मुझे क्या अमीर समझा है?' और तभी उसे अमीर गरीब की बात स्वतः ही किरकिरी लगी। उसने राधा की मनोदशा देखकर कहा—'राधा, जहाँ भावना है, अनुभूति है, वहाँ

पैसे का प्रश्न नहीं। सचमुच, तुम्हारे हाथ का यह खाना मुझे भला लगा। परन्तु आज भूख नहीं। कहा न, बाहर कुछ खा लिया था।'

राधा ने कहा—'मांजी को भी शिकायत है कि ग्राप खाना कम खाते हैं। भला जब आदमी शऊर से भोजन नहीं करेगा, तो स्वस्थ कैसे होगा?'

अतुल ने निरे आलोड़ के स्वर में कहा—'यह तुम कहती हो, राधा! माँ ने भी ऐसा कई बार कहा।' वह बोला—'मैं समझता तो हूँ कि हमारे यहाँ बालपन से ही लड़कियाँ ममत्व का पाठ पढ़ती हैं। ठीक भी है, कल जब तुम किसी दूसरे घर जाओगी, तो इसी पाठ का उद्घोष करोगी।'

तभी एकाएक सहमे भाव में राधा ने कहा—'जी, ग्राप मुझे कहीं भेजने की बात कहते हैं?'

अतुल ने फिर अपनी बात पर बल दिया—'हाँ, राधा! तुम अपनी वृद्धा माँ के पास कब तक रहोगी? एक-न-एक दिन माँ-बाप के घर को छोड़ जाओगी।' अतुल ने इतना कहा और तभी वह सहसा अचम्भित रहा। उसका मानस डोल गया। उसने देखा कि बात सुनने के साथ, बरबस ही राधा की वे सुन्दर आँखें ग्राँसुओं से भर आई थीं। विस्मय भाव से, यह देखते ही ग्रतुल बोला—'राधा, तुम रो रही हो?'

तो इतना सुनते ही राधा मुँह से तो नहीं बोल सकी, वह आँचल में मुँह छुपा कर फफक पड़ी। वह उसी ग्रवस्था में चीख उठी—'मैं कहीं नहीं जाऊँगी, बाबू! सच, कहीं नहीं!'

यह देख, अतुल खाने से खड़ा हो गया। वह राधा के ठीक सामने खड़ा होकर बोला—'आखिर बात क्या है, राधारानी? तुम रोयी क्यों? क्या विवाह की बात पर?' और उसने कहा—'मुझे दुःख है राधा, तुम्हारे

मर्मस्थल को छू दिया। ज़रूर तुम्हारे मानस में कहीं सूजा हुआ फोड़ा है, मेरे तनिक से आघात से वह दु:ख गया।'

तभी राधा ने अपनी वेदना से भरी आँखें ऊपर उठायीं और कहा—'बाबू, मैं जन्म की दुखिया हूँ। देखती हूँ आज भी उसी पीड़ा से भरी हूँ। लड़की जात हूँ न, तो कही भी पटकी जाऊँगी। गाय की बछिया के समान किसी न-किसी खूँटे से बँध जाऊँगी !'

यह सुनकर अतुल अनायास मर्माहत हो गया। वह स्वयं वेदना के बोझ से दब गया। उसी अवस्था में वह कुछ कहना चाहता था परन्तु नही कह सका। लेकिन जब राधा ने खाने के थाल की ओर देखा और आधा खाना बचा हुआ पाया, तो वह बोली—'आपको खाना नहीं रुचा। मेरे हाथ का पसन्द नहीं आया।'

लेकिन इतनी बात पर ही अतुल आकुल बन गया। उसने कहा—'देखो राधा, तुम समझती होगी कि मै वकील का पेशा करता हूँ तो बाल की खाल निकालना सीख गया। लेकिन तुम समझ लो, मैं उस पेशे से घृणा करता हूँ। अनिच्छापूर्वक वह काम करने लगा हूँ।'

राधा ने खाने का थाल उठा लिया था। जब अतुल ने बात कही, तो वह रुक गयी और बोली—''मैं आपके समान तो पढ़ी लिखी हूँ नहीं, परन्तु इतना जानती हूँ, मन के विरुद्ध कोई काम करना अपने साथ अन्याय है। लोग इसे पाप भी कहते हैं। यदि मैं इसे अनैतिक कहूँ तो अभद्र नहीं होगा।'

अतुल सहज भाव से मुस्कराया—'हाँ, राधा ! तुम्हारा कहना ही ठीक है। यह बात सभी पर लागू है। कदाचित् तुम पर भी।'

राधा ने अपने स्वर पर ज़ोर दिया—'देखिये, मैं लड़की की जात हूँ। यदि तनिक अभद्र और अशुभ बनी, तो कदाचित् आप पहले व्यक्ति होंगे, जो मुझे इस घर के द्वार पर नहीं चढ़ने देंगे।'

अतुल हँस दिया—'राधा, यह घर तुम्हारा है।' वह बोला 'भला मेरा क्या है। माँ है, तो यह घर खुला है। जिस दिन वह जायेगी, तो इस घर की शोभा भी उसके साथ तिरोहित होती दिखायी देगी।'

तभी राधा ने दूसरी ओर देखते हुए सहज भाव में कहा—'आप माताजी को परेशान करते हैं। आप विवाह क्यों नहीं कर लेते ? सुनती हूँ, वह बाबू जगजीवनराम की पुत्री लता.........'

जल्दी से, जैसे आतुर बनकर अतुल बोला—'ओह यह मेरे लिए बड़ी विषम समस्या है, राधारानी ! लगता है, विवाह करना भी आसान नहीं।' उसने कहा—'अभी-अब तुमने अपनी बात कही, नारी की विवशता भी व्यक्त की। परन्तु मुझे तो लगता है, यह विषमता दोनों की है। दोनों को परेशान करती है। पुरुष के रूप में मुझे भी साँपन की तरह डराती है।'

सहसा, सरल भाव से राधा मुस्करायी। वह तनिक हँस दी—'तब तो आप लड़कियों की बराबरी भी करना चाहते हैं। उनसे भी गये-बीते हैं।'

तुरन्त ही अतुल जोर से बोला—'बेशक ! स्थिति यही है।' उसने कहा—'आज मेरे पास इसी प्रकार का एक मुकद्दमा था। औरत अपने पति को धोखा दे रही थी। पुरुष की कठिनाई यह कि वह दुश्चरित्र औरत पति को छोड़ने का नाम नहीं लेती थी।'

राधा ने कहा—'औरत निर्दोष नहीं। सरल और सुसभ्य नहीं।'

अतुल ने कहा—'फिर भी वह नारी है। सम्मान की पात्र है। वह बोला—'मैं चाहता हूँ, तुम्हारा विवाह जल्दी सम्पन्न हो। अम्मा के समान मेरी भी आकांक्षा है कि तुम्हें ऐसी वस्तु भेंट की जाय, जो

स्मृति रखने के लिए स्थायी हो। तुम अपनी रुचि बताओगी, तो मुझे प्रसन्नता होगी।'

किन्तु राधा जैसे फिर खो गयी। अज्ञात बन गयी। दरवाज़े के बाहर काला आसमान दिखायी देता था। वह तारों से भरा था। जब अतुल ने अपनी बात कही तो राधा का मुँह उसी ओर उठा था। यही देखकर अतुल ने उसे फिर टंकोरा—'क्या सोच रही हो, राधा ?'

राधा ने बरबस मुँह फिराकर कहा—'जी, कुछ नहीं।'

अतुल बोला—'जाने तुम क्या सोचती हो ? क्या कुछ अपने मन में लिये रहती हो ?'

यह सुनते ही राधा ने फिर अपना मुँह ऊपर उठाया। तभी उस ओर देखकर अतुल ने स्वर पर ज़ोर, दिया—'पागल हो गयी हो राधा। अब भी रो रही हो।'

किन्तु तब राधा ने कुछ कहा नहीं। उसने अपने पैर उठाये और रसोई घर की ओर चल पड़ी। उसके जाते ही अतुल ने अपने दोनों हाथ सिर के बालों में दे लिये और अनायास इस प्रकार तारों भरे आकाश की ओर देखने लगा कि मानो उसके समान वह आकाश भी गल रहा था। उसकी छाती पर छोटे-छोटे पतंगे चटक रहे थे और नभ-खण्ड धू-धू करके जला जा रहा था।

मन की उस अवस्था में ही अतुल बिस्तर पर पड़ गया। निःसंदेह वह अशान्त था, उन्मन और दुःखी था। यद्यपि उस रात में उसे कुछ काम करना था। एक मुकद्दमे की फाइल मेज़ पर रखी थी, परन्तु उस ओर उसका ध्यान नहीं गया। उसके मन में केवल एक ही बात थी। वह उमड़-घुमड़ रही थी। बादलों के समान गर्जन कर रही थी। और वह बार-बार करवट बदलते हुए कह रहा था, ज़रूर, इस राधा के मन में कोई बात है। कोई सूजा हुआ फोड़ा है, वह मुझसे दुःख गया। कसक गया।

संयोग की बात कि उसी समय राधा उधर आई। इस बार उसके हाथ में दूध का गिलास था। अतुल को लक्ष्य करके उसने कहा—'दूध लीजिये।'

लेकिन अतुल चुप। जैसे अज्ञात !

राधा ने फिर स्वर पर ज़ोर दिया—'दूध अभी लेंगे या देर में ?'

बलात् अतुल ने उस ओर देखा। तभी राधा ने दूध का गिलास पास रखी तिपाई पर रख दिया। जाने किस भावना से भर कर उसने अपना आँचल आगे बढ़ाया और अतुल की भीगी आँखों पर रखते हुए कहा—'यह काम मेरा है, आपका नहीं ! रोना तो मेरे भाग्य में लिखा है।'

लेकिन उसी समय अतुल ने राधा का हाथ पकड़ लिया और कहा—'तुम बताओ मुझे, कैसे रोना आया।'

किन्तु राधा ने व्यस्त बनकर अपना हाथ छुड़ा लिया और तुरन्त ही वहाँ से लौटते हुए कह दिया—'यह मेरा विषय है, आपका नहीं। आपको कुछ कह कर उलझन में डालना मेरा अभिप्राय नहीं।'

चार

अतुल के पड़ोस में जहाँ ऊँचे-ऊँचे मकान और सम्पन्न लोगों का निवास था, वहीं पर किसी समय राधा के पिता बाबू देवकीनन्दन आकर बसे थे। कहने को व्यवसायी थे, परन्तु अपना अधिकांश समय सामाजिक कार्यों में लगा देते। वे स्वभाव के सरल और उदार थे। यह संयोग की बात थी कि बाबू देवकीनन्दन और अतुल के पिता में जब एक बार मिलना-बोलना आरम्भ हुआ, तो वह उत्तरोत्तर बढ़ता गया। जीवनोत्तर चला। जब पुरुषों में मैत्रीपूर्ण व्यवहार हुआ, तो वह स्त्रियों में भी शुरू हो गया। फलस्वरूप, राधा की माँ और अतुल-बाबू की माँ में भी उस सम्बन्ध का निर्वाह अबाध गति से होता गया। किन्तु दैवयोग की बात थी, राधा के भाग्य की बात कि उसके पिता का अल्प-काल में ही देहावसान हो गया। पति के जाने पर राधा की माँ का आधार छिन गया। यह भी दुर्विपाक था कि उस घर में लड़की थीं, कोई लड़का नहीं था।

अतुल बाबू के पिता एक सम्भ्रान्त नागरिक थे। उनका समाज पर प्रभाव था। जब बाबू देवकीनन्दन का देहावसान हुआ और उस घर में जीविका-निर्वाह का प्रश्न खड़ा हो गया, तो तब, राधा की माँ

को नगर की प्राथमिक पाठशाला में अध्यापिका का कार्य मिल गया। उस अवसर पर अतुल के पिता ने कुछ आर्थिक सहयोग भी प्रदान किया। इस प्रकार आये दिन उस घर से कुछ-न-कुछ राधा की माँ को दिया जाता रहा। तभी से अतुल और राधा में सम्पर्क स्थापित हुआ। यद्यपि राधा बचपन से स्वभाव की शर्मीली और लजीली थी, परन्तु इतना अधिकार उसने सहज ही प्राप्त कर लिया कि अतुल के कमरे मे जा पाती और उसकी किताबों को उलट-पुलट देती। यद्यपि कभी-कभी अतुल को राधा का वह कार्य पसन्द नहीं आता था. परन्तु माँ सदा ही उससे कह देती—'तू राधा से क्यों नहीं कह देता ? मैं उससे कुछ नही कहूँगी। बड़ा कोमल दिल है उसका, कुछ कहूँगी तो आँखों से पानी गिराने लगेगी।'

लेकिन समय के बहते प्रवाह में स्वयं अतुल के पिता भी प्रवाहित हो गये, तो उस घर की भी अवस्था बदल गई। अतुल उस समय हाई स्कूल से कालिज में पहुँचा था। राधा ने भी अपने स्कूल से पाँचवीं कक्षा का इम्तहान पास किया था। अब वह केवल बच्ची नहीं रह गयी थी। उसकी माँ अध्यापकी करती और अपनी बच्ची को पढ़ाती। जब अतुल ने बी० ए० करके लॉ की क्लास में प्रवेश किया, तो तब राधा ने भी दसवीं पास कर ली। उसी वर्ष उसने टीचर्स की ट्रेनिंग का फार्म भरा। कदाचित् उस रास्ते पर जाने का उसका अभिप्राय केवल यही था कि उसकी माँ दिन-दिन अशक्त होती जा रही थी। वृद्धा भी हो चली थी। उसकी माँ का एक यह भी मत था कि यदि राधा ट्रेनिंग कर लेगी, किसी स्कूल में अध्यापिका के काम पर लग जायेगी, तो तब, सुगमता से उसका विवाह हो सकेगा। उस अवस्था में लड़के वालों की तरफ से दहेज की माँग नहीं होगी। क्योंकि उस निरावलम्ब नारी के पास केवल लड़की थी, दहेज के नाम देने को फूटी कौड़ी नहीं थी।

फलस्वरूप, जब अतुल लॉ की परीक्षा पास करके अदालत में जाने लगा, तो तभी-तब राधा ने ट्रेनिंग पास कर ली और वह नगर की प्राइमरी पाठशाला में अध्यापिका लग गयी। उसी समय माँ ने अपना काम छोड़ दिया। वह थक कर बैठ गयी। चूँकि राधा की माँ को साँस का भी रोग था, इसलिए घर से दूर जाकर बच्चों के साथ माथा-पच्ची करना उसकी शक्ति से परे था। जब पति ने उसका साथ छोड़ा उस नारी को निरावलम्ब बनाया, तो तब, निश्चय ही राधा की माँ के मन पर विधाता ने मानो हथौड़ा दे मारा था। उससे उसका दिल टूट गया। जर्जर होकर चूर-चूर हो गया। कदाचित् यही कारण था कि वह जब एक बार साँस की रोगी बनी, तो अनेक उपचार करने के बाद भी स्वस्थ नहीं हो सकी।

किन्तु बचपन से राधा का जिस प्रकार अतुल की माँ के पास आना-जाना था, माँग कर खाने का स्वभाव था, वह अब भी पूर्ववत् था। यद्यपि, अब राधा अधिक संकोची बन चुकी थी, कुछ माँग कर खाने की बात नहीं सोचती थी, ऐसा स्वभाव भी उससे दूर हो गया, परन्तु नित्य प्रति उस घर पर आना उसका अबाध रूप से चले जाता, इस प्रकार की छूट राधा को उसकी माँ ने भी दे रखी थी। उसने बचपन में ही राधा के दिमाग में यह बात बैठा दी थी कि उस नगर में, धनिकों के उस मोहल्ले में यदि उनका कोई सगा है, तो केवल अतुल का घर है, अतुल की माँ है। अतएव, राधा की माँ अतुल की माँ को सदा ही अपनी बड़ी बहिन मानती। वह प्रायः कहती, यदि अतुल की माँ उसे अपना ममत्व, सद्भावना और प्रेम प्रदान न करती, तो उसका यहाँ रहना आसान नहीं था। अतुल के पिता को भी वह देवता मानती।

लेकिन जब राधा यौवन की ड्योढ़ी पर आई, वह कली विकसित हुई, तो तब, वह अतुल के घर पूर्ववत् तो आती परन्तु जब अतुल के घर आने का समय समीप आता, तो वह उस घर से लौट जाती।

यद्यपि, जब अतुल घर आता, अपने कमरे में प्रवेश करता, तो वह देखता, प्रात: के समय वह जिन किताबों को, अखबार को और कपड़ों को इधर-उधर पड़ा छोड़ गया था, वे सब तरतीब से अपने-अपने स्थान पर मिलते। कभी-कभी वह यह भी देख पाता कि उसके पलंग पर तकिये का गिलाफ बदला गया है। वह कवर नया है। उस पर एक कलात्मक ढंग का फूल कढ़ा है। पलंग पर जिस चादर को बिछाया गया है, वह भी किनारों पर काढ़ी गई है। उसके बीच में एक फूलों का गुलदस्ता बना है। यह देख, बरबस ही, अतुल को कुछ अजीब-सा लगता। वह तुरन्त ही माँ के पास जाकर कहता—'आज पलंग की चादर बदली गई है, माँ! तकिये का गिलाफ भी! क्या यह सब राधा ने किया?'

माँ तुरन्त आँखों से हँस देती—'हाँ, बेटा! उसी पगली का काम है। जाने कब से लगी थी, उस चादर को काढ़ने में!'

तब अतुल कहता—'और कपड़ा कहाँ से आया, माँ?'

माँ बताती—'वह भी स्वयं खरीद लायी थी। मैंने कहा भी, अभी, पैसे बता इस कपड़े के! तो तब, तुरन्त ही उदास पड़ गयी। वह तो रूआँसी हो गयी।' और माँ कहती—'अजीब लड़की है, भैया। समझी नहीं जाती! तेरे लिए आये दिन कोई-न-कोई खाने की चीज़ अपने घर से बना कर ले आती है। और तो और, मुझे कसम दिलाती है, तुझ से कुछ न कहूँ। यह भी न बताऊँ कि वह खाने की चीज़ कहाँ से आयी है, किसने बनायी है।' सच, वह राधा बड़ी स्नेहमयी और ममतामयी है, बेटा!'

सुनकर, अतुल नितान्त उद्वेलित बन जाता। वह निढाल होकर कहता—'माँ, अब उस राधा का विवाह हो जाना चाहिए। हमें भी कुछ सहयोग देना चाहिए।'

तब माँ जाने किस दृष्टि से अतुल को देखती। वह तुरन्त ही कहती—'हाँ, बेटा ! अब उसका विवाह होना ही चाहिए ! ऐसी रूपवती, सरल और सौम्य लड़की क्या दूसरी इस शहर में होगी ! जिस घर यह राधा जायेगी, उस का भाग्य खुल जायगा।'

अतुल उत्साहित बनकर कहता—'हाँ माँ ! राधा सुयोग्य है। ममतामयी है। करुणामयी और वेदनामयी है।'

तभी माँ अवसर पाकर कहती—'और बेटा, अब तू भी तो सोच ! देख, मेरी मंजिल तो करीब आ गयी। किसी दिन भी चली जाऊँगी। चाहती हूँ, मेरे जाते-जाते कोई आ जाय और इस घर का भार अपने ऊपर ले ले।'

सुनकर, अतुल जैसे एकाएक ही व्यग्र बन जाता। वह स्वतः ही उस समस्या के अन्तराल में खो जाता। इतना वह भी समझता कि माँ के समक्ष उसके विवाह की समस्या है। और कदाचित् उसे भी विवाह करना अनिवार्य है। जब दुनियादार है, पढ़ा-लिखा है, वकालत का पेशा करने लगा है, झूठ-सच की वकालत से रुपया उपार्जित करने की कामना करता है, तो तब, न वह वैरागी है, न संन्यासी है। वह पूर्णरूप से सांसारिक है। वासना, इच्छा और जीवन को उजागर बनाने की आकांक्षा उसके भी मानस में खलबला रही है। मानो उसके मनः लोक में भी एक गहरा सागर तरंगित हो रहा है। अवसर पाते ही उसमें ज्वारभाटा उठता है। वह किलकिलाता है। घनघोर शोर करता है। अतएव, जीवन की वे उदास अभिलाषाएँ जब उस समूचे अतुल को सजाना चाहती हैं, वैभवपूर्ण बनाने की लालसा रखती हैं, तब वह एकांगी क्यों ? एकाकी और शून्य क्यों ? उसे भी साथी चाहिए। वह भी अपने मानस में भरा मधुर गान गुनगुनाये और किसी को पास बैठा कर सुनाने की परम्परा का निर्वाह करे। निश्चय ही, ऐसा आतुर भाव यदा-कदा अतुल के मानस में आता और तिरोहित हो जाता। वह जब

आता, तो भावना से पूरित वह युवक एकाएक ही इतना व्याकुल और आतुर बन जाता, कि लगता, वह पागल हो जायेगा। उस धरती से उड़कर कहीं दूर पहुँच जायेगा।

किन्तु उस रात में, जब एकाएक ही, अतुल ने राधा को रोती पाया, उसकी सुन्दर आँखों में वेदना और पीड़ा मिश्रित आकांक्षा पायी, तो सहज ही, वह अपना सन्तुलन खो बैठा। यद्यपि यह बात देर से उसके मन में उठ रही थी कि आखिर यह राधा कौन है, उसकी क्या लगती है, जो इस प्रकार उसके प्रति और माँ के लिए तन्मय बनती है, सेवा-भाव का प्रदर्शन करती है। अतुल देखता कि अब राधा और उसकी माँ को किसी सहायता की आवश्यकता नहीं। उनकी ऐसी आकांक्षा भी नही ? लेकिन फिर भी, राधा पूर्ववत् उसके घर आती है। दिन-रात के मध्य में एक समय अवश्य आती है। अतुल को यह देख कर भी विस्मय होता कि वह तभी आती है कि जब वह घर पर नही होता। प्राय: वह सन्ध्या समय आती है। या जब मां खाना बनाती है, तो राधा माँ को चौके से उठाकर स्वयं भोजन बना जाती है। शायद उसने देर से इस बात को समझ लिया कि उसे खाने के साथ हलवा पसन्द है। कोई अन्य मीठा हो, तो वह भी रुचिकर लगता है। इसलिए प्राय: होता यह कि राधा स्वयं ही कुछ-न-कुछ बाजार से खरीद लाती। कभी बरफी लाती, कभी इमरती या गुलाबजामुन। खाली हाथ आती, तो उसके घर आकर हलवा बना देती। कदाचित् बचपन से साथ-साथ चलते, साथ खेलते उस राधा ने यह भी समझ लिया कि उसे साग-तरकारी में क्या-क्या पसन्द है। वह जानती थी, करेला, परवल और कटहल वह रुचि के साथ खाता है। तो यह सब वह या तो घर से बना कर ले आती, अन्यथा, माँ के सामने बैठ कर बनाती।

मानो पीछे छूटा हुआ अतीत, बचपन और जवानी का वह छोटा-सा अवसान सहज ही अपनी किताब के पन्ने खोल कर अतुल के सामने

बैठ गया । वह राधा के लेखे-जोखे का, हाव-भाव का, समर्पण और त्याग का एक-एक पन्ना और एक-एक शब्द सुनाने लगा । वह अतीत सहज-स्वभाव बनकर कहने लगा, हाँ, अतुल, यह राधा का लेखा-जोखा है । उसका जीवन है । एक कुमारी जिस प्रकार का प्रदर्शन और त्याग कर सकती है, वही सब तो इस राधा ने किया है । उसने बताया है, मेरी सीमा तुम हो । मेरे साथी तुम ! मेरा अभिसार, समर्पण और जीवन की रुचि तुम में है ।

इसका फल यह हुआ कि उस रात अतुल देर तक नहीं सो सका । उसे इस बात का भी पता था कि आज की रात में राधा भी माँ के पास है । माँ को बुखार है, इसलिए पड़ोस के एक बच्चे के द्वारा राधा की मां ने अतुल की माँ को कहला भेजा था, बुखार हो, तो राधा वहीं रह जाये । इसलिए जब अतुल ने यह देखा कि राधा मां के कमरे में सो रही है, तो वह और अधिक आकुल बन गया कि राधा आये और उसके पास बैठे । वह इस रात में, आकाश में निकले चाँद की चाँदनी में उस राधा से स्पष्ट पूछे कि उसके मन में क्या है ? वह क्या चाहती है ? और अपने मन में इस बात को लाने का एक कारण अतुल के समक्ष यह भी था कि पिछले दिनों राधा की माँ ने जहाँ जहाँ उसके विवाह की बात चलायी, तो स्वयं राधा ने वह रोक दी । उसने कह दिया, अभी जल्दी क्या है ! मैं अभी बुढ़िया नहीं हुई । मेरी उम्र नहीं निकल गयी । यह बात अतुल ने अपनी माँ से सुन ली थी ।

फलस्वरूप जब अतुल सो नहीं सका, पलंग पर पड़ा बार-बार करवट बदलता रहा, तो वह उठ बैठा । पास ही उसका गरम दुशाला रखा था, उसे पीठ पर डाल लिया । उसकी इच्छा थी कि पास के पार्क में चला जाये । परन्तु तभी उसके मन में बात आई कि माँ को अब बुखार है या नहीं । अतएव, वह जैसे अनजाने ही, माँ के कमरे की ओर बढ़ गया । उस समय कमरे में प्रकाश तो नहीं था, परन्तु चाँद की

चांदनी ने अपना आलोक पूर्णरूप से वहाँ स्थापित कर रखा था। अतुल सीधा माँ के पास गया। देखा, वह सो रही है। खुर्राटे भर रही है। चूँकि माँ का बलगमी माद्दा था, इसलिए सोते समय श्वास के साथ वह शोर भी करती थी। किन्तु उसी समय जब अतुल ने उसकी चारपाई की ओर देखा, तो हठात् वह चित्र-खिचित की तरह रह गया। राधा प्रगाढ़ निद्रा में थी। उसके वक्ष के बटन खुल चुके थे और वह नग्नप्राय: बन गयी थी। चाँद की चाँदनी उसके बदन पर अठखेलियाँ कर रही थी। जैसे वह हँस रही थी। उस सौन्दर्यमयी और भावनामयी राधा को नग्नप्राय: देख विहँस रही थी।

अतुल क्षण भर रुका और तभी अपनी चादर उस राधा पर डाल कर तेजी के साथ उस कमरे से बाहर हो गया।

पाँच

जगजीवन बाबू जिस प्रकार अदालत में जाकर अपने मुवक्किल की वकालत करते, कदाचित् जीवन की उस मनोवृत्ति का प्रदर्शन घर में भी करना पसन्द करते थे। यह सत्य था कि अतुल उनकी दृष्टि में सफल वकील बनने योग्य नहीं था, परन्तु अपनी जाति का था और सुन्दर तथा सुशिक्षित था। इसलिए प्राय: उनके मन में बात आती कि अपनी बेटी लता के लिए अतुल योग्य रहेगा। जगजीवन बाबू दूर-दर्शी भी थे, वह देखते कि अतुल अपने घर में अकेला है। वह स्वयं आज हैं, कल नहीं। अतएव, पुत्री का सुख उनकी दृष्टि में सर्वोपरि था। उस घर में स्थिति यह थी कि यदि कभी लता की माँ पुत्री की किसी बात से असहमत होती, तो पिता सहर्ष सानुमोदित बनकर पुत्री की बात का समर्थन करते। इसका परिणाम यह हुआ कि लता अपने विचारों को, गति-विधि को कार्य रूप देने के लिए स्वतन्त्र थी। जब-तब वह अतुल के साथ कहीं बाहर जाती, भले ही माँ उस व्यवहार से असहमत होती हो, किन्तु पिता की अनुमति लता को सुलभता से प्राप्त हो ही जाती।

इसका दुष्परिणाम यह हुआ कि लता धीरे-धीरे इतनी वाचाल और स्वतन्त्र बनी कि वह माँ के अस्तित्व को प्रायः भुला बैठी। घर में पैसा था, साधन थे, उनका उपयोग करने के लिए लता स्वतन्त्र थी।

निश्चय ही, अतुल ने इस बात को समझ लिया था कि लता का और उसका सम्बन्ध किस भावना पर टिका है। जगजीवन बाबू के मन में क्या है, इसका आभास भी उसको मिल गया। जब एक दिन अदालत के काम से निवृत्त होकर जगजीवन बाबू घर की ओर चले, तो उन्होंने अतुल को भी गाड़ी में बैठा लिया। वैसे इस प्रकार का व्यवहार उनकी ओर से प्रायः होता था। परन्तु उस दिन अतुल को लगा कि किसी विशेष उद्देश्य की सिद्धि के लिए जगजीवन बाबू ने उसे साथ लिया है। जब मोटर उनके बंगले की ओर जाने वाली सड़क पर चढ़ी, तो तभी उन्होंने कहा—'आज सिर दुःख गया। जाने कैसा समाज बन गया है कि इन्सान पुरानी रीति-नीति को एकाएक ही तिलांजलि दे बैठा। कहो, तुमने आज का केस सुना ?'

अतुल बाबू ने कहा—'जी, सुन लिया।'

जगजीवन बाबू बोले—'भाई, मैं एक पक्ष का वकील था, सम्पन्न व्यक्ति का मामला था, इसलिए, मुझे आज अधिक बोलना पड़ा।'

अतुल ने कहा—'आपकी दलील अकाट्य थी। आपका मुवक्किल मुकद्दमा जीतेगा।'

व्यस्त बनकर बाबू जगजीवन राम बोले—'हाँ, वह मुकद्दमा तो जीत जायगा, परन्तु मेरा अभिमत यह है, इन्सानियत की अदालत में वह मुँह की खायेगा। उन्होंने कहा—'अतुल बाबू, पुरुष एक नारी के प्रति इतना अनुदार हो, अविवेकी हो, मैं स्वीकार नहीं कर सकता।'

सहज भाव से अतुल मुसकराया—'लेकिन आपने तो पूर्णरूप से उस युवक की पत्नी को दोषी ठहराया था। भला कितनी सुन्दर और सभ्य थी वह युवती। वह जरूर किसी कुलीन परिवार की थी।'

जगजीवन बाबू ने कहा—'हाँ, हाँ, उसका पिता भी सम्पन्न है। नगर में उसकी प्रतिष्ठा है। लेकिन आज पुत्री के कारण उसे बड़ा दु:ख मिला होगा। मैंने देखा कि पिता अदालत में नहीं आया।'

सहसा अतुल बाबू ने कहा—'आप यह क्यों नहीं अनुभव करते कि समाज मे जहाँ पुरुष के कारण नारी परेशान होती है, वहाँ पुरुष भी कम त्रास नहीं पाता। उसका जीवन भी दूभर हो जाता है। प्रायः देखा, सुना है कि नारी अपने व्यवहार से, स्वभाव से पुरुष की गति को अवरुद्ध कर देती है। जीवन भर के लिए उसे ऐसी मानसिक व्यथा देती है कि उसे पाकर आदमी घुल-घुल कर मर जाता है।'

एकाएक जगजीवन बाबू के मुँह से निकला—'ओह? तुम भी प्रतिक्रियावादी हो। सरल नहीं हो। नारी के प्रति उदार नहीं।'

अतुल कुछ कहता कि तभी बंगला आ गया। बाबू जगजीवन राम गाड़ी से उतरे और अतुल भी उतर पड़ा। जब वह अपने घर की तरफ जाने के लिए विदा लेने लगा, तो उससे कहा गया—'नहीं भाई! अभी लता से कहाँ मिले हो! शायद कई दिन से तुम इधर नहीं आ सके हो। आओ, अन्दर चलो।' और वह उसे साथ लेकर बंगले में प्रवेश कर गये।

संयोग की बात कि उस समय लता कहीं जाने को प्रस्तुत थी। उसने नयी साड़ी बदल ली। मुँह पर पाउडर और लिपस्टिक भी लगा ली। जब वह उधर आयी तो हवा के स्पर्श के साथ उसकी साड़ी से बड़ी तीव्र खुशबू अतुल की नाक से भी आकर टकरायी। देखते ही, अतुल मुस्करा दिया—'आज किधर! कोई नया प्रोग्राम है, क्या?'

लता को यह सुनना अच्छा नहीं लगा। सहसा उसे अनुभव हुआ कि यह पढ़ा लिखा अतुल आज इस तरह बात करने चला है, जैसे अपरिचित हो, कहीं दूर से आकर वहाँ बैठा हो। अतएव उसने बात का तो उत्तर दिया नहीं, अपनी बात लेकर कहा—'इधर कई दिन से कहाँ रहे, श्रीमानजी ! देखती हूँ इस सड़क का आना भी भुला दिया।'

उस समय जगजीवन बाबू अपने कमरे में जा चुके थे। वे कपड़े उतार कर आराम कुर्सी पर पड़े थे। पत्नी पास थी। किन्तु जब अतुल ने लता की बात सुनी, तो वह एकाएक बोल नहीं सका। कभी लता को नीचे से ऊपर तक देखता और कभी उसके पैरों के पास बैठे सुन्दर-सलोने कुत्ते पपी को। अतुल को पता था कि लता उस पपी को बहुत प्यार करती है। उसके लिए नौकरों की डाँटती है। कुत्ते के कारण एक-दो नौकर उस बंगले से जा चुके है।

लता ने कहा—'दिखता है, आप भी पापा के साथ आये हैं।' वह बोली—'अब समझी मैं, श्रीमान जी के कैसे दर्शन हो गये। उस दिन कुछ देर के लिए नदी पर घूमने गये, तो उसके बाद आज मिले हैं। वह भी पापा के कहे पर।'

अतुल ने कहा—'नहीं लता। मुझे आना था। शायद आज ही आना था।' वह बोला—'और देखो, मैं कसूरवार इसलिए नहीं हूँ कि आजकल मुझे घर पर रुकने के लिए विवश बनना पड़ा है। इधर कई दिन से माँ को बुखार था। यदि पड़ोस की राधा सहायक न होती, तो कदाचित् मुझे अदालत जाने से भी रुकना पड़ता।'

राधा का नाम सुनते ही, लता एकाएक विस्मय में पड़ गयी। वह तुरन्त बोली—'यह राधा कौन ? कोई सम्बन्धी ?'

अतुल ने सीधे स्वभाव कहा—'नहीं, एक पड़ोसिन की लड़की। नगर के एक प्राइमरी स्कूल की अध्यापिका।'

'तो वह विवाहित है ?'

अतुल ने बताया—'नहीं लता ! अभी उसका विवाह नहीं हुआ। उसकी माँ लड़का देख रही है।'

लगा कि लता कुछ आश्वस्त हुई। तभी वह बोली—'आपने मुझे तो बताया नहीं कि माँ बीमार है।'

अतुल सूखे भाव से हँस दिया—'तुम्हें बता कर लाभ भी क्या था ? वह राधा तो रात-रात भर जागी है, मेरी माँ के लिए। समाज की विपन्नता, व्यथा और कठिनाई को वह राधा खूब समझती है। लेकिन तुम्हारे पास क्या इस प्रकार की विषैली और दुर्गन्ध युक्त हवा आ सकती है। यहाँ वैभव है। भौतिक पदार्थों का ढेर है।'

'ओह ! आप कितने हीन है, अतुल बाबू ! क्या इसी तरह दुनिया को देखते हैं। मुझे लगता है कि आप अपनी वकालत के पेशे में भी जीवन का व्यापक दृष्टिकोण नही अपनाते।' वह बोली—'बाबू यह माया धूप-छाँह की तरह आती-जाती है। लेकिन जो जीवन का मूल-तत्व है, आनन्द है, अनुभूति है, वह क्या विपन्नता में नही पाये जा सकते। अन्ततः इस धरती पर गरीब और सामान्य लोग अधिक हैं। उन्ही की बहुतायत है।'

अतुल विषाक्त भाव से हँस दिया। वह तब लता के कुत्ते पपी को देखने लगा कि जो मुँह उठाये उसकी ओर देख रहा था। उसे लता का कहना भी अच्छा नहीं लगा। परन्तु जब उसने एक अजीब प्रकार की वेशभूषा में उस लता को पाया, तो उसे लगा, जैसे अभी अब इस लता ने किसी नेता का भाषण सुना हो। उसका प्रभाव इसके हृदय पर बना हो ! इसी विचार को लेकर वह बरबस हँस दिया। तभी बोला—'तुम्हारा विचार तो सुन्दर है। परन्तु वास्तविकता से दूर है। कहो, तुमने कभी किसी भूखे को तड़पते देखा है ? किसी विधवा की

टीस अनुभव की है ? तुमने शायद यह भी नहीं देखा कि आदमी बेबसी और बेकारी में किस प्रकार उत्पीड़ित और व्यथित होता है ।' उसने कहा—'कल्पना का विचार वास्तविकता से दूर होता है, लता रानी !'

इतना सुनना था कि लता झुंझला उठी। किन्तु वह अपने स्वभाव के विपरीत कुछ बोली नहीं। अपितु उसने कलाई पर बन्धी घड़ी देखी और कहा—'अच्छा, मैं ज़रा जाऊँगी।'

अतुल ने कहा—'हाँ, हाँ, तुम जा सकती हो।'

उसी समय लता की मां उधर निकल आयी। वह अतुल को देखते ही बोली—'अच्छा, तुम हो बेटा ?'

अतुल ने लता की मां को अभिवादन किया और लता से बोला—'मैं भी जाऊँगा। घर पहुँचूँगा।'

सुनकर लता की मां ने बेटी की ओर देखा। उसने विस्मय से कहा—'अरी, लता ! यह आये हैं अतुल बाबू, और तुम जा रही हो ?'

लता चिढ़ गयी—'मां, यह भी कैसी बात है। आज मालती का जन्मदिन है। मुझे वहाँ जाना ही है।'

मां ने कहा—'हाँ, हाँ, चली जाना। जहाँ वह ज़रूरी काम है, वैसा ही क्या यह ज़रूरी नहीं कि अतुल बाबू को कुछ पिलाओ, कुछ खिलाओ।'

लता ने अपने स्वर में तेज़ी लाकर कहा—'अब ये इस घर के लिए गैर नहीं हैं, मां !' और तभी उसके मन में बात आई कि कह दे—'मां, एक साथ दो नावों पर सवारी नहीं की जा सकती। ये अतुलजी अब किसी राधा नाम की लड़की के पास हैं। उसके समीप पहुँच चुके हैं। किन्तु उसने अपने मन की वह बात मुँह पर नहीं आने दी। वह फिर धम्म से कोच पर बैठ गयी।

लेकिन लता के उस अप्रत्याशित व्यवहार को देखकर अतुल सचमुच

ही विस्मय में पड़ गया। वह यद्यपि नारी के मनोविज्ञान से अधिक परिचित नहीं था, तो भी, उसका साधारण ज्ञान इतना बताने में समर्थ था कि यह लता दम्भ रखती है। इस समय भी इसके मन में इसी प्रकार की भावना डोल रही है।

फलस्वरूप, अपने मन में इतना सोच पाते ही, अतुल खड़ा हो गया। वह जाने को प्रस्तुत हुआ। लेकिन तभी लता भी खड़ी हो गयी और वह उसके ठीक सामने आकर बोली—'ओहो, तो यों कहो, आप भी मेरी बात का बुरा मान गये। लीजिये श्रीमान्, मैं क्षमा माँगती हूँ।' उसने कहा—'मैं जानती तो हूँ कि औरत जात हूँ, आप पुरुष भी हैं और वकील भी, तब भला, मैं इस दुर्बल जिन्दगी की वकालत में आपसे कैसे जीत सकती हूँ ? मैं हार मानती हूँ।'

किन्तु अतुल प्रस्तुत बात से सहमत नहीं था। वह बोला—'आखिर, यह क्षमा मांगने और देने की बात क्यों ? मेरी दृष्टि में यह विषय अभद्र है, अशोभनीय है। मेरी दृष्टि में नारी का अस्तित्व ऊँचा है। पुरुष का प्रश्न तो नगण्य है।'

लता ने इतना सुना, तो उसे कुछ अच्छा लगा। तभी उसने हँस कर कहा—'तो आप मेरे साथ चलेंगे ? वह मालती आपको भी याद करती थी। कहती थी, जीजाजी को भी साथ लाना।, वह बोली—'नादान, अभी से आपको जीजा बनाने बैठ गयी।'

किन्तु अतुल उस 'जीजाजी' शब्द पर हँस पड़ा। उसने देखा कि तब लता का मुँह भी लाल पड़ गया। सचमुच, वह शब्द अनायास ही उसके मुँह से निकल गया। किन्तु अतुल ने कहा—'लगता है, बाजार लगा नहीं और गठकटे जुड़ गये। मुझे तो यह जीजा-साली का सम्बन्ध अजीब लगता है।'

लता बोली—'हाँ, मुझे भी संगत नहीं लगता। परन्तु कहने वाले की ज़बान नहीं पकड़ी जाती, मारते के हाथ पकड़े जाते हैं। मेरी सभी साथिनों को पता चल गया है कि मैं और आप......वह जल्दी से बोली 'हाँ, सभी लड़कियाँ जानती हैं कि हम दोनों बहुत नजदीक आ गये हैं।'

अतुल ने कहा—'मैं इसे शुभ नहीं मानता। कम-से-कम तुम्हारे लिए। यदि तुम्हारे पिता को कोई और अच्छा लड़का मिला, तो......'

तुरन्त ही, बीच में लता बोली—'श्रीमानजी, यह खेल नही है। मेरी इच्छा के विरुद्ध कुछ हुआ तो मैं जहर खालूँगी। क्या मजाल कि पिताजी मेरी इच्छा के विरुद्ध जायें। वे सदा ही मेरी बात को महत्व देते हैं।' और तभी लता ने बताया कि पिताजी इसी दशहरे पर सगाई का मुहूर्त सम्पन्न कर देना चाहते हैं। ज़रूर, वे आजकल मे ही आपसे कुछ कहने वाले हैं।

तब अतुल चुप रह गया। वह कमरे की दीवारों पर लगे ऑइल पेण्टिग के चित्रों को देखने लगा। कभी उसका ध्यान कमरे के फर्श पर बिछे ईरानी कालीन पर भी जाता। उस कमरे के एक कोने में अगरदान से जिस प्रकार की ख़ुशबू उड़ रही थी, तो उससे मन को अच्छा तो लग रहा था, लेकिन सहज भाव से अतुल ने अनुभव किया कि उस राजसी ठाठ के नीचे कितना हा-हाकार और कोलाहल छुपा था, कदाचित् उसे उस भवन के सदस्यों ने किसी एक दिन भी अनुभव नहीं किया। बरबस, उन क्षणों में अतुल के मन में यह बात भी आई कि इस मकान में आदमी का मांस और खून लगा है। इन्सान की हड्डियों को पीस कर चूना लगाया गया है, इस बंगले की दीवारों में।

किन्तु अतुल को उस सगाई की बात सुनकर और चुपचाप देखकर, लता स्वयं ही फिर मुस्करायी और बोली—'और यह तो सुन लिया होगा आपने कि विवाह पर पिताजी जिस प्रकार की मोटर आपको देना चाहते हैं, उसका आर्डर यहाँ नहीं दिया जा सकता। सीधा अमरीका भेजना पड़ेगा। शायद इसी सप्ताह पिताजी लिखकर भेज देंगे।'

एक गहरी अरुचि के साथ अतुल बोला—'यह व्यर्थ का खर्च है। पैसे का अपव्यय है। मेरी दृष्टि में आडम्बर है।'

लेकिन लता स्वत: ही आलोकित बन उठी—'अजी जनाब ! जब मेरे पिताजी अपनी बेटी का विवाह करने जा रहे है और वह मन-पसन्द जाना-पहचाना दामाद पा रहे है, तब वह अपने मन की इच्छा अवश्य पूरी करेंगे। निश्चय ही मेरे पापा विवाह पर पैसा पानी की तरह बहायेगे।'

अतुल ने द्वार की ओर पैर बढ़ाये और कहा—'मैं सुगमता से समझता हूँ कि मनुष्य यह पैसा जितनी सुगमता से प्राप्त करता है, इसे पाने के लिए अपने जीवन की निर्ममता व्यक्त कर पाता है तो कदाचित् उसी के अनुरूप यह पैसा व्यर्थ में खर्च किया जाता है। बहुधा पैसे का सदुपयोग नहीं हो पाता।' और वह तभी अगले दिन आने की बात कह कर वहाँ से विदा हो गया। वह उस बंगले से दूर जाकर नगर के कोलाहल में खो गया।

छह

यद्यपि लता के घर से चलकर, अतुल अपने ही घर जा रहा था, परन्तु संयोग की बात कि उसे रास्ते में एकाएक राधा मिल गयी। वह स्कूल से लौट रही थी। उसे देख पाते ही, बरबस अतुल उसकी ओर बढ़ गया। पास जाकर बोला—'राधा, यह नहीं हो सकता क्या कि हम लोग नदी पर चलें। वहाँ बैठें। कुछ बात करें।'

राधा सहज भाव से लजा गयी। एकाएक अपना मत नहीं दे सकी।

लेकिन वह कुछ कहे, इससे पूर्व ही, अतुल ने सामने से निकलती टैक्सी को आवाज़ दी और पास बुला लिया। तभी उसने राधा से टैक्सी में बैठने को कहा।

सहसा सामने आयी उलझन में फँसी राधा अधिक व्यस्त हो उठी। वह बोली—'यह नहीं हो सकता कि मुझे छोड़ दें? आप नदी पर हो आयें?

किन्तु अतुल ने फिर आतुर बनकर कहा—'आओ राधा! मुझे कुछ ज़रूरी बात करनी है।'

फलस्वरूप, राधा बैठ गयी। जब कुछ रास्तों और बाज़ारों को पार करके टैक्सी नदी तट पर पहुँची, तो किनारे के एक स्थान पर

बैठ कर अतुल ने कहा—'अजीब हैं हम लोग, पास-पास रहकर भी, एक दूसरे को नहीं समझते।' तभी उसने एक सीधी बात कही--'यह मेरी कमज़ोरी है कि आजकल मैं एक व्यर्थ की चिन्ता में पड़ा हूँ। कहो तो, मै कैसा हूँ कि दूसरों के मुकद्दमों की वकालत तो करने लगा, परन्तु जब अपनी किसी समस्या को उलझी पाता हूँ, तो उसे सुलझा नहीं पाता।'

इधर देर से, राधा के लिए कदाचित् वह पहला अवसर था कि जब अतुल के पास एकान्त में बैठ पायी हो। अतएव, वह लाज से गड़ी जा रही थी। नदी के किनारे जिस पत्थर पर वह बैठी हुई थी, तो बरबस, अपने एक हाथ की उंगली उस पत्थर पर चलाने लगी। उंगली चलाती हुई वह लिख रही थी, अतुलचन्द्र और राधा, लेकिन तभी उन दोनों नामों पर उसने उंगली फेर दी और लिखा—लता और अतुल बाबू ! उसी समय सहसा जब उसने अतुल से मन की परेशानी की बात सुनी, तो बलात् उस ओर देखकर मुस्करायी, तनिक हँस भी दी।

तभी अतुल ने अपने स्वर पर ज़ोर देकर कहा—'हाँ, राधा ! मैं परेशान हूँ। लगता है, इस जीवन के दरिया में गोता क्या लगा बैठा, किसी बड़े भँवर में फँस गया।'

बरबस, राधा ने प्रश्न किया—'तो बात क्या है ? मेरे योग्य कोई सेवा हो, तो बताइये।'

उत्साहित बनकर अतुल बोला—'राधाजी, तुम चाहो तो मेरी इस समस्या को सुलझा सकती हो। मुझे डूबने से बचाना तुम्हारी शक्ति में है।' और उसने बताया—'मैं अभी-अब जगजीवन बाबू के यहाँ से आ रहा हूँ। समझती तो हो न, उनकी बेटी लता और मैं......'

तुरन्त ही, जैसे आतुर बनकर राधा ने कहा—'हाँ, हाँ, तो यह समस्या कैसी ! आपका उस लता से विवाह तो होने वाला है।'

बात की गाँठ खुलने लगी, तो अतुल एक निपुण वकील की तरह

बोला—'राधारानी, मैं उस विवाह को नहीं चाहता। मेरी कठिनाई है, इन्कार भी नहीं कर सकता।'

राधा की दृष्टि उस समय नदी के वक्ष पर टिकी थी। उसे इस बात का पता था कि नदी का वह घाट आदमियों के स्नान करने का नहीं था। वहाँ पानी भी गहरा था और मगरमच्छ के रहने का स्थान था। उसी ओर देखते हुए राधा ने अपना चेहरा घुटनों पर रख लिया। अपना मत नहीं दिया। लगा कि अकस्मात् उसके मन में भूचाल का झटका लग गया। वह काँप गयी। अतएव, छाती दबा कर नीचे की ओर झुक गयी।

लेकिन अतुल ने फिर कहा—'राधा, तुम सोचती होगी, मैं तुम्हारी भावना नहीं समझता। तुम्हारे मन में किस तरह का हा-हाकार उठा है, उसे देख नहीं पाता।' वह बोला—'उस दिन की रात में जब मैं माँ के कमरे में गया, तो तुम्हें नग्न प्रायः देख चादर डाल आया था। लेकिन तुमने सुबह जब चादर मेरे कमरे में रखी, तो दो शब्द भी लिख कर दिए, मेरे प्रति आभार प्रकट किया। कहो तो, वह तुम्हारा कैसा व्यवहार था? यह सब तो परायों के साथ होता है, अपनों के साथ नहीं। तुम्हारे हृदय में जितना ममत्व है, अनुभूति है और प्यार है, उसे मैं भी सुगमता से देख पाता हूँ, राधारानी! तुमने मुझ पर और मेरी माँ पर बड़ा एहसान किया है। उस घर के लिए तुम्हारा त्याग अपूर्व रहा है। नारी का ममत्व प्रदान किया है, तुमने!'

एकाएक खिन्न बनकर, नितान्त व्यग्र हो, राधा ने कहा—'आप यह सब क्या कह रहे हैं? उस रात आपका कमरे में जाना भी अटपटा था। शायद अशुभ भी था। परन्तु आपने मुझ पर चादरा डाला, मेरी नग्नता को ढका, इसके लिए धन्यवाद देना क्या अव्यावहारिक था? वह बोली—'लेकिन लगता है, अब आप मेरे मन को, मेरी आत्मा को भी उघाड़ देना चाहते है। मेरे मनोभावों को नंगा कर देना पसन्द

करते हैं ।' उसने बरबस ही अपनी वे सुन्दर आँखें ऊपर उठायीं और अतुल की आँखों पर टिका दीं—'आप यह क्यों नहीं समझते, मांजी के पास जाकर उनकी सेवा में रत रह कर मुझे भी सुख का आभास मिलता है। लेकिन यदि यह भी आपको अशुभ लगता हो, तो आज बता दें । मैं उस घर की ड्योढ़ी पर भी नहीं चढ़ूँगी ।' और वह कहने लगी—'आप तो पुरुष हैं न, वकील भी हैं, चोर, डाकू और खूनी के मुकद्दमे हाथ में लेते हैं। परन्तु मैं नारी हूँ । दुर्बल हूँ । मेरा सम्बल ही भला क्या है ? जिस ममत्व की बात आपने कही, वही तो मेरे जीवन को आश्वस्त बनाता है। लगता है, मेरी तरह सभी नारियों का वही प्राण है ।'

अतुल ने कहा—'हाँ, हाँ, वह तुम्हारी अपूर्व सम्पदा है ।' और तभी वह बोला—'तुमने कहा न, उस रात कमरे में जाना मेरा अशुभ काम था। सचमुच मुझे नहीं जाना था। किन्तु माँ को देखना था। फिर भी तुम्हें मेरा जाना पसन्द नहीं आया, इसका मुझे खेद है ।'

सुनते ही, एकाएक राधा व्यग्र बन उठी—'यह क्या कहते हैं। क्यों मुझे शर्मिन्दा करते हैं । भला मेरे पास ऐसा क्या है, जिस पर आपका अधिकार नहीं । देखते हैं, मैं विपन्न हूँ। विधवा माँ की बेटी हूँ। सचमुच, आप एकान्त रूप से समझ लीजिए, मुझ में न लावण्य है, न अपूर्वता है कि जिसे देखकर आप प्रसन्न हों। आप तो मुझे बचपन से ही देखते आये हैं, तब इतने समय में कौनसा परिवर्तन आ गया.........न, कुछ भी नहीं। यह केवल राधा है, आपकी बचपन की देखी—सुनी राधा !'

एकाएक अतुल बोल पड़ा—'ओह, तुम भी कठिन हो, मेरे लिए दुसाध्य हो !'

राधा तुरन्त ही आतुर बन उठी—'ऐसा क्यों कहते हैं । कहें तो मैं फिर नग्न हो जाऊँ आपके सामने !' वह बोली—'मुझे भाग्य से एक

तो व्यक्ति मिला है कि जिसके समक्ष परदा करना लाभप्रद नहीं मानती। जिसके सामने मेरा अतीत बीत गया, वर्तमान भी पैर पसार कर बैठ गया, उससे, मैं भला अपना भविष्य भी कैसे छुपा सकूँगी। न, इतनी मुझमें शक्ति नहीं। इस राधा नाम की बन्द किताब को आप खोलकर पढ़ें तो, इस नदी में फेंक दें तो, मैं तनिक भी आपत्ति नहीं करूँगी—अतुल बाबू।' उसने तभी अतुल की ओर देखकर कहा—'मैं पूजा करना जानती हूँ। यही सब अपने माता-पिता से और नारी रूप में पाये इस नारी मन के विज्ञान से समझ पायी हूँ कि मेरा काम कुछ कहना नहीं है। किसी पर अधिकार का बोझ भी नहीं है। यह ज़िन्दगी है, इसका लम्बा सफर है, तो चलना ही मेरा काम है। देवता आशीष देता है या नहीं, यह वह जाने, मेरा काम अर्चना करना है।'

बरबस ही, अतुल चीख पड़ा—'राधा !' और तभी वह सहसा इतना विह्वल बना कि जैसे रुँआसा हो गया। उसने स्पष्ट ही देखा कि राधा अपनी बात कहते-कहते इतनी भारी बनी, ऐसी भावना भरी हुई कि उसकी आँखें भर आयीं। उन सुन्दर आँखों की कोरों पर मोती सरीखे झिलमिलाते बूंद आ खड़े हुए और अतुल के देखते-देखते उसके गोरे गालों पर ढुलक आये। यह देखते ही, अतुल कुछ और पास सरक गया और वह स्वयं गद्‌गद् बनकर बोला—'पहेली मत बुझाओ, राधा। साफ-साफ कहो। हम इसीलिए नदी पर आये हैं। मैं कुछ सुनना चाहता हूँ। कुछ कहना भी पसन्द करता हूँ। देखती हो, मैं जीवन के भँवर में फँसा हूँ।'

राधा ने कहा—'आप मुझसे क्या सुनना चाहते हैं ? मेरे पास है ही क्या ? देखते हैं, सम्बलहीन हूँ। न रूप है, न सम्पदा है। मेरे पास कोई भी तो आकर्षण नहीं।' वह बोली—'आप भरोसा रखें मैं रास्ते का पत्थर नहीं बनूंगी। ऐसी याचक नहीं कि गिड़गिड़ाऊँ। व्यर्थ ही आपके गले पड़ूँ।' वह बोली—'रही मेरी ममता की, ममत्व की

बात, वह सदा रहेगी। जो बात मेरे खून में मिल चुकी है, वह भला कैसे निकलेगी ? न, मैं उस भावना का खून नहीं कर सकूँगी। वह तो मेरी सम्पत्ति है। मन की राहत है। मेरा चैन और सुख है। ऐसी आत्मानुभूति को खोकर क्या मैं जीवित रह सकूँगी !

यह सुनते ही अतुल खड़ा हो गया। उस समय अंधेरा भी बढ़ चला था। उसने साँस भर कर कहा—'आज तुम्हें देर हो जायेगी, घर पहुँचने में। माँ कुछ आपत्ति तो नहीं करेगी ?'

राधा ने कहा—'हाँ, आज देर तो हो गई। वह पूछेगी ज़रूर ! परन्तु माँ के समान आपका कहना भी कैसे टालती ? वह भूखी भी होगी।'

जब दोनों फिर सड़क पर आये, तो टैक्सी में बैठकर शहर की ओर चल दिए। अतुल ने पूछा—'यदि माँ ने प्रश्न किया कि कहाँ देर हुई, तो क्या कहोगी ?'

उसी समय राधा ने आँखें तरेरी और कहा—'तो आप यह भी जानना चाहते हैं कि मैं क्या कहूँगी ? भरोसा रखिये यह नहीं कहूँगी कि आपके साथ नदी पर थी। यह राधा नंगी हो गई तो क्या, नारी की लाज और उसकी परम्परा तो मुझे ढक कर रखनी होगी।' वह बोली—'सभी की तरह मेरी भी यह विवशता है। देखती हूँ, नारी का जीवन ही दु:सह है। पीड़ा, क्षोभ के अतिरिक्त भला इस नारी के मानस में और क्या है ?'

अतुल ने साँस भरी और चुप रह गया। जब वह अपने मोहल्ले के समीप पहुँचा, तो तभी गाड़ी रुकवा दी और फिर टैक्सी का पैसा देकर तेज़ी के साथ वह अपने मकान की तरफ बढ़ गया। राधा ने अपने घर का रास्ता लिया। जब अतुल घर गया, तो देखता है, वहाँ राधा की माँ बैठी है। वह चिन्तित और उदास है। तभी उसकी माँ

ने कहा—'अरे, अतुल, देख तो, आज राधा अभी तक नहीं आई। माँ परेशान है। ज़रा जा, स्कूल में। वहाँ कोई आयोजन तो नही। वह तो कभी रुकती नहीं।

लेकिन अतुल कुछ कहता कि राधा वहाँ आ पहुँची। उसी को देखकर अतुल बोला—'माँ, यह आ गई हैं राधारानी ! पूछ लो इनसे, कहाँ थीं।'

अतुल की माँ ने कहा—'अरी, आज कहाँ रह गयी, राधा ? देख तेरी माँ परेशान है।'

उसी समय राधा ने अतुल की ओर देखा कि वह खड़ा मुस्करा रहा था। यह देख पाते ही, वह बरबस चिढ़ गयी और बोल बैठी-'ताई, इन्ही से पूछो न, मैं तो अपने समय पर आ गयी थी।'

अतुल की मां ने कहा—'अच्छा, तो तुम दोनों साथ-साथ थे। कहाँ थे, रे !'

अतुल ने कहा—'मां, हम नदी पर जा बैठे थे।'

राधा की मां बोली—'बेटा, मुझे क्या पता था ? बुढ़िया हो गयी हूँ न, तो दिल भी छोटा हो गया है। आजकल ज़माना भी खराब है।'

राधा ने कहा—उठो माँ, चल कर खाना बनाऊँ। तुम्हें भूख भी लगी होगी।'

मां ने कहा—'अब में भूखी नहीं। तेरी ताई ने पेट भर दिया, तेरा भी खाना बन गया।' वह बोली—'अच्छा, तू यहाँ बैठ, मैं घर जाती हूँ। अन्धेरा है घर में, दीया जलाये देती हूँ।'

राधा ने कहा—'मां, तुम तो इस माटी के घर में प्रकाश करने की बात कहती हो, परन्तु जहाँ हाड़-माँस के घर में अन्धेरा हो, उसे क्या कहोगी ? वहाँ कैसे उजेला करोगी ?

मां ने बात सुनी, तो चुप रह गयी। वह उठी और धीरे-धीरे पैर रखती हुई अपने घर की ओर बढ़ गयी। निःसन्देह, उस समय वह वृद्धा सन्तुष्ट थी। उसे लगा कि अब उसके मन की समस्या सुलझ जायेगी। यद्यपि उसने स्वयं किसी एक दिन भी अतुल की मां से स्पष्ट नहीं कहा कि वह राधा को ले लें। अपने घर की बहूरानी बना लें। फिर भी, उसके मन की यह दबी हुई साधना थी कि अतुल उसकी लड़की को मिल जाये, तो वह सुख से मर सकेगी। निःसन्देह राधा की मां की दृष्टि में अतुल एक होनहार और सुपात्र लड़का था। वह अपनी मा के समान ही उसका आदर करता था। इतना सुन्दर और सुशिक्षित पति उसकी राधा को मिल जाये, तो निश्चय ही, उसकी राधा को सन्तोष मिल सकता था। आश्चर्य की बात तो यह कि वर्षों से पड़ोसी बनकर, कभी अतुल की मां ने भी इस प्रकार का विचार व्यक्त नहीं किया। हाँ, इस बात का उन दोनों नारियों को पता था, स्वयं राधा को भी ज्ञान था कि अतुल के पिता ने एक बार नहीं, अनेक बार अपने इस मत को व्यक्त किया था कि राधा उनके घर में रहेगी। उसी घर की लक्ष्मी बनेगी।

लेकिन पति के जाने के बाद, मानो मां का अभिमत उसके शरीर के साथ ही दुर्बल और क्षीण पड़ गया था। जब अतुल जगजीवन बाबू के घर जाने लगा, उनकी पुत्री लता के सम्पर्क में पहुँच गया, तो तब उस माँ ने सहज ही इस बात को समझ लिया कि बात पुत्र की चलेगी, उसकी नहीं। अतएव उसने अपनी वाणी को मौन रखा। मुँह से एक शब्द भी नहीं कहा।

किन्तु उस दिन जब अतुल और राधा नदी से लौटे, दीये जलने के बाद आये, तो तब सहसा, अतुल की मां के मन में आया, जो बात मेरे मन में थी, वह होना चाहती है। दिवगंत पति की इच्छा भी अब पूर्ण हो सकेगी। और वह खुले स्वर में बोली, राधा सरीखी

सुन्दर, सलोनी और स्नेहमयी लड़की किसी युवक को अपनी ओर न खेंच पाये, मैं यह नहीं मान सकती। राधा ज़रूर सफल बनेगी।

तब अतुल और राधा खाना खा चुके थे। देर हुई कि राधा अपने घर भी चली गयी। अतुल अपने कमरे में था। पढ़ने में लगा था। उसकी मां दो बार उधर गयी और लौट आयी। निश्चय ही, वह यह जानने के लिए आतुर थी कि आखिर विवाह के लिए उसने किसे चुना? लता को या इस राधा को? उसका मन बार-बार कह रहा था कि जीत राधा की होगी।

लेकिन अतुल की मां अपने-आप में इसलिए आश्वस्त नहीं थी कि लता का पक्ष सबल था। वह सुन्दर थी, यौवनमयी थी और उसके पिता के पास प्रचुर धन था। उसे इस बात का ज्ञान था कि जगजीवन बाबू अपनी समस्त सम्पत्ति लड़की के नाम करेंगे। उनका होने वाला दामाद नगर में सम्भ्रान्त तो होगा ही, धनिक भी होगा।

जब तीसरी बार मां अतुल के कमरे के द्वार पर पहुँची, तो तभी, अतुल बोला—'सुना मां, जगजीवन बाबू अपनी लड़की के विवाह पर दहेज के साथ एक मोटर भी देंगे। उसे सीधी अमरीका से मंगायेंगे। मां ने बात सुनी और बरबस साँस रोक कर रह गयी। वह बोल नहीं सकी।

सात

लेकिन जब उस कमरे के द्वार पर खड़ी माँ कुछ बोली नहीं, तो तभी, अतुल ने हाथ की किताब रख दी और कहा—'माँ, लगता है, अब ऐसी स्थिति आ गयी कि जब कोई-न-कोई निश्चय करना है। हो सकता है, प्राथमिक बात करने के लिए लता की माँ और पिता तुम्हारे पास आयें। मैंने आज उनकी बात से समझा कि वे अब जल्दी ही कोई निश्चय करना चाहते हैं।'

माँ ने कहा—'हाँ, ठीक तो है। सयानी लड़की है, उसे कब तक क्वाँरी रखेंगे। आज का ज़माना भी खराब है।'

अतुल बोला—'माँ, वह लता बुद्धू नहीं है। समाज की ऊँची सोसाइटी में बैठती है। किन्तु प्रश्न तुम्हारा है। तुम्हें निर्णय करना है।'

तुरन्त ही माँ बोली—'बेटा, मुझे क्या निर्णय करना है? जब तूने देख-समझ लिया है, तब भला, इस माँ से कैसा मत माँगना?

सुनकर, अतुल कुछ विचलित बन गया। वह एकाएक कुछ बोल नहीं सका। तभी माँ ने कहा—'बहू तुझे लेनी है। ज़िन्दगी तुझे चलानी है? अब इस माँ का क्या है। इसका लेखा-जोखा तो समाप्त हुआ।'

सहसा, अतुल के मन को माँ की उस बात ने कचोटा। उसे लगा कि माँ बरबस ही, अपने मानस से कुछ उलीच देना चाहती है। माँ का मन सिकुड़ रहा है। वह प्रसन्न नहीं है। अतएव वह बोला—'नहीं माँ, यह तुम्हारे पुत्र के विवाह की बात है। बात वही हो, जो तुम्हें पसन्द हो।' इतना कहते ही उसने अपने स्वर पर ज़ोर दिया—'माँ, मेरी यह भी कामना है, इस घर में जो भी आये, वह तुम्हारी सेवा करे। तुम्हारी दासी बने।'

सुनते ही, माँ कड़वे भाव से मुस्करा दी—'तू कैसी बात करता है, बेटा! मेरा ऐसा भाग्य कहाँ? अब तो बात तेरी है, तेरे सुख-दुख की है। कहा न मैंने, जुम्मा-जुम्मा आठ दिन तो मेरी ज़िन्दगी के बचे हैं। अब मैं किससे सेवा कराऊँगी?'

अतुल फिर सहम गया। माँ की बात सुनकर वह और अधिक प्रस्तुत समस्या के अन्तराल में खो गया। उसी अवस्था में बोला—'और माँ, राधा की माँ क्या सोचती है? वह कब लड़की का विवाह करेगी? उसने कहीं कोई लड़का देखा है या नहीं?'

उस समय अतुल की माँ को कुछ कहने का रास्ता मिला। उसने पुत्र के मन का पक्ष भी समझ लेना चाहा। तभी कहा—'वह कहाँ देखे, बेटा? लड़के वाले मुँह फाड़ते हैं। सिर्फ डेढ़ सौ रुपये तो राधा लाती है। उसी में खाना, कपड़ा और मकान किराया। उस बेचारी बुढ़िया की दवाएँ भी चलती हैं। बड़ी आफत में जान है, उसकी।'

अतुल बोला—'माँ, अब राधा का इस घर आना उचित नहीं। भला लोग क्या कहेंगे? आज मैंने भी मूर्खता दिखायी कि जो उसे नदी पर ले गया। सचमुच, ऐसा करना उस राधा का उपहास कराना था।' उसने कहा—'जब राधा इस घर आती है, तो भला देखने वाले

क्या अपनी आँखें बन्द कर लेते हैं ? वे जरूर, देखते होंगे। मन में जो कुछ भी आये, उसे ज़बान पर भी लाते होंगे।'

माँ ने कहा—'मैं उस राधा को नहीं रोक सकती। उसकी माँ से भी कहा, इशारे से राधा को समझाया। परन्तु ऐसे समय तो वह सदा रो पड़ी है। कहती है, ताई अब तुम मुझे अपनी नहीं मानतीं। बोल तो, तब क्या कहूँ मैं ? आती है और मेरे चार काम कर जाती है। तेरे कमरे की चीज़ों को भी सलीके से रख जाती है।'

व्यस्त बनकर अतुल बोला—'निःसन्देह, हम इस राधा के ऋणि हैं माँ ! उसके मन में इस घर के लिए ममता है।' और तभी उसने कुछ तेज़ स्वर में कहा—'किन्तु माँ, किसी की विवशता का लाभ उठाना गुनाह है। मेरा कहने का यह भी अभिप्राय है कि उस राधा को कोई आश्वासन न दे बैठना। उसने हमें उपकृत किया है, तो हमें भी किसी न-किसी रूप में इस भार को उतारना है। उसकी माँ से कह दो, वह लड़का देख ले। कुछ हम भी लगा देंगे।'

माँ ने कहा—'अरे, बेटा ! उसकी माँ बड़ी स्वाभिमानी है। इस घर का एक पैसा भी नहीं लेगी। वह तो कहती है कि राधा तुम्हारे घर आती ही इसीलिए है कि उसे ममता है। उस राधा के मन में बात बैठी है कि यह घर भी मेरा है। और तुझे पता तो है ही, तेरे पिताजी के पास यह राधा खाती थी और सोती थी। उन्होंने तो इस राधा को अपनी बच्ची मान रखा था।'

अतुल ने कुर्सी छोड़ दी और खड़ा हो गया। उसने अपने दोनों हाथों की मुट्ठियाँ बाँध लीं और कमरे में घूमता हुआ जब फिर माँ के पास आया, तो बरबस, उसके दोनों कन्धे पकड़ कर बोला—'लगता है, यह विवाह का प्रसंग आसान नहीं, जटिल है और दुरूह है।'

माँ बोली—'समझ का फेर है, बेटा ! आजकल की औलादें इस विवाह के नाम पर भी माँ-बापों को मूर्ख मानती हैं। अपनी इच्छा के अनुरूप ही इस सम्बन्ध को जोड़ती हैं। किन्तु जब बाद में वे सम्बन्ध टूटते हैं, कड़वे बनते हैं, तब लड़के और लड़की दोनों ही अपना सिर पीटते हैं।'

उसी समय अतुल को दिन में सुनी जगजीवन बाबू की बात याद हो आयी। बोला—'माँ, आज अदालत में एक लड़की ने लड़के को त्याग दिया। दोनों ही अच्छे परिवार के थे। एक मुकद्दमा मेरे भी पास आया कि जिसमें लड़के ने लड़की को त्याग दिया था।' उसने कहा—'आज तो यह हवा जोरों से चल पड़ी है। पश्चिमी सभ्यता रंग ला रही है। देश स्वतन्त्र, व्यक्ति स्वतन्त्र और उसके विचार स्वतन्त्र,' वह अपने एक हाथ की हथेली पर दूसरे हाथ की मुट्ठी मार कर बोला—'माँ, सूझ नहीं पड़ता कि यह समाज कहाँ जाएगा। कैसे पनपेगा। कैसे जीवन पायेगा।'

माँ ने कहा—'आज चरित्र नही रहा, बेटा। परस्पर बने सम्बन्धों का धागा भी टूट गया। जहाँ जीवन को भोगने और पाने का प्रश्न है, तब भला कैसे सोचा जाय कि परम्परागत भावना, आदर्श और सिद्धान्त काम में लाये जायेंगे ? आज तो उन सभी का उपहास किया जाता है। धर्म को ढोंग माना जाता है।'

अतुल ने अपने दोनों हाथ गिरा दिये और बोला—'तुम ठीक कहती हो माँ। हाड़-मांस का यह आदमी निरा खोल रह गया है। धर्म, भावना और शाश्वत आदर्श इसके मानस से तिरोहित हो गये।' उसने कहा—'माँ, कचहरी में दिन भर यही दिखायी देता है। वहाँ पर मुवक्किल झूठ बोलता है, और वकील भी झूठ बोलता दिखायी देता है। ताज्जुब तो यह कि मजिस्ट्रेट भी इस बात को जानता है।

लगता है, कचहरी का वह भू-भाग नगर की गन्दगी और भ्रष्टता का जीता-जागता नमूना है।'

माँ ने साँस भरी—'बेटा, आज सभी जगह यह अवस्था है। बिना स्वार्थ के कोई बात नहीं करता।'

अतुल हँस दिया—'माँ, व्यक्ति के सम्बन्ध बनाने का यही एक माध्यम है। नही तो सभी का जुदा-जुदा राग है।'

उसी समय माँ ने कमरे का दरवाज़ा छोड़ दिया। अतुल ने बत्ती बुझा दी और पलंग पर पड़ गया। संयोग की बात कि वह जल्दी ही सो गया। किन्तु जब रात के दो बजे थे या तीन, उसने अपने कमरे में सोते हुए एकाएक जाग कर देखा कि उसकी माँ चौकी पर बैठी है और माला फेर रही है। यह देख कर अतुल को विस्मय हुआ। उसे यह तो पता था कि माँ घर में ठाकुरजी रखती है। उन्हें स्नान कराती है, भोग लगाती है। कुछ देर बैठ कर माला भी फेरती है। किन्तु उस रात के समय, उस एकान्त में माँ बैठी माला फेर रही है, यह उसे कुछ अजूबा-सा लगा। अतएव वह सो नहीं सका। जब देर तक उसी प्रकार पड़ा रहा, तो उठकर बैठ गया। तभी वह माँ के पास गया। पास जाते ही उसने कहा—'माँ, आज नींद नहीं आई क्या?'

माँ ने अपनी माला रोक दी और कहा—'हाँ बेटा! आज नींद नहीं आई। उचटती ही रही।'

अतुल माँ के पास ही बैठ गया। उसने आलोड़ के साथ, बहुत दिन बाद अपना मुँह माँ के कन्धे पर रख दिया और कहा—'तो कहो न, तुम्हें नींद क्यों नहीं आई?'

मां ने अतुल के सिर पर हाथ रखा, उसे सहलाया। तभी अत्यन्त गहरे ममत्व के स्वर में उसने कहा—'तुझे क्या बताऊँ बेटा, आज जाने किस प्रकार तेरे बाबूजी की याद आ गयी। जब मुझे झपकी आयी,

तो वे मेरे पास खड़े थे। तू भी सोच न, कैसी अनहोती बात थी कि उनकी गोद में यह राधा थी। और तेरे बाबूजी खड़े मुस्करा रहे थे, हँस रहे थे। वे कह रहे थे—'अतुल की माँ, यह राधा अब हमारी है। इस घर की बहूरानी—'

एकाएक अतुल ने अपना मुँह माँ के कन्धे से हटा लिया और वह चीख पड़ा—'तुम रो रही हो, माँ !"

और तब वह माँ सचमुच ही रो पड़ी। उसने आँचल में मुँह छुपा लिया। उसी अवस्था में उसने कहा—'अतुल बेटा, तेरे बाबूजी सचमुच में देवता थे। उन्होंने अपना हजारों रुपया लोगों पर इसलिए छोड़, दिया कि वे सब अभावग्रस्त थे। वे लोग तेरे बाबूजी को भी विपन्न और दरिद्र दिखायी देते थे। इस राधा के पिता भी बड़े, सहृदय और धर्मात्मा व्यक्ति थे।'

अतुल ने कहा—'लेकिन माँ, इसमें रोने की बात क्या ? यह तो बात समझ में आ गयी कि बाबूजी स्वप्न में दिखायी दे गये। संयोग की बात कि बच्ची राधा उनकी गोद में थी। मैने भी सोते समय बाबूजी को अनेक बार देखा था।'

माँ ने कहा—'बेटा, अब तू वकील है। कचहरी में जाकर जिरह करता है। बाल की खाल निकालता है। लेकिन मै तो न आदमी हूँ, न वकील हूँ। केवल औरत हूँ। वह भी अब बुढ़िया हूँ। भला, औरत के रूप में जीवन की भावना और अनुभूति को छोड़, मैं और क्या देख सकती हूँ। तू कह सकता है कि मैं कमज़ोर हूँ और बुढ़िया हूँ।'

अतुल ने कहा—'नही माँ, तुम सशक्त हो, बलवान हो।, और उसने तभी फिर अपना मुँह माँ के कन्धे पर रख दिया। वह फिर बोला—'लेकिन माँ, तुमने अपना मन कैसे करुण बनाया, यह मैं नहीं समझ सका। कहो तो, क्या उस राधा के कारण ?

माँ ने साँस भर कर कहा—'हाँ, बेटा ! मुझे उस राधा का भी ध्यान है। वह जिस प्रकार इस घर के लिए तन्मय बनी है, ममता प्रकट करती है, तो क्या उसे भुलाया जा सकता है ? तेरे समान वह राधा भी मेरे मन में बैठती है। मेरी मनुहार पाने में समर्थ होती है।' वह बोली 'तू देख नहीं पाता, वह राधा कितना बड़ा त्याग इस घर के लिए करती है। वह अपना कर्त्तव्य मानती है कि दिन में एक बार ज़रूर यहाँ आये। ऐसी सुन्दर, ऐसी मोहक और ऐसी स्वभाव की सरल लड़की क्या दूसरी सहज में दिखायी दे सकती है।'

अतुल खड़ा हो गया। जब वह अपने कमरे की तरफ जाने लगा, तो बोला—'माँ, मैं इस रहस्य को समझ नहीं पाता। मेरी कठिनाई यह है कि इसका दार्शनिक स्वरूप भी नहीं देख सकता।'

किन्तु माँ ने अपने स्वर पर ज़ोर दिया—'अरे बेटा ! उस हीरे को परखना आसान नहीं। चतुर जौहरी चाहिए, उस जवाहरात के टुकड़े को देखने के लिए !'

इतना सुनना था कि अतुल बरबस हँस पड़ा। वह तुरन्त ठहाका मार बैठा। यह देख, माँ का मन एकाएक क्षुब्ध हो उठा। उसने तुरन्त ही चिहुँक कर कहा—'तू हँसता है, रे ! इतनी ऊँची बात को हँस कर देखता है। राम-राम ! अब ऐसा भी बन गया है, तू ! उस छोकरी लता के पास जाकर इतना भी सीख गया।'

तभी अतुल ने माँ की ओर देखा। उसने पाया कि सचमुच, माँ का मुँह भारी है। गम्भीर है उसके मन का रोष भी ऊपर तैर आया है। अतएव, वह अपने कमरे के द्वार तक जाकर भी फिर वापस आ गया। माँ के पास खड़ा होकर बोला—'माँ, मुझे लगता है कि तुम उस लता को पसन्द नहीं करतीं। आज के समाज में, इस प्रकार की लड़की कितना महत्व रखती है, कदाचित् तुम इसे भी नहीं जानतीं।'

एकाएक झुंझलाकर माँ बोली—'खाक पडे तेरे इस समाज पर ! मैं पूछती हूँ आज इस तरह की लड़कियाँ और लड़कों का कोई दीन-ईमान है ? होटलों में जाकर ठहाके लगाना और शराब के प्याले चढ़ाने में ही समाज की इज्जत है, तो मैं कुछ नही कह सकती ! तू माने या न माने आज यही हो रहा है।'

माॅ की बात सुनी तो अतुल एकाएक स्तब्ध रह गया। उसकी माँ समाज की नई पीढ़ी पर कितना बड़ा आरोप लगा रही थी, यह जैसे उसके गले में कड़वे ग्रास की तरह अटक गया। अतएव वह बोल नहीं सका। वहाॅ से सीधा अपने कमरे में गया। घड़ी में देखा तो उस समय पाँच से ऊपर हो गया। उसने हाथ में बेंत पकड़ी और उसी अवस्था में बाहर चल दिया। यद्यपि अतुल को प्रातः के समय घूमने का शौक नहीं था, परन्तु उस समय अकारण ही उसके मस्तिष्क पर बोझ था। माँ की बातों ने उसे परेशान कर दिया। इसलिए वह उस प्रातः के समय दूर तक तो गया नहीं, कुछ दूरी पर ही पार्क में जाकर बैठ गया।

उस समय दिन निकल आया। कुछ पुरुष, कुछ नारियाँ और कुछ बच्चे उस पार्क में आ गये। कुछ युवतियाँ भी प्रातः की हवा खाने निकल आयीं। किन्तु उस समय अतुल का ध्यान किसी पर नहीं था, वह केवल अपने मन की बात पर केन्द्रित था। यद्यपि उसकी इच्छा थी, कि वह माँ की बात को भुला दे, परन्तु उसे लगा, जिस बात को वह अभी तक हल्की मानता आया, उसके प्रति उदासीन रहा, वह अब समस्या बन जाना चाहती है। माॅ उसी रेखा पर खड़ी है। अतएव, उसके मन में बार-बार बात आती, उफ ! कितनी नासमझ है मेरी माँ ! औलाद को प्यार करती है, परन्तु यह नहीं देखती कि उसका हित किसमें है। वह समझती है विवाह केवल सन्तान उत्पत्ति के लिए

किया जाता है—बच्चों की फौज बढ़ाने के लिए। काश, मां इस बात को समझे कि आजकल विवाह पहले के समान नहीं होता, नन्हे-मुन्नों का मण्डप संजोया नहीं जाता। अब तो वह विवाह की वेदी पर भविष्य का निर्माण होता है।

उसी समय वह विस्मित बना कि सामने से अपने कुत्ते पप्पी के साथ लता उधर ही बढ़ी आ रही थी।

———

श्राठ

समीप श्राते ही लता ने उत्साहित बनकर कहा—'श्राप खूब मिल गये। आज पापा ने पिकनिक का प्रोग्राम बनाया है। अभी दो घण्टे मे चल देना है।'

श्रतुल ने कहा—'लेकिन मुझे तो काम है। नये केस देखना है।'

किन्तु लता ने लापरवाही से कहा—'श्रजी छोड़िये भी! प्रत्येक क्षण काम-ही-काम!' और यह कहते हुए वह श्रतुल के साथ एक ऐसे फूलों से लदे पेड़ की तरफ बढ़ गई कि जिस पर उस प्रात: के समय फूल ही फूल थे। उस पेड़ के पास जाते ही अतुल ने एक फूल तोड़ लिया श्रौर सहसा जाने क्या उसके मन मे श्राया कि वह फूल लता के जूड़े मे लगा दिया।

यह देखते ही लता हँस पड़ी—'यह फूल तो बेकार है। गन्ध-रहित है।'

श्रतुल ने कहा—'सुन्दर तो है।'

यह सुनते ही, लता ने श्रपनी उन सुरमई आँखों से इस प्रकार अतुल की श्रोर देखा कि मानो वह कोई श्रप्रत्याशित बात कह बैठा हो। इसी श्रभिप्राय से वह बोली—'तो आप सुन्दरता के प्रेमी हैं, सुगन्ध के नहीं।'

श्रतुल ने कहा—'देवी जी, यह विश्व इसी भावना पर टिका है।

यह जगमगाता संसार इसी से सभी को अपनी ओर आकर्षित करता है। जहाँ सौन्दर्य है, वहाँ किसी न किसी रूप में सुगन्ध भी है।'

निःसन्देह, उस समय उन दोनों के मध्य विपरीत बात चल पड़ी थी। जो बात लता को कहनी चाहिए, उसे अतुल कह रहा था। और उसकी बात लता के मुँह से निकल आयी थी। इसी से दोनों बरबस ही हँस दिये। वे एक बेंच पर जा बैठे। वहीं पर लता ने पूछा—'तो आप नित्य आते हैं इस पार्क में ? मुझे इस पपी के लिए आना पड़ता है। यह बड़ा तंग करता है। देखो, हम यहाँ हैं और वह जाने कहाँ-कहाँ फिर रहा है।'

हँस कर अतुल बोला—'वह भी अपने साथी की खोज कर रहा है।'

एकाएक लता के मुँह से निकला—'सचमुच !' वह बोली—'अतुल बाबू, अजीब जीवन है, यह ! निरा रहस्यपूर्ण ! केवल उन्मादपूर्ण !'

अतुल ने कहा—'कुछ लोग इस जीवन को भोगते हैं और कुछ इसकी पूजा करते हैं।'

एकाएक लता ने अपने स्वर पर ज़ोर दिया—'आप क्या करते हैं ? इस जीवन से क्या चाहते हैं ?'

सुनकर, अतुल सूखे भाव से हँस दिया। वह सामने के एक पेड़ की ओर देखने लगा।

किन्तु लता स्वतः ही बोली—'अतुल जी, आज आपने मेरे मन की बात कही। सचमुच, जीवन को भोगना चाहिये। जिस तरह एक दुल्हन अपने को सजाती है, अपना बनाव, शृंगार करती है, तो कदाचित् उसी के अनुरूप, यह जीवन भी कुछ अनुदान माँगता है। कुछ उपादानों से अपने को समर्थ बनाना पसन्द करते हैं। किसी योग अथवा आत्मनिग्रह के द्वारा इस ज़िन्दगी को संकुचित बनाया जाय, इसकी इच्छा को मारा जाय, यह कोई शुभ विचार नहीं। उपादेय नहीं।'

अतुल ने कहा—'मैंने ऐसे अनेक किस्से-कहानियाँ सुनी हैं कि जिनमें व्यक्ति इन्द्रिय-निग्रह का शोर मचाता हुआ स्वय दूषित बन गया। पागल बन गया। अनैतिक और अनाचारी हो गया।'

लता को अपनी बात कहने का मानो और अधिक सहारा मिला। उसने उत्साहित बन कर कहा—'निःसन्देह, ऐसी अनेक कथाएँ हैं। पुरुष ही क्यों, नारियों की भी हैं।' उसने कुछ विकृत बन कर कहा—'हमारे तीर्थ स्थानों में ऐसी नारियों की संख्या कम नहीं।' वह बोली—'एक दिन पापा कहते थे कि वृन्दावन में उन्होंने इस प्रकार की नारियाँ देखीं कि जिनके सिर मुँडे थे। उनके बदन पर परिधान भी यथेष्ट नहीं थे।' तभी वह कहने लगी—'हमारे देश में ऐसे और भी सम्प्रदाय हैं कि जिनके यहाँ नारियाँ इन्द्रिय-निग्रह के लिए बाध्य की जाती हैं। सचमुच, वे बेचारी अपने उस यौवनकाल में ही सिसकती हैं। उनका यौवन बरबस ही उनका उपहास करता है। किन्तु जब भी उसे अवसर मिलता है, तो वह विद्रोह का भाव भी प्रकट कर पाता है।'

उस समय, एकाएक, अतुल कुछ गम्भीर बन गया, उस पार्क में जगह-जगह पेड़ थे। उस प्रातः के समय उनमें से अधिकांश पर विविध प्रकार के फूल खिले थे। अतएव, वह प्रातः की ठण्डी हवा पाने के साथ, उन फूलों के पेड़ों को देखता हुआ कुछ अच्छा अनुभव कर रहा था। इसके साथ ही, जब उसे संयोग से वहाँ पर लता भी मिल गयी, तो तब, मानो सोने में सुगन्ध का आनन्द पाने लगा था। कदाचित् यही कारण था कि उस क्षण उसके मन में न तो माँ की बात थी, न राधा की बात। पास बैठी हुई लता का जिस प्रकार का वेश-विन्यास था, वह भी उसके लिए आकर्षण का विषय था। लता ने एक ढीला पाजामा पहन रखा था और घुटनों तक का कुरता। यद्यपि उसके सिर का जूड़ा अपेक्षाकृत कम बंधा था, परन्तु वह व्यवस्थित नहीं था। यह तो लगा

कि जब लता घर से चली होगी, तो उसने बालों में कंघा किया होगा। उसका पजामा और कुरता एक लम्बी धारीधार कपड़े के थे। परन्तु वह कपड़ा सूती नहीं, रेशमी था। निश्चय ही, लता ने रात में सोने से पूर्व उसमें कोई तेज सेंट लगा ली होगी, प्रातः की हवा के साथ खुशबू तैर रही थी। वह अतुल की नाक को भी स्पर्श करने में समर्थ थी।

उसी समय लता का कुत्ता पपी वहाँ आ गया। लगता था कि वह कहीं दूर से भाग कर आया। ज़रूर, दूसरे कुत्तों ने उसका पीछा किया होगा। इसलिए जब वह लता की टाँगों के पास आकर बैठा, तो हाँप रहा था। वह बार-बार कातर और सहमी दृष्टि से लता की ओर भी देखने लगा था।

लता ने पपी की पीठ पर हाथ फेरा और कहा—'कहाँ गया था तू ! हाँप रहा है ?' किन्तु पपी ने इतनी बात सुनी और अपनी लम्बी जीभ निकाल कर मानो याचक भाव से लता की ओर पूर्ववत् देखता रहा। कभी-कभी उस जीभ से उसका पैर भी चाटने लगा।

तभी लता ने कहा—'अतुल जी, मैं उन लोगों को बुद्धिमान नहीं मानती कि जिन्हें करना कुछ है, कहना कुछ है। ऐसे व्यभिचारी, लम्पटी और अदूरदर्शी सचमुच खतरनाक होते हैं। वे समाज के साथ तो कठोर पाप करते ही हैं, अपने साथ भी करते हैं। मेरा मत है, वे जीवनभर अन्धकार में पड़े रहते हैं। निश्चय ही वे जीवन की आत्मा को मारते है, उसका गला मसोसते हैं।'

बरबस अतुल हँस दिया—'तुम्हें कहना क्या है ?'

लता ने आल्हादित बनकर कहा—'इन फूलों की तरह महको। इनकी तरह खिलो।'

मानो किसी निष्कर्ष पर न जाते हुए भी, अतुल पूछ बैठा—'तब

आगे क्या हो ?' वह बोला—'ये फूल भी धरती पर गिरते हैं। राह-गीरों के पैरों में आते हैं।'

लता ने खुले स्वर में कहा—'नहीं, जनाब, देवता के चरणों में चढ़ते है, गले में शोभा पाते हैं।'

अतुल हँस दिया—'यह भी कहो, किसी सुन्दरी के जूड़े में स्थान पाते हैं। जब सुहाग की रात लोग मनाते हैं तो उस पलंग पर भी बिछाये जाते हैं।'

एकाएक विचलित बनकर लता बोली—'ओह, बाल की खाल निकालते हैं, आप तो ! मैंने कहा तो, इन फूलों का उपयोग व्यापक है। विशाल और विस्तृत इनका कार्यक्षेत्र है।' यह कहते हुए वह खड़ी हो गयी और बोली—'अब चलिये।' उसने हाथ की कलाई पर बँधी घड़ी देखी—'देखिये, सात बजने वाले हैं। हमें आठ बजे चल देना है।'

अतुल ने पूछा—'कौन-कौन जायेंगे ?',

लता ने बताया—'मम्मी, पापा और आप।'

अतुल खड़ा हो गया और हँस पड़ा—'अपना नाम नहीं लिया।'

एकाएक आलोकित बनकर लता बोली—'हाँ, हाँ, मैं भी, मेरा यह पपी भी। नदी के पार इसे कोई खरगोश दीख पड़ा तो यह उसे पकड़ने के लिए भागेगा।'

अतुल ने कहा—'कोई अनोखी बात नही। सभी शिकारो हैं। ये समाज के स्त्री और पुरुष भी शिकार करते हैं। कह सकता हूँ एक लतारानी भी·· ···'

तुरन्त ही, अपने स्वर में तेजी लाकर लता बोली—'जी, नहीं, नहीं। शिकारी आप हैं, मैं नहीं।'

पार्क से बाहर की ओर जाते हुए अतुल बोला—'यह तो अपने अपने दृष्टिकोण की बात है। मैं यही समझता हूँ कि शिकार मेरा हुआ है।'

लता ने विचलित बनकर कहा—'चलो चलो। यह अदालत नहीं कि जहाँ झूठ को सच बताया जाय।'

अतुल हँस पड़ा—देवीजी, मैं इसी को अपनी अदालत मानता हूँ। देखता हूँ फैसला हो चुका है। अब डिगरी के द्वारा इस अतुल को नीलाम की बोली पर चढ़ा देना शेष है।'

सुनते ही लता खिलखिला पड़ी। वह अपनी उन सुन्दर आँखों को अतुल की आँखों पर डालती हुई बोली—'सच, तुम बड़े शोख हो। वह दिन आये तो। तब बताऊँगी कि श्रीमानजी नीलाम किये गये, या यह लता।' जब वह चौराहे पर जाकर अपने मकान की ओर जाने को तत्पर हुई तो कहने लगी—'जल्दी आइये ! आज झरने में गोता भी लगायेंगे। बस, कपडे पहन आइये। सुबह की चाय हमारे यहाँ लीजिये।'

अतुल अपने मकान की ओर बढ़ गया। जब वह घर पहुँचा, तो देखता है, माँ के पास राधा की माँ बैठी है। उन दोनों में कोई गम्भीर बात चल रही है। उसे देखते ही, माँ ने कहा—'अरे, अतुल ! देख, यह राधा को मां आई है। कहती है, एक लड़का है। राधा के लिए उससे बात चली है। तू भी उसे जाकर देख ले।'

उस अप्रत्याशित बात को सुनकर अतुल एकाएक खो गया। वह अच्छे मूड में पार्क से लौटा था, परन्तु घर आते ही, वह फिर अप्रत्याशित रूप से विकृत बन गया। कुछ घण्टे पूर्व उसकी मां ने जिस प्रकार की बात कही, तो वह विषय उसके लिए कठोर था। अतएव, उस विषम समस्या के अन्तराल में जब वह फिर फेंका गया, तो छटपटा गया। कातर और हीन भी बन गया।

किन्तु माँ की बात सुनकर उसने कहा—'माँ, यह काम तुम्हारा है, या राधा की मां का। भला मैं उस लड़के को क्या देखूँगा ?'

माँ ने कहा—'अरे उसकी शक्ल सूरत तो देख लेगा। तू आदमी है, तो पड़ोसियों से और उस लड़के से यह मालूम कर लेगा कि उसकी आर्थिक स्थिति कैसी है...... हाँ, समझता नही तू, आजकल लड़के वाले बड़ी धोखेबाजी से काम लेते है। अपनी अन्दरूनी हालत छिपाते हैं। बाहर कुछ और भीतर कुछ की दूषित परम्परा का ये लड़के वाले खूब निर्वाह करते हैं।'

अतुल बोला—'माँ, यह समझना आसान नहीं। एक दो बार के मिलने से इस समस्या का समाधान भी नहीं होता।' उसने कहा—'माँ, आज समाज का आदमी बहूरूपिया है। उसे जल्दी नहीं समझा जा सकता।'

राधा की माँ ने कहा—'बेटा, काम तो करना है। मुझे यह भार उतारना है। देखते हो, लड़की सयानी हो गयी।'

अतुल की माँ बोली—'हाँ, हाँ, अब कमी क्या है।' उसने कहा—'यदि राधा का विवाह अब तक हो चुका होता, तो वह एक-दो बच्चों की माँ भी बन जाती। भगवान की कृपा से शरीर अच्छा है, स्वस्थ है।'

राधा की माँ ने कहा—'बहिनजी, मेरी एक यह भी तो कठिनाई है, बड़ी विपत्ति है कि जब भी उस राधा से विवाह की बात करती हूँ, तो वह मुँह से तो कुछ कहती नही, बस आँखों से आँसू बहा बैठती है। जाने वह अपने मन में क्या लिये बैठी है। मैं कहती भी हूँ, बेटी, तू लड़की की जात है। तेरा बाप है नहीं, माँ बुढ़िया है। यह माँ किसी दिन भी अपनी यात्रा समाप्त कर सकती है।' यह कहते बरबस ही, राधा की माँ स्वतः ही रुँआसी बन गयी। वह सिर झुकाकर धरती की ओर देखने लगी।

नौ

नि:सन्देह, अतुल की माँ जानकी ने राधा की माँ के समक्ष तो अपने मन का रोष प्रकट नहीं किया, परन्तु उसे लगा कि या तो उसका पुत्र चरित्र-भ्रष्ट है अथवा निरा बुद्धिहीन। यद्यपि जानकी यह जानने में असमर्थ थी कि उस प्रात: के समय अतुल कपड़े पहनकर कहाँ गया है, तथापि उसने अनुमान लगा लिया कि हो-न-हो वह जगजीवन के घर गया होगा। जब राधा की माँ उठकर अपने घर की ओर चल पड़ी, तो जानकी अकेली रह गयी। बड़ा घर था। किसी समय उसमे आदमियों की कमी नही थी, परन्तु अब माँ-बेटे को छोड़कर वहाँ कोई नही रह गया था। कदाचित् घर के उस सूनेपन को देखकर ही, जानकी ने राधा की माँ से अनेक बार कहा था कि वह किराये के मकान को छोड़ दे और वहाँ आ जाये। कदाचित् जानकी द्वारा इतनी उदारता का प्रदर्शन इसलिए भी हो रहा था कि राधा और उसकी माँ जानकी के बहुत काम आती थी। राधा की माँ का अधिकांश समय उसी घर पर बीतता था। वहाँ वह अतुल की लाइब्रेरी से किताब देखती, रेडियो सुनती। लेकिन जब अतुल घर में होता, तो राधा बहुत कम उस घर पर रहने का अवसर देती थी।

लेकिन उस प्रातः के समय जब राधा की माँ किसी लड़के की बात लेकर आयी, तो तब, सहसा, जानकी के मन में केवल एक ही बात खटकी कि यह राधा की माँ भी कम स्वाभिमानी नहीं। कदाचित् उस वृद्धा को यह भी पसन्द नहीं आया कि उसकी बेटी अतुल के साथ नदी पर गयी। जब जानकी द्वारा प्रस्तुत मकान में रहने के प्रस्ताव को राधा की माँ ने स्वीकार नही किया, उसने अन्य सहायता भी नहीं चाही, तो तब सहसा, जानकी के मन में केवल एक ही बात उठी, राधा की माँ गरीब है तो क्या, आत्मसम्मान रखती है, उसका मूल्य आँकती है। और एक नारी के रूप में दूसरी नारी का यह पक्ष वस्तुतः जानकी को बहुत पसन्द आया। फलस्वरूप उसने समय-समय पर देखा कि माँ के समान स्वयं राधा भी किसी वस्तु को पाने की आकांक्षित नहीं बनी यद्यपि जानकी की दृष्टि में वह बिटिया थी, उससे कुछ भी पाने का अधिकार रखती, परन्तु वह राधा कभी लालायित नहीं दिखायी दी। इसके अतिरिक्त जानकी इस बात को भी नहीं भूल पायी कि किसी समय, कुछ वर्ष पूर्व, जब राधा के शरीर की कोमल पखंड़ियाँ खिल चलीं, तो तभी, एक बार, राधा की माँ ने जानकी से कहा था—'बहिन, राधा के भैया नहीं, अतुल की बहिन नहीं, तो क्यों न इसी रक्षा बन्धन पर दोनों का यह शुभ नाता बाँध दिया जाय। लेकिन, ज्ञात अथवा अज्ञात रूप से जानकी उस प्रस्ताव से सहमत नहीं हुई। तब उसने अत्यन्त प्रोत्साहित बनकर कहा था—'राधा की मां, सम्बन्ध और भी हैं। वह इससे गूढ़ हैं। मैं तो चाहती हूँ कि राधा इसी घर पर रहे। बहिन तो अन्ततः दूसरे घर की सम्पत्ति होती है।'

कहा नहीं जा सकता कि राधा की माँ देवकी उस बात को भूल गयी, अथवा नहीं। परन्तु लगता यही था कि वह बात उसके मन में अटकी थी। वह अनेक बार उसके मुँह तक आयी और लौट गयी। वह इच्छा करके भी जानकी से यह नहीं कह सकी कि वह अपनी बात याद करे। कदाचित् वह जानती थी कि पुराने मुर्दे उखाड़ने का दुष्परिणाम

यह होगा कि जानकी उसकी ओर से मुँह मोड़ लेगी। और देवकी इस बात को भूली नहीं कि उस उदार और सदाशयता की प्रतिमूर्ति जानकी ने इतने आभार उसके ऊपर लाद दिये थे कि जिनसे वह उस जीवन में उऋण नहीं हो सकती थी। आश्चर्य की बात तो यह कि स्वयं राधा अपनी माँ से अधिक जानकी ताई का ध्यान रखती। वह रात-दिन के चौबीस घण्टों में एक बार अवश्य अपनी ताई के पास जाना पसन्द करती। वहाँ कोई काम होता तो वह भी कर आती।

किन्तु उस दिन जानकी स्वयं लज्जित थी। उसे लगा कि वह उस देवकी से बहुत नीचे खड़ी थी। जब देवकी अपने घर लौट गयी, तो जानकी उस बड़े और सूने घर में मानो अनायारा देख पाने लगी कि प्रत्येक कमरे से कोई-न-कोई आदमी के आकार की मूर्ति निकलती है। किलकिलाती हैं और हँसती है। सचमुच, उस समय जानकी को अपने दिवंगत पति की याद हो आयी। उसे इस बात का भी ध्यान आया कि जब उस जाने वाले की मरण-वेला पास थी, कदाचित् स्वयं-सिद्ध बनकर दिखायी देने लगी थी, तो तभी एक रात के एकान्त में उसने जानकी से कहा था—'जानकी, इस राधा को मत छोड़ देना। तुम धन का या दहेज का लोभ मत करना। हीरा छोड़ कर पत्थर मत उठा लेना।'

लेकिन उस समय, जब जानकी अकेली थी, अशान्त और उन्मत्त बनी थी, तो तभी, कमरे के द्वारों से किसी की परछाई पाकर वह एकाएक डर गयी। वह इतनी भयातुर बनी कि हाथ में पकड़ी हुई माला छूट गयी। एकाएक चीख पड़ी—'मेरे राम!' और तभी झटका-सा खाकर घुटनों में सिर रखने के साथ फफक पड़ी उसी अवस्था में वह—'मेरे देव, मैं क्या करूँ। मैं लड़के को कैसे समझाऊँ। मै उसके पेट में इस भावना को कैसे भरूँ कि जगजीवन का पैसा और उसकी लड़की लता उसे सुख नही दे सकते। वह लड़की आग का आगार है। मेरे लड़के को फूँक देगी, राख का ढेर बना देगी, वह खूबसूरत नागिन······'

सहसा, जानकी चौंक गयी। उसके मन में उठी अशांति रुक गयी। उसने अपनी द्रवित और वेदना से भरी बूढ़ी आँखों से देखा कि सामने खड़ी राधा मुस्करा रही है। श्वेत फेनिल सरीखे दाँत निकाल कर कुछ हँस भी दी है। वह कह रही है—'ताई, रो रही हो, तुम !'

सुनते ही, ताई ने एकाएक पीड़ा से भर कर कहा—'मैं अपने भाग्य को रोती हूँ, बेटी !'

किन्तु राधा ने कहा—'ताई, तुम्हारा भाग्य तो अच्छा है !' वह और पास आ गयी। जानकी के पास वहीं धरती पर बैठ गयी और आलोड़ के साथ उसके दोनों घुटने पकड़ कर बोली—'नहीं, कोई और बात है, ताई ! मुझे बताओ। तुम्हारे पास से माँ गयी, तो वह भी रुँआसी थी, सुस्त थी।' और उसने स्वतः ही कहा—'मेरी माँ तो अब दिल की भी दुर्बल हो गयी है। रात-दिन सोचती है कि राधा का ब्याह हो। यह अपने घर जाये। और मैं कहती हूँ, जब ब्याह होना होगा, हो जायगा। मैं माँ को सुगमता से छोड़ कर नहीं जाऊँगी।'

जानकी को जैसे सहारा मिला—'हाँ, बेटी ! तेरी माँ भी ठीक कहती है। अब तू सयानी है। जमाना खराब है।'

राधा झुंझला पड़ी—'ताई, मुझे कोई खा नहीं जायगा। मेरे भी चार हाथ-पाँव हैं।' वह बोली—'और ताई, इस शरीर की जैसी भी अधोगति होनी है, वह क्या रुकेगी ? सुना नहीं, गरीब की जोरू सबकी भाभी····हाँ, ताई ! मैं गरीब माँ-बाप की लड़की हूँ, तो जाने कहाँ पटकी जाऊँगी। भगवान जाने किस घाट पर बैठ कर अपनी ज़िन्दगी बिता सकूँगी !'

जानकी को राधा की बात चुभ गयी। वह जैसे उसके प्राणों में तीर की तरह लग गयी। अतएव, वह बरबस ही इतनी तड़पी कि एकाएक कुछ कह नहीं सकी। तभी साँस रोक कर बोली—'राधा बेटी,

मेरा मन कहता है, तू जहाँ भी जायेगी, सुख से रहेगी। मैं अपने भगवान से यही प्रार्थना करती हूँ।'

किन्तु राधा इतना सुनकर तुरन्त ही आतुर बन गयी और वह छूटते ही बोली—'ताई, तुम माँ को समझा दो, मैं अभी विवाह करने की इच्छा नहीं रखती। मैं नहीं सोचती कि किस घर जाऊँगी, कहाँ रहूँगी। देखती तो हो, मै पढ़ रही हूँ। अगले साल बी० ए० का इम्तहान दूँगी।'

उत्साहित बनकर जानकी बोली—'अरी, तभी तो कहती हूँ मैं, तू भाग्यवान है। अपनी ज़िन्दगी का रास्ता देखती है। सफर का खुद ही इन्तज़ाम करती है।'

राधा ने कहा—'ताई, विवाह बोझीला सौदा है। एक जगह टिक रहना है। और इस भावना के पीछे ही औरत ठगी जाती है।'

जानकी ने कहा—'बेटी, यह बात पुरुष के लिए भी है। वह भी बोझीला बनता है। उसका रास्ता रुक जाता है।'

तभी हठात् राधा ने प्रस्तुत वार्ता को बदला और कहा—'अतुल बाबू कहाॅ है ? यहाॅ नहीं है क्या ?'

जानकी बोली—'वह कही गया है। शायद दिन भर के लिए गया है।'

'अरे, मैंने तो सोचा था आज छुट्टी का दिन है, तो खाने में तुम्हारा हाथ बँटाऊँगी।' वह बोली—'माँ को तो आज खाना नहीं, उसका व्रत है। मैने चाय बनायी और पराँठे भी बना लिये। वे खाये, तो पेट भर गया।

इतना सुनते ही, जानकी ने एकाएक कहा—'बेटी, तू बहुत ममता रखती है, इस घर से ! रोज़ ही इस ताई का हाथ बँटाती है। न,

राधा ! अब सयानी है तू ! पढ़ाई का बोझ भी तूने उठा रखा है। स्कूल में जाकर पढ़ाना भी है। तब यह सब नहीं। मेरा जैसा भाग्य है, भोगने दे। मुझे अकेली चलने दे। जितने पाप-पुण्य मैने किये है, उन्हें इस शरीर पर से उतरने दे, मेरी रानी !'

हठात् राधा ने देखा कि ताई अपनी बात कहने के साथ फिर रुँआसी हो आई। उसके मन का उद्वेग आँखों में उमड़ चला है। अतएव, बरबस ही, उसे लगा, सच, इस ताई के मन में कुछ है। मन के किसी कोने में कुछ चुभ रहा है। वह दुःख रहा है। इतना सोचते ही, वह एकाएक तन्मय बनकर बोली—'ताई, कोई बात है, क्या ? मुझ से नहीं कहोगी ? मै तुम्हारी बिटिया हूँ।'

इतना सुनना था कि ताई फफक पड़ी। वह ज़ोर से रोती हुई चीख पड़ी—'राधा, लोग मुझे भाग्य की देवी मानते हैं, परन्तु मैं दुर्भागी हूँ। अपने किसी जन्म के अभिशाप से ज़ल रही हूँ।' और तभी उसने फिर घुटनों पर मुँह रख लिया।

जानकी के मुँह से इतना सुनना मानो पर्याप्त था। राधा ने सहज ही समझ लिया कि ज़रूर इस ताई के मन में कोई सूजा हुआ फोड़ा है। वह रिस रहा है और दुःखन पैदा कर रहा है। अतएव वह एका-एक कुछ बोल नहीं सकी। वैसे वह समझ गयी कि हो न हो ताई के मन में जो विषाद है, वह अतुल बाबू द्वारा पैदा किया गया है। तथापि उसके मन का विवाद ज्यों का त्यों बना रहा। उस दिन रविवार का दिन था। प्राय: उस दिन राधा अपने पठन-पाठन का कोई कार्यक्रम निर्धारित नहीं करती थी। उस दिन वह अपने घर की सफाई करती और कपड़े, धोती। जब अवकाश मिलता तो उस घर आ जाती। वह जानकी का हाथ बँटाने के अतिरिक्त अतुल बाबू के कमरे की वस्तुओं को भी सलीके से रख देती। कभी कोई किताब लेकर बैठ जाती। कुछ समय रेडियो से कोई नाटक सुनती अथवा गानों का आनन्द लेती।

राधा के मन में यह बात प्रायः उठती कि वह गायन विद्या का भी अभ्यास करती, तो सुख मानती । यद्यपि उसका स्वर मधुर था, सुरीला था परन्तु धनाभाव के कारण वह ऐसा सुयोग नहीं पा सकी ।

अतएव, उस समय, जब जानकी ने अत्यन्त पीड़ित भाव में अपनी बात कही और वह आँखों से रो पड़ी, तो तभी, क्षण भर बाद ही, राधा बोली—'ताई, मैं सोच नहीं पाती कि तुम्हारे मन में क्या है ? नहीं जानती कि तुम्हारे जीवन में ऐसा कौन-सा विषाद छा गया। ज़रूर, तुम परेशान हो ।'

जानकी बोली—'राधा बेटी, सचमुच, मैं दुःखी हूँ । मुझे लगता है, मेरे जीवन की साधना खण्ड-खण्ड हुई जा रही है । जिस बात की मैं कल्पना नहीं कर पाती थी, अब वह मेरे सामने आना चाहती है ।'

राधा ने कहा—'ताई, तुम स्वयं समझ सकती हो । जीवन का एक विशाल अनुभव तुम्हारे पास है । भला कहो तो, इस जीवन में सभी बाते क्या निभती हैं, सत्य प्रतिपादित होती है ?' वह बोली—'ताई, सभी कुछ भाग्य और भगवान् की कृपा पर चलता है । वह जगत् का स्वामी हमारी सभी बातों का नियंत्रण करता है ।'

जानकी ने साँस भरी—'हाँ, राधा, मैं भी इतना जानती हूँ । समझती हूँ ।'

राधा सहज भाव से मुस्करायी—'तब ताई, तुम्हारा दुःखी बनना बेकार है । यहाँ सभी कुछ स्वयचालित है ।' वह सहज भाव से हँसी—'और ताई, अब तुम्हें सोचना क्या ? देखती तो हो, नदी के कगार पर खड़ी हो, वह बालू का है । पानी की एक लहर आयेगी और उसे अपने साथ ले जायगी ।'

आतुर मन से जानकी ने राधा के सिर पर हाथ रखा—'तू बड़े अच्छे समय पर आ गई, राधा । सचमुच, मैं भयभीत थी । जब से

रघुवा गया है, तो दूसरा नौकर ही नहीं मिलता। अतुल से कितनी बार कहा है, परन्तु वह किसी को ढूँढ कर नहीं लाता।'

राधा हँस पड़ी—'ताई, नौकर को जितना देती हो, मुझे उसका आधा दे दिया करो। काम कर जाया करूँगी।'

ताई ने कहा -'अरी, पगली! इस घर में काम ही क्या है? मै तो यही सोचती हूँ कि घर बड़ा है और अकेला है।'

राधा ज़ोर से हँस पड़ी—'ताई, बड़ा घर, बड़े भाग्य! हाँ, तुम तो भाग्यवान हो, ताई!'

किन्तु ताई अपने मन में घुमड़ती हुई बात मुह पर ले आई—'अतुल की बहू होती, बच्चे होते, तो यह घर भी बोलता। वे सब हँसते तो यह भी हँसता।'

उस समय सचमुच ही, राधा ज़ोर से खिलखिला पड़ी—'वाह ताई! तुम्हारे दिमाग में भी एक संसार बसा है।' तत्क्षण ही वह गम्भीर बन गयी—'ताई, एक बात कहती हूँ, बुरा न मानना। अभी अब तुम्हारी आँखों में आँसू थे। तुम तड़पी थीं। तुमने मुँह से भी कहा कि परेशान हो। किसी अभिशाप की आग में जल रही हो। तो समझ लो, जो भी औरत यहाँ आयेगी, तुम्हारा स्थान लेगी, तब क्या वह नहीं तड़पेगी, वह नहीं सिसकेगी? वह अपनी आँखों से नहीं रोयेगी?' उसने कहा—'ताई, उस बेचारी को भी यही सब करना होगा। औरत के रूप में कुढ़ना होगा और तिल-तिल करके जलना भी होगा!'

किन्तु जानकी बोली—'यह ज़रूरी नहीं। सब के लिए साध्य नहीं।' उसने कहा—'मेरे मन की व्यथा और है। वह सबसे अकेली है। वह तो मुझे दीमक की तरह चाटती है।' और बरबस ही उसके मुँह से निकला—'परेशानी मुझे पुत्र ने दी है,—इस अतुल ने! लगता है, अब यह लड़का भेड़िया बन गया है। अब पहले के समान सीधा और सरल नहीं रह गया। मैंने कभी सोचा भी नहीं था कि वह अपनी माँ

के विपरीत चलेगा । मैंने पैदा किया है न, उसे ! मुझे सदा भरोसा रहा कि उसका दिल मोम की तरह है । तनिक-सी गरमी पाकर पिघलता है । परन्तु अब लगता है, कि वह कठोर है । हृदयहीन है ।'

यद्यपि उस बात को सुनते-सुनते राधा उस बात के अन्तराल में खो चुकी थी । वह गम्भीर थी । परन्तु अज्ञात भाव में नितान्त सरल भाव से बोली—'न, ताई ! तुम गुस्सा न करो । अपने को शांत करो ।' उसने कहा—'मेरा अब भी यही अभिमत है कि अतुल बाबू मोम हैं ।' वे ज़रा गरमी पाकर पिघल सकते हैं । तनिक-सी ठेस लगने पर रो सकते हैं । वे वकील तो बन गये, परन्तु अब भी अत्यन्त भावुक हैं । सरल हैं । वह तुम्हारे ही, देखे-सुने बेटे हैं, ताई !'

एकाएक ताई बोली—'अब वह मेरे हाथ का पंछी नहीं रहा । उसके पर निकल आये है । वह ऊँचाई पर उड़ता है । इस छतरी से उड़कर कही अन्यत्र जाकर बैठता है ।'

राधा जोर से हँस पड़ी—'तुम तो कविता करती हो, ताई !' वह बोली—'उन्हें उड़ने दो, ताई ! देखो तो, कहाँ तक जाते हैं । कितनी ऊँचाई पर पहुँचते है । एक दिन आयेगा कि वह स्वयं थक जायेगे । फिर इसी छतरी पर बैठेंगे और बरबस कहेगे—'मेरी अच्छी माँ !'

जानकी सहज भाव से पीड़ा के साथ मुस्करा दी—'तू मेरी मदद कर, राधा ! मेरे कहने पर चल !' वह बोली—'समझ ले, अतुल किसी दलदल में फँस गया है । गले तक पानी में उतर चुका है ।'

——

दस

परन्तु जानकी भले ही अपने पुत्र के लिए शंकित हो, उसे किसी दल-दल में फँसता देखकर भयभीत हो, लेकिन स्वयं अतुल उस रूपहली चाँदनी के समान दिखती लता को पाकर सुखी था। उसने सुगमता से इस बात का अनुभव किया कि लता का सम्पर्क उसके लिए शोभनीय है। कदाचित् यही कारण था, जब वह पार्टी पिकनिक के लिए नगर से दूर एक पहाड़ी पर पहुँची, तो वहाँ जाते ही, सुगमता से लता और अतुल अलग होकर एक दूसरी दिशा की ओर बढ़ गये। उस समय लता का वेश-विन्यास लगभग ऐसा ही था कि जैसे कोई जापानी लड़की स्नान करने के लिए समुद्र में छलाँग लगाने के लिए प्रस्तुत हो। घुटनों तक का चुस्त पजामा और कूल्हे तक की बॉडी उसके बदन पर थी। वह किसी जापानी छींट के कपड़े की बनी थी। बड़ी भव्य लगती। बाल खुले और कमर पर फैले हुए।

जब ये दोनों पहाड़ी के ऊपर जाकर झरने के पास पहुँचे तो दोनों एक पथरीली शिला पर बैठ गये। लता ने अपने दोनों पैर पानी में डाल दिये और तभी प्रकृति के सौंदर्य को देख एकाएक विहँसती हुई बोली,—'अहा! यहाँ मन लगता है। दिल में आता है कि यहीं बसेरा डाला जाय।'

अतुल उस समय एक पहाड़ी पेड़ की ओर देख रहा था। वह पेड़ फूलों से लदा खड़ा था। सहसा, उसके मन के आया, कैसी विपरीत बात है कि इस पेड़ का और इन फूलों का कोई महत्व नहीं। उसने देखा कि पेड़ के नीचे असंख्य फूल पड़े थे। उनमें कुछ सूखे थे, कुछ तुरन्त के झरे थे। किन्तु जब उसने लता की बात सुनी, तो सूखे भाव से मुसकरा भर दिया। वह बोल नहीं सका।

तभी लता ने उसे फिर टंकोरा—'अतुलजी, कहाँ पहुँच गये आप ! क्या उस पेड़ पर ! अरे, छोड़िये उसकी बात ! यह पेड़ क्या, इस धरती के जाने कितने आदमी, कितनी औरतें आती हैं और चली जाती हैं। मानो उनका कोई अस्तित्व नहीं।'

इतना सुनते ही, अतुल ने लता की ओर देखा और कहा—'मुझे खुशी है कि तुमने मेरी बात समझ ली। सचमुच, अभी मेरे मन में आया कि यह पेड़ भी अभागा है। कितना खुशनुमा लगता है, परन्तु क्या इसकी ओर किसी का ध्यान जाता है। इस पहाड़ी पर कौन आता है, इस पेड़ की छाँह लेने और इसका वैभवपूर्ण सौन्दर्य देखने !'

लता ने आतुर बनकर कहा—'हाँ, हाँ, मैंने यही तो कहा, श्रीमान ! यह पेड़, क्या अधिकांश आदमियों का भी यही हाल है।' वह बोली—'इस धरती का स्वभाव है कि फूलों का निर्माण करे। परन्तु सभी तो देवता पर नहीं चढ़ते।' वह आँखों से मुसकरायी—'सभी फूलों का ऐसा भाग्य नहीं कि सुन्दरियों के गले का हार बनें।' वह चंचल बन उठी—'अतुलजी, सुन्दरता के साथ सुगन्ध भी चाहिए। गुलाब, जूही और चमेली को लोग क्यों पसन्द करते है। उनकी मादक गन्ध आकर्षण प्रदान करती है।'

संयोग की बात है कि उसी समय अतुल को प्रातः की अपनी माँ और राधा की माँ से सुनी बात याद हो आयी। अभी वह इस बात को

भूला नहीं कि प्रातः जब घर से चला तो वह नितान्त उपेक्षा और उदासीनता का भाव उन दो नारियों के समक्ष व्यक्त कर आया था। किन्तु जब लता ने अपनी बात कही, तो सहसा उसे राधा की याद हो आयी। उसे लगा कि राधा भी एक फूल है। उसमें भी सुगन्ध है। परन्तु उसकी ओर कोई उन्मुख नहीं। अतएव, वह बरबस ही अपने आप में झुंझला गया। नियति के उस व्यापार को देख सहम भी गया।

तभी लता बोली—'अतुलजी, जानते तो हैं आप, यह जीवन भावनाप्रधान है। मैं कह सकती हूँ इस भावना को विकसित करना नारी का प्रधान कर्त्तव्य रहा। उसने अपने उत्तरदायित्व का भली भाँति निर्वहन किया।'

बरबस अतुल हँस दिया। वह एक अजीब ढंग से लता की ओर देखने लगा।

किन्तु लता ने उस पर ध्यान न देकर कहा—'क्यों, मैंने असंगत कहा क्या ?'

'अतुल बोला—'नहीं, नहीं, मेरा भी यही मत है। लेकिन तुम्हारे मुँह से भावना की बात सुनकर हँसी आती है। सोचता हूँ वह अनुभूति क्या कभी तुमने जीवन पर उतार कर देखी है।' उसने कहा—'लताजी, यह तो परस्पराश्रित बात है। भावना का सम्बन्ध अभाव से है। अनुभव से है। कहो तो, तुम्हारे पास कौनसा अभाव है।'

एकाएक लता क्षुब्ध बन उठी—'ओह, आप भी बड़े दकियानूसी विचार रखते हैं। वकील हैं न, तो इस तरह की बात कह सकते हैं।' वह बोली—'महाशय, क्या केवल इतना पर्याप्त नहीं कि मैं औरत जात हूँ, भावना पर आश्रित हूँ।'

अतुल और अधिक हँस दिया—'जी हाँ, तभी तो कहता हूँ। तुम वैभव में पली हो। ऊँचाई पर देखती हो। जीवन के भौतिक पदार्थों का अम्बार अपने आस-पास लगा पाती हो।' उसने कहा—'जहाँ जीवन को भोगने, इच्छाओं का पेट भरने की बात हो, वहाँ भावना का निवास नहीं होता। अनुभूति को स्थान नहीं मिलता। वे तो वहाँ सिर धुनती हैं और हा-हा खाती हैं।'

तुरन्त ही, मानो चिहुँक कर लता बोली—'अच्छा, अच्छा, मैं हार गयी। समझ गयी, अब आप वेदान्त के पण्डित भी बनने चले हैं। अध्यात्म और दर्शन की बात करते हैं।'

अतुल ने कहा—'जब तुम्हारे सम्पर्क में आया हूँ, तो उस वेदान्त का विद्यार्थी नही बन सकता। यहाँ तो सरस उन्माद ही पाया जा सकता है। किसी शुष्क विषय को यहाँ स्थान नही मिल सकता। तुम्हारी इन सुन्दर आँखों को देखकर क्या योग का पाठ पढ़ा जा सकता है?'

उसी समय लता का कुत्ता पपी घूमता हुआ वहाँ आ पहुँचा। वह लता को अपनी जीभ निकालकर चाटने का प्रयत्न करने लगा। किन्तु स्वयं लता का ध्यान अतुल की ओर था। उसने अपनी मादक आँखों से अतुल को देखा और तभी एक अजीब मनुहार के साथ, अपना मुँह उसके कन्धे पर रखकर कहा—'सच, आपने मुझे उन्मादी बना दिया है, अतुल बाबू! लगता है, हमारा कहीं दूर से साथ चला आया है। पहले जन्म में भी सम्बन्ध रहा है।'

अतुल ने कहा—'मुझे इस दर्शन में आस्था तो है, परन्तु जो कुछ दिखायी नहीं देता, उस पर सहज में भरोसा भी नही किया जा सकता। घिसी पिटी परम्परा को भला कैसे स्वीकार किया जाय।' वह बोला—'प्राय: लोग रेल में सफर करते हैं। मुसाफिर परस्पर बात करते हैं। कुछ अधिक निकट बैठ कर आत्मीय भाव का प्रदर्शन करते हैं। लेकिन

जब छूटते हैं, अपने-अपने स्टेशन पर उतरते हैं, तो परस्पर अभिवादन के बाद वे अपने पास और कोई भाव नहीं रखते ।'

इतना सुनकर लता जैसे सहम गयी—'बस, इतना ही !' वह बोली—'मुझे यह सब कुछ नहीं रुचता । जीवन का यह व्यापार जब एक बार चलता है, तो चलता रहे । अविराम गति से इस झरने के पानी की तरह बहता रहे ।' वह एकाएक चंचल बन उठी—'अतुलजी जब दो जीवन परस्पर मिलते है, उनके सम्बन्ध बनते हैं, तो वे टूटें क्यों ! उनमें व्यवधान क्यों आये ! मैं तो इस तरह की कल्पना करके भी सिहर जाती हूँ । कृपया मुझे मत सुनाइये कि आज आप मिले हैं, तो एक दिन छूट जायेंगे । हम दोनों दूर-दूर हो जायेंगे ।'

अतुल ने साँस भरी—'यह तो नियति का विधान है, लतारानी ! यह शाश्वत है । यही सत्य है । जिस कपड़े को तुम पहने हो, वह कब तक रहेगा । वह पुराना होगा । यही इस शरीर का स्वभाव है । उन्हें स्वयं एक दिन यह बोझिल लगेगा ।' वह हँस दिया—'नित्य का खाना खाते भी आदमी ऊब जाता है । शरीर के साथ, वह मन और जिह्वा का परिवर्त्तन चाहता है ।'

एकाएक लता ने खिन्न बनकर कहा—'ओह, आप भी बाल की खाल निकालते हैं । वकीलों में यही दोष है । इसी से मैं अपने पापा से भी कम बात करती हूँ, कानून का पण्डित जब जीवन के दर्शन का पण्डित बनता है, तो बोझीला होता है । कुछ अजीब सा लगता है ।'

सहसा अतुल बोला—'किन्तु तुम्हारे समीप बैठकर जीवन का दर्शन बोल नहीं पाता । तुम्हारा यह रूप, तुम्हारी ये सुन्दर आँखें आध्यात्मिक खुराक नहीं देतीं । सुरा सरीखी मादकता अनुभव होती है ।'

तुरन्त ही लता मुसकरायी—'सच ! आप भी ऐसा बअनुभव करते हैं । मैं तो सोचती थी, पत्थर में मेंख नहीं गड़ सकती । उस पर पानी भी नहीं रुकता । मैंने आपसे अनेक बार हार मानी है ।'

अतुल ज़ोर से हँस दिया । वह उल्लसित बनकर बोला—'कैसी विपरीत बात है । लगता है, दरिया का बहाव उल्टी दिशा की ओर हो रहा है ।'

किन्तु लता ने अपने स्वर पर ज़ोर दिया—'हाँ, हाँ मैं ठीक कहती हूँ । अभी तो समझा है मैने कि इस नारी को पुरुष के समक्ष नमन करना पड़ता है ।'

अतुल ने कहा—'नहीं, नहीं, यह तुम्हारा भ्रम है । कम से कम तुम्हारे विषय में तो मैं ऐसा नहीं समझ सकता ।' वह बोला—'देखो तुम्हारा पपी फिर दूर चला गया । लगता है, अपने स्वामी के समान यह भी शिकारी है । किसी खरगोश की तलाश में जगह-जगह घूमता फिर रहा है ।'

लता ने कहा—'वह भी नर है । शिकारी है । मादा होती, तो बेचारी मेरे पास ही बैठती । मेरी बाते सुनती । लेकिन मैं इस पपी को नही रोक सकती ।'

अतुल खड़ा हो गया और बोला—'आओ चलें । तुम्हारे पापा प्रतीक्षा में होंगे । तुम्हारी ममी भी जाने क्या मन मे लिये होंगी ।'

लता भी खड़ी हो गयी । वह बोली—'मम्मी को अच्छा नही लग रहा होगा कि हम लोग यहाँ आ बैठे है । इस तरह एकान्त में हैं ।' उसने कहा—'जाने क्यों मेरी मम्मी को यह सब अटपटा लगता है । वह सोचती ही नही कि आज के लड़के और लड़कियाँ भी गुनगुनाना चाहते है । मिल बैठ कर कुछ कहना पसन्द करते हैं ।'

अतुल सूखे भाव से मुसकराया—'लताजी, तुम्हारी मम्मी अपनी बेटी का मन देखती है, पहचानती हैं । वह सोचती हैं कि नयी उम्र में सब दौड़ते है । गिरते भी है । इस जिन्दगी के चिकने रास्ते पर फिसलते हैं ।

'ओहो, आप भी वही स्वर ले बैठे ! मैं कहती हूँ, इसमें पाप क्या है। जो गिरेगा, वह उठेगा। मंजिल पर चलने वाला क्या रुकेगा।' लता बोली—'अतुलजी, बहता पानी रोका जायेगा तो सड़ेगा। दुर्गन्ध पैदा करेगा। भगवान का दिया यह जीवन है, तो क्यों न इसे भोगा जाय। क्यों न समझा जाय कि इसमें कितना रस है, कितना प्यार है। कितनी अनुभूति और समर्पण का भाव है।'

दोनों लौट चले। तभी पपी भी दौड़ आया। वह तेज़ भागा था, हाँफ रहा था। उसी को लक्ष्य कर अतुल बोला—'लगता है, बेचारे को शिकार नहीं मिला।'

लता ने बात सुन ली और अपना मत नहीं दिया। किन्तु जब दोनों लौट चले, तो एक अन्य फूलों से लदे पेड़ के नीचे खड़े होकर सहसा लता ने सीधा प्रश्न किया—'श्रीमानजी, रात पापा और मम्मी में बातें चल रही थीं। मम्मी ने कहा था कि विवाह की बात तो करते हो, परन्तु अतुलबाबू का मत भी लिया ? यह सुनते ही पापा बोले, यह निर्णय तुम्हारी बेटी को करना है, मुझे नहीं। सचमुच, मेरे पापा आपको एक होनहार युवक मानते हैं। निश्चय ही वे समझ चुके हैं कि हम दोनों अभिन्न हैं, दूर-दूर नहीं हैं।'

तुरन्त ही अतुल बोला—'लेकिन यह प्रश्न अब कैसे उठ गया ?' उसने कहा—'लताजी, मेरी माँ से बात करना जरूरी है। उसकी इच्छा को प्राथमिकता देना मेरा कर्त्तव्य है।'

लता ने तुरन्त कुछ आकुल बनकर कहा—'हाँ, हाँ, यह रस्म भी पूरी हो जायगी।' वह बोली—'बात तो वही होगी, जो हम दोनों के मध्य में तय हो सकेगी। और यह स्पष्ट ह कि मैं अब आपके अतिरिक्त किसी अन्य स्थान पर जाने की कल्पना नहीं कर सकती।'

बात सुनने के साथ ही अतुल आँखों से मुस्कराया और मधुर भाव से तनिक हँस भी दिया।

लता ने कहा—'देखिये, अब विवाह की तिथि जल्दी निश्चित हो जानी चाहिए। पापा का कहना है कि विवाह के बाद वे हमें योरोप जाने की सुविधा दे देंगे। मैं तो एक बार पापा के साथ घूम भी आयी हूँ, परन्तु आप नहीं गये। अब दोनों स्विटज़रलैंड में जायेंगे, वहाँ के मनोरम दृश्य देखेंगे, तो सचमुच, जीवन का स्वर्ग पा जायेंगे।'

अतुल ने कहा—'आओ हम चलें। कुछ खायें।'

दोनों चल दिये। उस स्थान पर पहुँच गये कि जहाँ लता की मम्मी और पापा बैठे थे। नौकर ने स्टोव जला दिया था और पकोड़ी बनाने का सामान तैयार करने में लगा था।

लता को समीप आयी देखकर जगजीवन बाबू ने कहा—'बेटी, अब कुछ खा लो। अतुल बाबू को भी खिलाओ।' वह अतुल की ओर देखकर बोले—'नगर के कोलाहल से दूर, इस एकान्त में आदमी का मन लगता है।'

अतुल ने कहा—'जी, यह क्षणिक आनन्द है। आदमी स्थायी रूप से यहाँ नहीं रह सकता। उसका यही मनोविज्ञान है। पर्वतों की और जगलों की कल्पना करके तो अच्छा लगता है, लेकिन आदमी जीवन में जिन वस्तुओं को पाने की इच्छा करता है, उन्हें यहाँ न पाकर कुण्ठित बनता है। नगरों की ओर दौड़ता है। उस सड़ांध में घुट कर मरना पसन्द करता है।'

सुनकर, जगजीवन बाबू चुप रह गये। तभी वह पास खड़े एक पेड़ की ओर देखते हुए बोले—'अजीब है, यह जीवन-दर्शन ! निरा रहस्यपूर्ण !'

अतुल मुसकराया—'बाबूजी, मुझे लगता है, जीवन का दर्शन तो सरल है। परन्तु इस मनुष्य ने जितनी आकांक्षाएँ समेट ली है, अपने

हृदय में भरली हैं, तो उनके अभाव में यह सुख और शांति का आभास नहीं पाता ।'

उत्साहित बनकर बाबू जगजीवन बाबू बोले—'यह ठीक है । अमर सत्य है ।'

किन्तु पास बैठी लता बोल पड़ी—'पापा, क्या खाक ठीक है । फिर यह सजा हुआ, परिष्कृत बना हुआ संसार कहाँ रहेगा ? आकांक्षित और अभाव भरे इन्सान ने इसका निर्माण किया । वृद्धि का उपयोग करके ही इस विश्व को जगमग बनाया गया है । जब पैसे का निर्माण हुआ, तो साथ में पदार्थों की भी कल्पना की गयी और उन्हें निर्मित किया गया । विज्ञान आज जो कुछ दे रहा है, विश्व को सजा रहा है, वह इसी उद्देश्य की पूर्ति मात्र है ।'

मुसकराते हुए जगजीवन बाबू ने पुत्री की ओर देखा और कहा—'सचमुच, पैसे का यही उपयोग है, यही चिर उद्देश्य है ! तभी तो आज स्पर्धा का युग आया है ।'

ग्यारह

खाना आरम्भ हो गया। संयोग की बात कि उसी समय एक दुर्बल नारी जाने किधर से बलात् उस स्थान पर आगयी। नारी सचमुच कृश और दीवानी थी। उसकी गोद में बच्चा था। किन्तु वह भी सूख रहा था। हड्डियाँ निकल आयी थी और उसके बदन पर गोश्त का नाम नहीं था। निश्चय ही वह नारी युवा थी। परन्तु दुर्दिनों की मार ने उसे जर्जर बना दिया था।

उसे देखते ही, लता एकाएक चीख पड़ी—'अरे, बाहर की सड़ाँध यहाँ भी आगयी।' और तीखे स्वर में कहा—'औरत, जा यहाँ से !'

बाबू जगजीवन राम बोले—'यही हमारे समाज का कोढ़ है। भीख माँगना एक व्यवसाय है।'

लता बोली—'पापा, यह भी एक अभद्र प्रदर्शन है। यह नारी बेहया है।' और उसने नौकर को आदेश दिया कि वह उस औरत को वहाँ से हटा दे।

अतुल खाना खा चुका था। किन्तु जब उसने सामने खड़ी औरत को देखा, तो सहसा उसके मन में बात आई, यह नारी पराजित है।

दु:खों के बोझ से दबी है। उसे खाना तो वह दे नहीं सकता था, पैसा दे सकता था, परन्तु जब लता और जगजीवन बाबू की बात सुनी, तो उसका वह उदार भाव क्षण भर में तिरोहित हो गया। अतएव, वह मौन ही बना रहा।

किन्तु उसी समय जगजीवन बाबू बोले—'हमारे समाज का यह पाप सुगमता से नहीं मिटेगा। भिक्षा माँगना एक दूषित वृत्ति है।'

लता बोली—'पापा, मेरा बस चले तो एक-एक भिखारी को गोली मार दूँ। यह भिक्षुक-समाज बोझ है, इस धरती पर। लोगों की दया का दुरुपयोग करता है। उस उपार्जित धन से नाना प्रकार के दुष्कर्म करता है।'

तभी अतुल की निगाह गयी कि वह दीन और कृश बनी औरत झिड़की पाकर ही वहाँ से हट गयी। कुछ दूर गयी और एक पेड़ का सहारा लेकर बैठ गयी। लेकिन अतुल को खाना खाने के बाद चुपचाप देखकर लता बोली—'आओ, हम उधर चलें। उस पेड़ के नीचे। अब मम्मी और पापा तो आराम करेंगे। लेकिन हम दोनों तो बूढ़े नहीं कि खाकर पड़ जायेंगे।'

अतुल ने कहा—'हाँ, यह ठीक है। हम लोग घूमें। इसी पहाड़ को भलि भाँति देखें।' और यह कहते ही वह खड़ा हो गया।

किन्तु जब वे वहाँ से कुछ दूर जा चुके, तो तभी एक पेड़ के नीचे रुक कर लता ने मधुर हास्य के साथ कहा—'सुना कुछ, पापा अभी-अब मम्मी से कह रहे थे, मुझे यह जोड़ी पसन्द है। हज़ारों में एक लगती है।'

उसी भाव में अतुल बोला—'तो तुम्मारी मम्मी ने क्या कहा! कहती क्या, मुँह सिकोड़ा होगा! यह अतुल लुच्चा या लगा लफंगा होगा!'

तुरन्त ही स्वर पर ज़ोर देकर लता बोली—'नहीं, जनाब ! यह चुनाव तो मम्मी का है, पापा का नहीं।' उसने कहा—'मम्मी मुझको कुछ कह सकती है, लेकिन आपको नहीं।' और यह कहते ही उसने अपनी गरम साँसों को इस तरह अतुल के ऊपर समर्पित कर देना चाहा कि मानो समूची ही उसके जीवन में खो जाने के लिए आतुर और व्यग्र हो उठी हो। उसी अवस्था में वह हठात् कह उठी—'अब तुम्ही मेरे सिरताज हो, जीवन के साथी !'

किन्तु जाने अतुल के मन की वह कैसी विवशता थी कि वह लता के समान आकुल नहीं बना। वह नितान्त सदय भाव लेकर बोला—'लता रानी, तुम सचमुच ही अनुपम हो। सुगन्धमयी हो। तुम्हें पाकर मै जीवन का स्वर्ग पा जाऊँगा।'

लता ने कहा—'पापा की इच्छा है कि अब जल्दी ही हम दोनों की सगाई हो जाय। इन्ही जाड़ों मे विवाह भी सम्पन्न कर दिया जाय।'

अतुल ने कहा—'हाँ, हाँ, शुभ काम में देरी नही होनी चाहिए। किन्तु मेरी माँ से बात कर लेनी चाहिए।

उसी समय लता बोली—'और देखिये अतुल बाबू, मम्मी पुराने विचारों की हैं ना, तो मेरे कपड़ों को देख कर भी नाक-भौ सिकोड़ती हैं। कहती हैं, लड़कियों को ऐसे चुस्त कपडे शोभा नहीं देते। मैं कपड़े पहनती हूँ तो मुझे नंगी बताती हैं।' उसने कहा—'आप ही कहिये, इन कपड़ों में क्या अशुभ लगती हूँ ? आपको नंगी दिखायी देती हूँ ?' वह कहने लगी—'अतुल जी, नग्नता विचारो की होती है, शरीर की नहीं। आज का युग आवाहन करता है कि नारी सजे, सजी हुई दिखायी दे।'

अतुल हँस दिया— 'हाँ, हाँ, क्यों नहीं, नारी को सजना चाहिए। मधुर और आकर्षक लगना चाहिए।'

लेकिन बरबस ही, लता के मुँह से निकला—'आप हँसे क्यों ?'

अतुल ने कहा—'कोई विशेष बात नहीं।' किन्तु वह तभी बोला— 'मुझे जिस बात पर हँसी आई, कदाचित् वह तुम्हें पसन्द नहीं आयेगी। मन के अनुरूप नहीं लगेगी।'

इतना सुनते ही, लता के मन का रूप कुछ बदला। सहसा उसके मन में आया कि ज़रूर, इस अतुल बाबू के मन में कोई बात है। कोई गाँठ है। अतएव, उसने अतुल की कमीज़ का गला पकड़ लिया और कहा—'हाँ, बताइये, क्या बात है ? मुझे पसन्द आये अथवा नहीं, आपको कह देनी चाहिए।'

तब बरबस ही, अतुल ने कहा—'हमारा नारी समाज आज जिस प्रकार पश्चिमी देशों की नकल कर बैठा है, वह यहाँ की परम्परा के अनुरूप नहीं। तुम्हारे वस्त्र भी उसके द्योतक नहीं।' वह बोला— 'वस्तुतः तुम्हारी माँ का कहना अनुपयुक्त नहीं। इस प्रकार तो आज की लड़कियाँ युवकों की वासना को प्रोत्साहित करती है। उस आग को कुरेदती हैं।'

एकाएक दोनों कानों पर हाथ रखकर लता चीख पड़ी—'हे मेरे राम !' वह बोली—'तो आप भी ऐसे विचार रखते हैं ? आज की युवती को इस प्रकार रहस्यमयी मानते हैं।'

किन्तु अतुल का तीर तो उसके तरकस से निकल चुका था। अतएव, अब रुकने का उसके समक्ष कोई प्रश्न नहीं रह गया था। लता की बात सुनकर बोला—'और यही क्यों, आज की युवती स्वयं जल रही है। आग की भट्टी बनी है। मुझे लगता है कि वह स्वतः ही धधक रही है और धू-धू करके चटख पड़ी है।'

एकाएक लता चीख पड़ी—'अतुल बाबू ! भगवान के लिए इस बात को रोकिये। मुझे मत सुनाइये। आप मेरे भावी पति हैं।'

अतुल विषाक्त भाव से मुसकराया—'ये नाते भी आज जर्जर और कमज़ोर पड़ चुके हैं, लता रानी ! जब पुरुष और नारी के जीवन में भावना नहीं, अनुभूति और त्याग का स्थान नहीं, तो भला ऐसा शाश्वत बन्धन कैसे स्थिर रहेगा ? मैं तो आज के समाज को देखकर प्रायः चिन्तित और कुण्ठित हो जाता हूँ।' उसने कहा—'बात केवल तुम्हारी नहीं। एक अकेली तुम नहीं। जिनके पास साधन हैं, धन का अम्बार लगा है, वे इसी मार्ग पर बढ़े जा रहे हैं। कुदाल हाथ में लिये अपने जीवन की धरती खोद रहे हैं। सभी विलासिता में डूब चुके हैं। मुझे लगता है, समूचा समाज नाबदान में पड़े कीड़ों के समान अपने मन का जहर में छितरा रहा है।'

एकाएक लता के मुँह से निकला—'ओह ! निरे पाषाण ! निरे पत्थर !'

अतुल ने तीखे ढंग में कहा—'हाँ, मैं पत्थर भी हो सकता हूँ। परन्तु यह मत भूलो, मैं समाज के एक व्यक्ति का मत व्यक्त कर रहा हूँ। हम दोनों विवाह-बन्धन में बँधने जा रहे हैं ना, जीवन की भावी रूप-रेखा भी बनाने वाले हैं, तो तब, तुम्हें समझने के साथ, मुझे अपने को भी बताना अनुपयुक्त नहीं होगा।'

लता ने पेड़ का सहारा ले लिया था। सचमुच, उसकी यह कम-जोरी थी कि अपने मन के विपरीत कोई बात सुनना उसे कदापि पसन्द नहीं था। वह सीधी उसके मन पर चोट करती। उसे अनायास घायल भी बना देने में समर्थ होती। किन्तु तभी वह अपने विवेक से काम लेती हुई बोली—'देखिये, आप अपने ऊपर क्यों लेते हैं कि मैं पत्थर हूँ, पाषाण हूँ। मैं समाज के लोगों की बात कहती हूँ। उन्हीं को ऐसा मानती हूँ।'

किन्तु अतुल ने तब अपना मत नहीं दिया । वह पास पड़े पत्थर पर बैठ गया। उसी समय लता पास आ गयी। वह सब कुछ आगे कहने चली थी कि तभी 'बचाओ-बचाओ' का शोर उस पहाड़ी पर गूंज उठा। वह पत्थर से उठ खड़ा हो गया। जिधर से शोर उठा था। उस कर्कश और वेदना भरे स्वर सुनते ही अतुल सहसा रोमांचित हो उठा था, उधर ही भाग पड़ा। पीछे से लता चिल्लायी—अतुल जी·· अतुल बाबू···किन्तु अतुल नहीं सुन सका। वह भाग कर पहाड़ पर चढ़ गया। तभी उसने दूर से देखा कि एक जंगली बघेरा उस भिखारिनी पर झपटा है। उसने भिखारिनी के बच्चे को मुँह में दबा रखा है।

संयोग की बात थी कि अतुल की जेब में पिस्तौल था। उसने तुरन्त निकाला और वह बघेरा जब भागता हुआ उसी ओर आया, तो उसने पिस्तौल चला दिया। गोली निशाने पर लगी। बघेरा पछाड़ खा गया। किन्तु पास जाते-जाते अतुल ने एक गोली और छोड़ी और वह तड़-पता हुआ बघेरा क्षण भर में शांत हो गया। जब अतुल उसके पास पहुँचा, तो वह देखकर बरबस ही पीड़ित बन गया कि भिखारिनी का बच्चा जीवित नहीं था। बघेरे ने अपने तेज दाँतों से उसे कठोरता के साथ दबोच दिया था। किन्तु अतुल ने उस मरे हुए बच्चे को उठा लिया। जब उसने मुड़कर देखा तो उस औरत के पास खेतों पर काम करने वाले किसान आ पहुँचे थे। वहीं जाकर अतुल ने पाया कि बघेरे ने उस औरत को भी घायल कर दिया था। उसका शरीर कई जगह से लहू-लुहान बना था। लेकिन जब अतुल उसके मृत बच्चे को लेकर वहाँ पहुँचा, तो उसके कपड़े भी खून से भीग गये थे। परन्तु उसका ध्यान बच्चे की ओर था और उसकी माँ की ओर।

तभी एक किसान बोला—'बाबू, यह बड़ी दुर्भागी है। हमारे गाँव की है। अभी देर नहीं हुई कि इसका पति बीमारी में मर गया। इसके

घर में पूर्णरूप से अभाव आ गया। इसके पास कुछ जमीन थी, उसे नगर के एक लाला ने पहले ही ले लिया। वह उस स्थान पर फैक्ट्री खोलेगा।

अतुल ने कहा—'अरे भाई ! अब इस औरत की ओर देखो ! यह बच्चा नदी में बहा दो।'

एक व्यक्ति बोला—'हमने पहले चारपाई मंगाई है। इसे अस्पताल ले जाना है।

दूसरा बोला—'बाबू, आप भी चलें तो उपकार होगा। हम गरीबों की बात डाक्टर सुन नहीं सकेगा।'

अतुल उस बात को सुनकर कुछ उलझन में पड़ गया। वह कुछ कहता कि तभी उस औरत ने कठिनाई से कहा · 'बाबू, मै भी मर जाती, तो सुख पाती। इस मुसीबत से छूट जाती। आज चार दिन हो गये हैं, मेरे पेट में अनाज का एक दाना भी नहीं गया।' वह बोली—'आप जहाँ थे, वहाँ से मुझे जिस तरह की फटकार मिली, उसे सुनकर मैंने समझ लिया कि इस आदमी के मन में भगवान् नहीं बोलता।'

उसी समय एक युवक चारपाई ले आया। जब वे सब उस औरत को उस पर डाल कर ले जाने लगे, तो तभी एक वृद्ध बोला—'बाबू, इस औरत का आदमी बड़ा इज्जतदार था। भला आदमी था। सभी के काम आता था।' उसने कहा—'आप भी अस्पताल चलें तो उपकार होगा। बच्चा तो मर गया, परन्तु आपने उसकी माँ को बचाकर उपकार का काम किया। समूचा गाँव आपका ऋणी बन गया।'

निःसन्देह, उस समय अतुल उन लोगों के साथ जाने की स्थिति में नही था। उसका मन लता के पास था। अभी अब वह उसे कुछ तीखी बात सुना आया था। उसे पता था कि लता कोमल है। तनिक

सी बात पर कुम्हलाती है । किन्तु जब उस औरत को वे लोग उठाकर ले चले, तो अतुल को एक किसान ने फिर टंकोरा—'चलो बाबू !'

अतुल ने कहा—'भाई, मेरा क्या उपयोग होगा ?'

वह किसान बोला—'बाबू, आपने ही इस औरत को बचाया है । अब आगे भी आप मदद करें ।'

बरबस अतुल के मुँह से निकला—'अच्छा, चलो ! मैं तुम्हारे साथ हूँ ।'

जब वह चलने लगा तो एक युवक को लक्ष्य करके बोला—'इस पहाड़ की तलहटी में, उस पार एक परिवार है । वहाँ जाकर कह दो, अतुल नहीं आयेगा ।' उसने कहा—'उनसे बता देना कि मैं किसी उलझन में पड़ गया हूँ । इस मृत बच्चे को नदी में छोड़ देना ।' उसने अपनी खून से भरी कमीज़ उतार दी और कहा— 'बच्चा इसी में लपेट लेना और वह तब उन लोगों के साथ नगर की ओर चल दिया ।

वे किसान जिस रास्ते से चले, वहाँ से अस्पताल दूर नहीं पड़ता था । नगर और गाँव के मध्य वह स्थान था । कुछ समय बाद ही वे सब वहाँ पहुँच गये । छोटा अस्पताल था । जाते ही डाक्टर से अतुल ने बात की और वह स्त्री वहाँ दाखिल कर ली गई । तब सूरज छिप गया । अंधेरा हो गया । जब अतुल उस स्थान से चलने को उद्यत हुआ, तो उसने दस रुपये का नोट उस रोगिणी को दिया और कहा, तुम अच्छी हो जाओगी । बघेरे के दाँत और पंजे गहरे नहीं पड़े, वह ऊपर-ही-ऊपर खुरच कर रह गया ।

किन्तु औरत बोल नहीं सकी, वह फफक कर रो पड़ी । अतुल ने समझ लिया कि उसे अपना बच्चा याद आ रहा था । माँ का मन रो रहा था ।

किसानों के अनुरोध पर उस रात अतुल को उन्हीं के गाँव में रुकना पड़ा । नगर तक जाना उसके लिए सुगम नहीं था ।

बारह

लेकिन अगले प्रातः में अतुल एकाएक ही, अजीब प्रकार की परेशानी में फँस गया। जब प्रात:काल में वह उस महिला को अस्पताल मे देखने गया, तो उसका विचार था कि वह उस स्थान से शहर चला जायगा। किन्तु अस्पताल में जाकर देखा कि उस ग्रामीण औरत की अवस्था खराब थी। डाक्टर ने उसके लिए खून की मांग की थी। जब अतुल उस औरत के पलंग के पास जाकर खड़ा हुआ, तो वह बलात् फफक कर रो पड़ी। वह अतुल को देखकर बोली—'तुम्हारा सरीखा ही मेरा भाई था। देश के लिए फौज में लड़ते हुए मर गया, मेरा पति तो गया ही, भैया भी नाता तोड़ गया।'

उसी समय वहाँ डाक्टर आया और उसने अंग्रेजी में अतुल को बताया, यदि इस औरत को खून नहीं मिला, तो मर जायेगी। यह नही बच सकेगी। उसने कहा—'बाबू, यह औरत विपत्ति की मारी है। रात भर रोती रही। देखते हैं आप, भगवान् ने इसे कितनी सुन्दर शक्ल दे दी, परन्तु भाग्य की हेटी भी बना दी। सुनता हूँ निराधार है। गॉव के किसी व्यक्ति ने खून नही दिया। सभी को अपने प्राणों का भय सता गया।'

सहसा अतुल बोला—'आप मेरा खून लीजिये। इस औरत को जीवन दीजिये।'

डाक्टर ने कहा—'हाँ, आपका खून शुभ रहेगा।'

तभी अतुल ने उस औरत की ओर देखकर कहा—'चिन्ता न करो, मैं भी तुम्हारा भाई हूँ। मैं तुम्हारी सेवा में उपस्थित हूँ।' यह कहते ही, वह डाक्टर के साथ दूसरी तरफ चला गया। उसने अपना खून दिया। जब अतुल फिर उस औरत के पास आया, तो उसके मन में बात थी कि वह उसे आश्वस्त करेगा और शहर लौट जायेगा।

अतुल ने जाकर देखा कि खून चढ़ाया जा रहा था। एक नर्स उस औरत के पास खड़ी थी और उसे शान्त रहने के लिए कह रही थी। किन्तु जब उसने फिर अतुल को अपने पास आते देखा, तो बलात् और अधिक ज़ोर से रोती हुई बोली—'तो तुमने खून दिया है, मेरे लिए।' उसने कहा—'बाबू, इसका बड़ा मोल है। मैं गवाँर तो हूँ. परन्तु इतना समझती हूँ। आज से तुम्हीं मेरे सच्चे भाई हो।' उसने अतुल की ओर देखा—'कहो, हूँ न, तुम्हारी बहिन ! तुम्हारा खून मेरे शरीर में जा रहा है।'

सुनकर, अतुल एकाएक आकुल बन गया—'हाँ, तुम मेरी बहिन हो।'

'मैं तुम्हारी बहिन···तुम मेरे भैया !' बलात् वह बड़बड़ाई।

अतुल ने वहाँ से जाने का विचार करते हुए कहा—'तुम शान्त रहो। भगवान का नाम लो।'

किन्तु वह औरत तो दुखित थी, व्याकुल बनी थी। बरबस, उसने अतुल के हाथ पर अपना हाथ रख कर कहा—'बाबू, जाने तुम कौन हो ! कहाँ से आये हो।'

अतुल ने कहा—'अब मैं जाता हूँ। फिर आऊँगा। हो सका, तो शाम को आ सकूँगा।'

वह बोली—'बाबू, आये तो कृपा होगी। आपकी दया होगी।'

अतुल ने नितान्त आकुल बनकर कहा—'नहीं, नहीं, मैं आऊँगा।' और वह तभी उसके हाथ को थपथपा कर वहाँ से लौट पड़ा।

जब वह लगभग दो घण्टे बाद नगर में पहुँचा, तो घर जाते ही देखा कि वहाँ माँ उदास बैठी थी। उसके पास ही राधा थी। दोनों खिन्न और उन्मन बनी थीं। किन्तु जब अतुल वहाँ पहुँचा, तो वह उन दोनों के सामने खड़ा होकर बोला—'मैं एक विपत्ति में फँस गया था, माँ !' और तभी उसने सभी घटना ब्यौरेवार बता दी।

सुनते ही माँ ने कहा—'अरे, पगले ! किसी के हाथ खबर तो भेज देता। उस लता ने भी कहला कर नही भेजा ?'

अतुल ने क्षुब्ध बनकर कहा—'माँ, उन्हें तो मुझ पर रोष आया होगा। मेरे उस कृत्य से उनकी पिकनिक का मजा भंग हो गया होगा।'

माँ ने कहा—'वह पिकनिक अच्छी थी या एक मुसीबत मे फँसे प्राणी की मदद करना अच्छा था ?'

उसी समय अपने कमरे की ओर जाते हुए अतुल ने कहा—'माँ, वे लोग अमीर है। दूसरी धातु से बने है।' वह अपने कमरे के द्वार पर जा खड़ा हुआ और मुड़ कर बोला—'माँ कल की घटना से मै समझ गया कि मनुष्य कुछ नहीं है। पानी का बबूला है। किसी के इशारे पर चलता है। इसे चलाने वाला कोई और है।' वह कहने लगा—'माँ, तुम उस औरत को देखो, तो कहो, ऐसी सुहावनी शक्ल की इस मोहल्ले में दूसरी नहीं होगी। उसने मुझे अपना भाई बनाया है। लाओ, दूध दो, खून दिया है तो कमज़ोरी भी आ गयी है।'

उसी समय माँ ने राधा की ओर देखकर कहा—'बेटी, तुम दूध दो।'

राधा उठी और रसोई की तरफ बढ़ गयी। जब कुछ देर बाद वह दूध का गिलास लेकर अतुल के कमरे में गयी, तो वह अपने उन कागज़ों

को एकत्र करके बेग में रख रहा था, जिन्हें उस दिन अदालत में ले जाना था। राधा ने दूध का गिलास मेज पर रख दिया और लौट चली। किन्तु तभी अतुल ने उसकी ओर देखकर कहा—'राधा रानी, रुकोगी नहीं ? आओ, मेरी बात सुनो।' वह तब स्वत: ही राधा के पास बढ़ कर बोला—'राधाजी, आज मुझे लगता है, मैंने जीवन का कोई शुभ काम सम्पादित किया। उस औरत को बघेरे से बचाना तो एक आकस्मिक बात थी। परन्तु उसे खून देना मेरे मन की आस्था थी। ऐसा लगता है, मैंने कुछ पा लिया। रात उस गाँव में रहते हुए तुम्हारा भी कई बार ध्यान आया।'

उस समय राधा मौन थी। सिर झुकाये खड़ी थी। वह अपने पैर का अंगूठा ज़मीन पर चला रही थी। सदा की तरह उस समय भी संकोची बनी थी।

लेकिन अतुल ने कहा—'राधा देवी, ऐसा लगता है, प्रभू की इच्छा सर्वोपरि है। कल जिस असम्भावित घटना को मैं देख पाया, उस दुर्बल, निस्तेज नारी के सम्पर्क में एकाएक पहुँच गया, अब लगता है, उसके अविरल आँसुओं की धारा में समूचा ही बह गया। जिस भावना की, जिस अकल्पनीय मनोदशा की मैं कभी स्वप्न में भी झाँकी नहीं पा सका, वही सब कल संन्ध्या समय से आज प्रात: के समय तक पा गया। मुझे लगता है, मैं जीवन का एक अपूर्व सुख पाने में सफल हुआ। वह सुख धन के अम्बार पर बैठ कर नहीं मिल सकता। वैभव की गोद में जीवन बिता कर प्राप्त नही होगा। सचमुच, त्याग और सत्य का संचय करना ही जीवन की वास्तविक निधि है। मै वही तो उस नारी के सम्पर्क में जाकर पा गया।'

कठिनाई से राधा बोली—'दूध पीजिये, ठण्डा हो रहा है।'

किन्तु अतुल ने अपनी बात लेकर कहा—'राधा, मैं तुम्हारे इस त्याग को भी अपूर्व मानता हूँ, जाने किस जन्म के संस्कारवश तुम इस घर मे आती हो। माँ को सहारा देती हो। तुम मेरे प्रति भी ममतामय बनी हो।'

राधा ने कहा—'तो इसमें आश्चर्य क्या है? आपके पिताजी ने और माँ ने भी तो हमें सहारा दिया है। मुझे यहाँ आना अच्छा लगता है।'

अतुल बोला—'लेकिन ऐसे कब तक आओगी, राधा? एक न-एक दिन रुकना होगा। तुम्हें तो कही अन्यत्र अपने स्थान पर जाना पड़ेगा।'

राधा बोली—'जब जाऊँगी, तो चली जाऊँगी। विश्वास करो, मैं तब भी मांजी के पास आती रहूँगी।'

अतुल के मुँह से अनायास निकला-'ओह, अजीब असगति है, यह तो! जब तुम चली जाओगी-तो तब-सभी कुछ अटपटा लगेगा। सोच नही पाता, तब मुझे यह जीवन भी कैसा-कुछ लगेगा।' उसने कहा—'राधाजी, आज मेरा मस्तिष्क दुःख रहा है। मेरे मन में त्रास भरा है। आज तो कचहरी जाने को भी मन नही करता। मन होता है, लोगो से दूर रहूँ। केवल किसी अन्यतम आत्मीय के पास बैठा रहूँ। मन में आता है, तुम्हे न जाने दूँ। अपने पास बैठा लूँ।' वह बोला—'वह औरत जिस प्रकार रोती दिखायी दी, जितनी विचलित बनी, तो मैं सहज ही समझ गया कि वह ज़रूर अपने बच्चे के लिए रोती होगी। उस खूनी बघेरे ने जिस प्रकार उस मुलायम बच्चे को अपने तेज दाँतों में दबाया, तो वह तुरन्त मर गया था। लहू-लुहान हो गया था। मै पिस्तौल की गोली न चलाता, उस बघेरे को न मारता, तो ज़रूर, वह उस बच्चे को एक ही बार में खा जाता···उस औरत का बच्चा···'

एकाएक राधा चीख पड़ी—'आप रोते हैं, अतुल बाबू! आप···

और अतुल सचमुच ही रो पड़ा। वह उसी अवस्था में बोला—'राधा रानी, मैं तुम्हें कैसे बताऊँ, जीवन का वास्तविक पाठ मै रात ही पढ़ पाया। जीवन का सच्चा रूप भी अभी-अब दिखायी दिया।' उसने कहा—'मैं कल्पना नही कर सकता था, सोच नही सकता था कि इस जीवन में इतनी पीड़ा है, इतना ममत्व है और इतना हा-हाकार भरा है। उस औरत के आँसुओं ने मुझे सभी कुछ बता दिया।'

उसी समय बरबस ही राधा आगे बढ़ गयी। उसने अपनी साड़ी का पल्ला अतुल की बहती आँखों पर रख दिया और कहा—'मन के इस ममत्व को आँसुओं में मत बहा दो। इसे सँजो कर रखो।' और यह कहते ही, सहसा उसका मन भी दुखित हो आया। आँखें छलछला आईं। वह उसी अवस्था में बोली—'अतुलजी, इस घर आते-जाते, माजी के पास उठते-बैठते और कुछ किताबें भी पढ़ते-सुनते मैने समझा है कि यह जीवन एक पूजा है। एक निष्ठा है जिसका सम्बन्ध त्याग से है, अनुभूति से है, सरल और सुन्दर भावना से है।'

एकाएक उल्लसित बनकर अतुल बोला—'निश्चय ही, मैने अभी अब यह समझा है। प्रत्यक्ष देखा है।'

संयोग की बात कि उसी समय वहाँ माँ आ गयी। वह कमरे के द्वार पर आते ही बोली—'अरे, क्या हो गया है, तुम दोनों को! दोनों की आँखें तर हैं। आँसुओं से भरी हैं।'

तब एकाएक खुल कर रोती हुई राधा बोली—'मांजी, इन्हें समझाओ। रात की घटना से दुःखी हैं। रो रहे हैं।'

माँ और आगे बढ़ गयी। वह अतुल के पास जाकर बोली—'क्यों बेटा, एक दिन के करुण और कठोर दृश्य को देखकर ही तुम्हें रोना आ गया। देख तो, तूने इस राधा को भी रुला दिया।' उसने कहा—'बेटा, यह दुनिया दुःखों का घर है। यह इन्सान का जीवन समस्याओं से भरा

है। विषमताएँ जोंक की तरह इसका खून चूसती हैं। एक वह बेचारी औरत क्या, इस धरती पर जितनी औरतें हैं, सभी किसी-न-किसी रूप में त्रास पाती हैं। औरत की जिन्दगी ठीक ऐसी है कि जैसे बत्तीस दाँतों के बीच में तुम्हारी जीभ। औरत जन्म लेते ही सिर पर कफ़न बांधती है। फिर भी अपना जीवन मार कर दूसरों को जीवन देती है।'

अतुल ने मत नहीं दिया। उसने घड़ी की तरफ देखा और स्नान करने गुसलखाने की तरफ बढ़ गया।

उसी समय माँ ने राधा की ओर देखकर कहा—'देखा बेटी, यह है-मेरा अतुल ! बड़ा कोमल है, इसका मन। कभी किसी का दुःख नहीं देखा सो आज उसी को देख पाकर रो पड़ा।'

राधा ने कहा—'मांजी, ऐसी दुर्बल भावना धोखा भी देती है।'

मांजी ने तुरन्त ही व्यस्त बनकर कहा—'हाँ, हाँ, यह भी है। ऐसा आदमी क्या स्थायी मत का रहता है।'

राधा बोली—'परन्तु इस प्रकार के व्यक्ति किसी को ठग नहीं सकते। अपना नुकसान कर सकते है लेकिन दूसरे को आघात या क्षति नहीं पहुँचा सकते। बहुधा ऐसे आदमी अपना ही नुकसान कर बैठते है।'

उसी समय अतुल स्नान-गृह से लौट आया। वह कमरे में प्रवेश करते ही बोला—'माँ, मैं इस समय कुछ नहीं खाऊँगा। शाम को भी देर से आऊँगा।'

माँ ने पूछा—'क्या लता के घर जायेगा ?'

तुरन्त ही विकृत बनकर अतुल बोला—'नहीं माँ, मैं उस अस्पताल में जाऊँगा जहाँ वह औरत है। आज का दिन ही उसके लिए खत-रनाक है।' उसने कहा—'यदि मेरे मुकद्दमे न होते, तो वहाँ रहता। मेरे लौटते समय उस औरत को कष्ट हुआ था। सचमुच वह अकेली है। निराधार है।'

माँ ने कहा—'कचहरी से घर आना। मैं भी चलूँगी।'

राधा बोली—'मैं भी चल सकूँगी।'

अतुल सहज भाव से मुसकराया—'तब तो उस औरत को राहत मिलेगी। वह भी समझ सकेगी कि उसका भी इस दुनिया में कोई है ! वह अकेली नहीं है।'

अतुल ने कपड़े पहिन लिये, दूध भी पी लिया। तभी वह अपना बैग लेकर मकान से निकल गया। उसी समय राधा भी अपने घर की ओर चल पड़ी। जब वह अपने घर की ओर जा रही थी तो उसके मन में बात थी, सचमुच, अतुल बाबू की माँ ने ठीक कहा कि उसका पुत्र नितान्त कोमल है। भावुक भी अधिक है। किन्तु इतना कहते, बरबस ही उसके मानस में ऐसा उदास भाव आया कि जिससे उसे चेतना या स्फुरण का उत्साह नहीं मिला। घर में आकर उसने स्कूल जाने की तैयारी की और माँ से बोली—'खाना रखा है, मां ! खा लेना। मैं शाम को देर से भी आऊँ तो चिन्ता न करना।'

मां ने पूछा—'क्यों, कहीं जाना है, क्या ?'

राधा ने तुरन्त कह दिया—'हाँ, अतुल बाबू की मां के साथ कहीं जाऊँगी।'

जब वह स्कूल चली, तो तभी उसके मन में बात आई कि माँ से यह क्यों नहीं कहा कि अतुल बाबू के साथ जाऊँगी ? वह स्कूल पहुँच गयी। क्लास में छोटे-छोटे बच्चों के शोर में खो गयी। किन्तु तब भी राधा के मन में कोलाहल था। आश्चर्य कि बाहर और क्लास के कमरे में होता हुआ बच्चों का शोर उसे तनिक भी सुनाई नहीं दे रहा था। मानो उसके मन:प्रदेश में उठे हा-हाकार के समक्ष वह नगण्य था। और स्थिति यह थी कि जब बच्चों को डाँटा नहीं गया, उन्हें चुप बैठने के लिए नहीं कहा गया, तो वे अविराम गति से उछल-कूद कर रहे थे। शोर-शराबा कर रहे थे।

तभी एक छोटी-सी बच्ची राधा के पास आयी और बोली—'मुझे रामू मारता है।'

तब सहसा, मानो अनजाने में राधा ने कह दिया—'अच्छा, अच्छा, तू जा, मैं उसे मारूँगी।'

लेकिन उसके मन में बात उठी थी, सच ही कहा, अतुल बाबू की माँ ने, इस औरत का जीवन भी समस्याओं से लदा है। विषमताएँ इसे घेरती हैं। और तभी, उसके मानस में एकाएक ही जैसे चीत्कार उठा, एक लगा बँधा प्रश्न उसके समक्ष आ गया कि अब उसका क्या होगा। उसे पता था कि जल्दी ही, मां ने उसके विवाह का निश्चय कर लिया था। एक जगह उसने बात भी चलायी है और वहीं उस राधा को भेज देने का विचार कर लिया है। किन्तु इतनी बात आते ही, वह एकाएक विषाक्त बन गयी। वह व्यस्त बनकर बोली, मैं यह सब कैसे कर सकूँगी। मैं कहीं नहीं जाऊँगी। जहाँ हूँ, जैसे हूँ, उसी प्रकार पड़ी रहूँगी।

तब ? तब क्या वह अविवाहित रहेगी ? या उस अतुल बाबू से.........?

राधा के मन में प्रश्न उठा। लेकिन तभी उसने अत्यन्त कठोर बनकर कहा, मैं अतुल बाबू से कुछ नहीं कहूँगी। वह धनिक घर का लाडला है, तो धनिक बाप की बेटी से सम्बन्ध बनाना ही पसन्द करता है। तब मैं कैसे उसे रोक लूँगी। न, न, ऐसा अपराध नहीं कर सकूँगी।

उसी समय दूसरी अध्यापिका ने आकर कहा—'राधारानी, क्या आज बच्चे मुक्त कर दिये हैं शोर मचाने के लिए ! देखो तो, कैसा हुड़दंग कर रहे हैं।'

तुरन्त ही राधा सचेत हो गयी और मेज़ पर हाथ मार कर बोली—

'अच्छा, सब किताब खोलो। किसी के मुँह से बोल न सुनूँ, चुपचाप किताब पढ़ो।'

किन्तु राधा को स्कूल में आये अभी दो घण्टे से अधिक नहीं बीते थे कि तभी पड़ोस का एक लड़का आया और बोला—'तुम्हें अतुलबाबू बुलाते हैं। वे कचहरी से घर लौट आये हैं।

राधा उठ चली। जब वह पहुँची, तो देखा, माँ-बेटा तैयार थे। वह भी उनके साथ चल पड़ी। एक घण्टे बाद जब वे सब उस अस्पताल में पहुँचे, तो अतुल को देखते ही डाक्टर ने कहा—'ओह, आ गये आप ! भगवान का शुक्र है। जाइये, उस औरत के पास। बस, कुछ क्षणों की मेहमान है।'

वे तीनों तेज़ी से उधर ही बढ़ गये। जाकर देखा, तो सचमुच, उसकी अवस्था खराब थी। उसने सभी को हाथ जोड़ दिये। राधा को लक्ष्य करके वह बोली—'तुम भाभी हो न मेरी, बाबू की दुलहन ! बड़ी भाग्यवान हो। कहो, हो न, मेरी भाभी, मेरे इस भैया की बहू, मेरा प्रणाम लो।'

बरबस, अतुल की मां के मुँह से निकला—हाँ, यह तुम्हारी भाभी है।

—

तेरह

उस दिन, एकाएक ही, अतुल की माँ ने अस्पताल पहुँच कर जिस करुण और हृदयद्रावक दृश्य को देख पाया, कदाचित् जीवन में ऐसा उसने भी नहीं देखा था। सचमुच, उस नारी को देखकर उसे भी रोना आ गया। जब उस नारी की अन्तिम साँस टूट रही थी, तो उससे क्षण भर पूर्व ही, उसने राधा की ओर देखा और कहा—'तुम्हारे इस पति ने मुझे खून दिया है। मैंने इन्हें अपना भैया बनाया है। तुम दोनों का मिलन सुखी रहे, मैं इसकी कामना करती हूँ।' और तभी वह अतुल की ओर देखकर बोली—'मेरा तो सभी कुछ छिन गया। परन्तु मेरे इस अन्त समय पर तुमने जिस प्रकार मेरी मदद की, इसकी याद मैं साथ लिये जाऊँगी। तुम्हारी तरह यह भाभी भी सरल है। भली लगती है। इसे कभी कष्ट न देना।' और उसने जाने किस अज्ञात भावना के साथ, अतुल के हाथ पर राधा का हाथ रखते हुए कहा—'जीवन भर ऐसे ही मिले रहना। अलग न हो जाना।' और तभी उन सभी के देखते-देखते उसका प्राण-पंछी उस शरीर से नाता तोड़कर कहीं दूर पंख पसार कर उड़ गया।

उस रात में बहुत देर गये अतुल नगर में लौटा। उसे श्रम भी अधिक करना पड़ा। उस नारी की चिता चिनना और उसमें आग

बोला—'बस, इतना-सा है, यह जीवन ! किसी का दूर तक चलता है, किसी का चलते ही रुक जाता है। इसी का नाम मौत है।'

संयोग की बात कि अतुल की माँ भी श्मशान में एक स्थान पर बैठी थी। राधा ने अतुल के साथ सक्रिय सहयोग दिया था। जब वह कफन और अर्थी लेने बाजार में गया, तो तब वह भी साथ थी। किन्तु उस सन्ध्या में उसने अनुभव किया कि सचमुच, वह अतुल वकील तो वन गया, बहुत-सी किताबें भी पढ़ गया, परन्तु जैसे बिल्कुल ही नादान है, बच्चा है। वह अत्यन्त भावुक और सरल है। यह स्पष्ट था कि उसे केवल अस्पताल के चार आदमियों का सहयोग मिला। उसमें दो आदमी उसी गाँव के थे। उनका भी कोई बीमार वहाँ पड़ा था। जब वह औरत चिता पर रख दी गयी, तो वे लौट गये। किन्तु अतुल, उसकी माँ और राधा देर तक वहाँ रहे। उसी समय राधा ने देखा कि अतुल दो-तीन बार काँपा था। वह जैसे खुलकर रो पड़ने के लिए सन्नद्ध था। एक बार तो वह सचमुच ही अधिक व्याकुल दिखायी दिया। तभी-तब, राधा ने पास बैठ कर कहा—'कुछ मन में है क्या ? कोई परेशानी है ?'

अतुल ने कहा—'राधा, मुझे लगता है, अन्ततः यह मानव दीन है और पराश्रित है। सोच नहीं पाता कि ऐसा अस्थिर जीवन पाकर भी यह इन्सान दम्भी क्यों है। बर्बर और क्रूर क्यों ! देखता हूँ सभी स्वेच्छाचारी हैं और अपने स्वार्थ का पेट भरते हैं। इन्सानियत की छाती पर बैठे भैरव राग अलापते है।' वह बोला—'अब मुझे लगा कि यह मौत तो नगण्य है। किन्तु आदमी नित्य ही अपने मन की अदालत में अभियुक्त बनता है।'

उसी समय राधा विषाद भाव से मुसकरायी—'लेकिन इस श्मशान में आपके मन में ऐसा भाव क्यों है ? समझ लीजिये, पाप-पुण्य का ठेकेदार यह आदमी, स्वतः ही अपना पतन करता है, इस सुहावने जीवन का गला घोटता है।'

तुरन्त ही, मानो आतुर बनकर अतुल बोला --'हाँ, यह सत्य है।' उसने कहा—'यह कहने का भी एक अर्थ है, राधाजी! चिता में जलती हुई नारी समाज की स्वेच्छा का शिकार बनी है। मुझे कल रात ही गाँव के एक युवक ने बताया था कि यह औरत अमानवीय तत्वों का भी शिकार बनी थी। इसका पति देश के लिए मरा और यह बेचारी अपने रूप के कारण घायल हो गयी। गाँव के जमीदार ने इतना दबोचा, इतना परेशान किया कि अन्ततः भिखारिन बनी और इस चिता पर असमय ही सो जाने के लिए विवश हो गयी। मैने तो यह भी सुना कि यह बेचारी बलात्कार की शिकार बनायी गयी थी।'

एकाएक राधा ने क्षुब्ध बनकर कहा—'अतुल जी, आदमी जंगली है, इस औरत के लिए पिशाच है।'

बरबस अतुल और अधिक व्यस्त बन गया। वह बोला—'निःसन्देह, आदमी ढोंगी है। व्यर्थ ही धर्म और अनुभूति का राग अलापता है। समाज को धोखा देता है और अपने को धोखा देता है।' तभी उसने बताया—'आज एक और अप्रिय घटना घट गयी। लता के पिता का मुंशी मेरे पास आया था। कह गया था कि मैं उनसे मिल लूँ। शाम को उनके घर भी ज़रूर आऊँ। परन्तु मै न उनसे कचहरी में मिल सका। न घर गया। ज़रूर, उन्हें यह अच्छा नहीं लगा होगा।'

राधा ने कहा—'आपको जाना था। लता भी प्रतीक्षा में होगी।'

अतुल ने बात सुन ली, परन्तु अपना मत नहीं दिया। वह कुछ क्षण रुक कर बोला—'राधाजी, मेरा तो मन करता है कि यह वकालत का काम छोड़ दूँ। मै जब कल गाँव में गया तो देखा, सचमुच, वहाँ अन्धेरा है। वहाँ का समाज अन्ध-कूप में पड़ा है। पुरुष त्रस्त है, तो नारी भी त्रस्त है। इस नारी का पतन देखकर मेरा मन व्याकुल बना है।' उसने कहा—'जिस कचहरी में जाकर वकील लोग रुपया उपार्जित

करते हैं, वह अधिकांशतः ग्रामीण लोगों की जेब से निकाला जाता है। मेरा मत है, नगर का पढ़ा-लिखा समाज उन्हें ठगता है। डाकू की तरह उस भोले समाज का शोषण करता है।'

राधा सरल भाव से मुसकरायी—'तब आप सफल वकील नही बन सकते। रुपया भी उपार्जित नहीं कर सकते।'

अतुल ने अपने स्वर पर जोर दिया—'हाँ, मैं ऐसा रुपया पाना नहीं चाहता। मजदूरी करके अपना जीवन चला लूँगा। मेरा मत है कि वकील अपनी आत्मा का सत्य बेचता है। यह पढ़ा-लिखा और सजा-सजाया मनुष्य अपने मन के खोल में राक्षस छुपाये रहता है। लता के पिता अधिकतर रुपया ग्रामीणों से प्राप्त करते हैं। उनके मुकद्दमे भी प्रायः झूठे होते है।'

राधा खिलखिला पड़ी—'अरे, आप साधु तो नहीं बनना चाहते? तब तो वह लता अपना सिर धुनेगी।'

अतुल ने कहा—'उस लता को किस बात की चिन्ता है? उसके पिता के पास लाखों रुपया है। वह सभी बेटी का है।'

तब तुरन्त ही, जैसे अज्ञात भाव में राधा कह बैठी—'तो क्या इसीलिए आप उस लता से विवाह करना चाहते है? तब तो आप भी रंगे सियार हैं। पूरे दुनियादार हैं। कथनी और करनी में अन्तर रखते हैं।'

एकाएक अतुल तिलमिला गया—'राधाजी······'

राधा ने कहा—'देखिये, मैं बहस नहीं करती। यह आपका व्यक्तिगत मामला है। परन्तु जब बात कही, तो मैं भी अपना मत दे बैठी हूँ। साधुता की बात करने वाला जब व्यवहार में कठोर हो, कुटिल हो, तो भला उसे और क्या कहा जायेगा?'

अतुल ने कहा—'राधा, आज तुमने मेरे मुँह पर तमाचा मारा है।'

राधा उठ खड़ी हुई और बोली—'आइये, अब चलें। मांजी भी प्रतीक्षा

में है । चिता जल चुकी ।' उसने कहा—'मेरा कहना असंगत या अभद्र हो, तो क्षमा मांगती हूँ । परन्तु मैं सोच नहीं पाती कि अतुल इतना बहुरूपिया क्यों है ! आखिर क्या-कुछ भरा है, इसके अन्तराल में !' और वह तभी उस ओर चल पड़ी जहाँ अतुल की माँ बैठी हुई थी । जब वे सब नगर की तरफ लौटे, तो रास्ते में, घर तक न राधा कुछ कह पायी और न अतुल ही अपनी ओर से कुछ कहने को उद्यत हुआ । वे दोनों गम्भीर थे और भारी बने रहे ।

लेकिन जब रात मे राधा अपने बिस्तर पर पडी थी, अशान्त और उन्मन बनी थी, तो उसे स्वयं इस बात पर आश्चर्य था कि कैसे वह इतनी भारी बात अतुल बाबू से कह सकी । सचमुच, यह सब उसके स्वभाव के विपरीत था । अपनी ओर से कुछ कहना उसे कभी संगत नहीं लगा । यद्यपि वह नित्य ही अतुल के घर जाती, उसके कमरे की वस्तुओं को भी तरीके से रख देना पसन्द करती, परन्तु उसके मन में ऐसा कदाचित् कभी नहीं आया कि अतुल बाबू अपनी प्रतिष्ठा के प्रतिकूल चलकर लता को छोड़ उसकी ओर बढ़ आएं । वह स्वयं समझती थी कि विवाह के प्रश्न पर आकर आदमी कई प्रकार की बातें देखता है । खानदान, उसकी प्रतिष्ठा, प्रचुर दहेज पाने की आकांक्षा, और सुन्दर लड़की आदि ये सभी बातें जब राधा के पास नहीं, तो वह किस आधार पर, किस दम्भ पर यह चाहे कि अतुल बाबू उसे मिलें । यह उसकी विवशता है, बचपन का स्वभाव है कि उस घर जाना पसन्द करती है । वह इस बात की भी आकांक्षा रखती है कि अतुल बाबू को देखे, अवसर मिले, तो कुछ बात भी करे ।

किन्तु जब उस रात में वह सो नहीं सकी, तो सदा की तरह, तब भी उसके मानस में प्रश्न बार-बार उठा, आखिर क्यों जाती है वह ? किसलिए अतुल बाबू से मिलना पसन्द करती है ?

निःसन्देह, इस बात का स्पष्ट उत्तर उस रात में भी राधा नही

दे रही थी। कदाचित् ऐसा कहने में असमर्थ थी। इसी से, वह व्याकुल थी। अपने को असमर्थ और असहाय पाती थी। हाय ! वह जाने अपने लिए कितनी निर्मम और विषम बन चुकी थी। उसके मन में बार-बार यह बात आ रही थी कि आखिर वह कौन है, क्या अधिकार रखती है, अतुल बाबू से इतनी कठोर बात कहने का ? उसने व्यर्थ ही एक सरल हृदय के मर्मस्थल को छू दिया। उसे पीडित किया।

इसका दुष्परिणाम यह हुआ कि राधा स्वतः ही कुण्ठित और व्यथित हो गयी। उसकी मानसिक स्थिति इतनी दयनीय बनी, कि लगा, कोई उसके मन को कचोट रहा था। जैसे उसके अन्दर कोई राक्षस आ बैठा था और वह उसे लील जाने के लिए आतुर बना था। फलस्वरूप, राधा में बरबस ही कम्पन आ गया। उसका सिर भी दुखने लगा। जब प्रातः के चार बजने का समय हुआ, तो उसकी माँ जाग गयी। वह राम-नाम का उच्चारण करने लगी। किन्तु जब उस वृद्धा ने सहसा राधा का स्वर सुना, उसे कराहती पाया, तो वह चौंक उठी। तुरन्त ही अपनी चारपाई से बोली—'अरी, राधा ! क्या बात है ? क्या सोयी भी नही ? बड़ी जल्दी जाग गयी।'

बरबस राधा ने कहा—'माँ, सिर में दर्द है।'

सुनते ही माँ उठ आई। उसने जैसे ही राधा के माथे पर हाथ रखा, तो वह चमक कर बोली—'अरी तुझे तो बुखार है।'

कठिनाई से राधा बोली—'मेरा सिर शाम से दुख रहा है, माँ !'

माँ ने कहा—'अरी राधा ! अब तुम से क्या कहूँ मैं ! तू सयानी है, समझदार है। मैं बुढ़िया हूँ, अशक्त हूँ।'

राधा बोली—'माँ तुम्हें मुझ पर अधिकार है। तुम मेरी माँ तो हो ही, पिता भी हो।'

तब सहसा माँ के मुँह पर पेट की बात उतर आयी—'बेटी, मुझे तो अब यह भी अच्छा नहीं लगता कि तू अतुल बाबू के घर आये-जाये। रात जाने कहाँ-कहाँ गयी !'

राधा बोली—'रात तो अतुल बाबू की माँ भी साथ थी।' और उसने तब उस औरत की कहानी बता दी। तभी उसने कहा—'माँ, अतुल बाबू भले है। कल तो सचमुच ही उन्होंने पुण्य का काम किया था।'

किन्तु राधा की माँ उस बात को सुनकर भी कुण्ठित हो गयी। वह अत्यन्त विषाक्त भाव से बोली—'बेटी, भले-बुरे की परख तो मैं कर चुकी। मैं कुछ कहती नहीं हूँ तो क्या, सब समझती हूँ, अतुल की, और उसके मन की बात।' उसने कहा—'जब पिछली बातें मेरे मन पर आती हैं, तो साँप लोट जाता है। तब तो मुझे लगता है, इस धरती पर न धर्म है, न न्याय है। तेरे बचपन में ही अतुल की माँ ने कहा था कि राधा मेरी है—मेरे घर की बहू है। मैं कहती हूँ जब उसका लड़का जवान हो गया, वकील बन गया, चार पैसे कमाने लगा, तो वह पिछली बात क्या सचमुच भुला दी उसने ?'

कठिनाई से राधा बोली—'यह सब क्या है, माँ ! समझती तो हो, समय के साथ आदमी बदलता है।' उसने कहा—'तनिक अपनी ओर भी देखो। तुम्हारे पास पैसा होता, अतुल बाबू गरीब होते, तो क्या अपनी बेटी का हाथ उनके हाथों थमा देती।'

माँ ने अपने मुँह का थूक सटका और कहा—'बिटिया, सत्य और न्याय का पलड़ा झुक नहीं सकता। जब दो भले परिवारों में एक बात हो गयी, तो क्या उसे मिटाया जायेगा ?'

पीड़ा के साथ राधा मुस्करायी—'माँ, ऐसी बातों को मन में नहीं रखा जाता। बचपन की बात थी, उसके साथ चली गयी।'

किन्तु इतना सुनकर, राधा की माँ एकाएक ही क्षुब्ध हो उठी। वह तपाक से बोली—'पता है, मै क्यों तुझे उस घर जाने की छूट दे बैठी। मैं सदा ही कड़वा ग्रास सटकती रही। केवल मन में यह बात रही कि कही अतुल बाबू की मां यह न समझ ले कि मैं लड़की की माँ बनकर ग़रूर करती हूँ। सोचा, वह भी बुढ़िया है, अकेली है, बेटी दो काम में हाथ बटा आयेगी, तो इज्जत नहीं घट जायेगी। मैं सदा मन में यह बात भी लिये रही कि अतुल की माँ कुछ कहे। सम्बन्ध आगे बढ़ाने के लिए उत्सुक बने। पर मैं समझ गयी, वह बुढ़िया भी साँप की मौसी है। उसे भी दौलत चाहिए। बड़े घर की बहू चाहिए, अपने लड़के के लिए।' यह कहते ही वृद्धा एकाएक लाल पड़ गयी। वह क्रोध से काँपने लगी।

कदाचित् यह देख कर ही राधा सहम गयी। वह एकाएक कुछ नही कह सकी।

लेकिन उसकी माँ बोली—'उस दिन जब मैने तेरे विवाह की बात चलाई और कहा कि एक लड़का देखा है तो अतुल की माँ ने एक बार भी यह नहीं कहा कि राधा तो हमारी है, इस घर की बहू है। इसके लिए लड़का देखने की जरूरत नही।' उसने अपने स्वर में तेज़ी लाकर कहा—'देख, राधा ! यह प्रातः का समय है। मेरा बुढ़ापा है। यह घर भले ही गरीब हो, परन्तु यह समझ ले. तेरे बाप के कारण अब भी नगर का समाज इस घर को इज्जत की निगाह से देखता है। इसलिए आज मैं साफ कहे देती हूँ कि अब उस घर न जाना। अतुल बाबू से न मिलना। मुझे इसी महीने में सगाई कर देनी है, अगले महीने तेरा विवाह। फिर तू जाने और तेरा आदमी जाने, कही भी जाना, कहीं भी आना।'

उस समय राधा को पसीना आ रहा था। उसे बोलने में कष्ट हो रहा था। जब माँ ने अपनी बात कही, तो वह रुक नहीं सकी। तुरन्त बोली—'माँ, बात तुम्हारी है और अतुल बाबू की माँ की, मुझे क्यों रोकती हो ? इस कच्ची हँडिया को बीच रास्ते में क्यों फोड़ देना

चाहती हो ?' उसने माँ की ओर देख कर कहा—'माँ, मैं अब भी कहती हूँ, अतुल बाबू की माँ सरल है। मुझे अत्यन्त स्नेह करती है। किन्तु पुत्र के सामने वह माँ भी हार मान चुकी है।'

तीखेपन से राधा की माँ बोली—'तो हमें क्या ! जब माँ को बेटे पर अधिकार नहीं, बेटा कहने मे नहीं, तो मैं अपनी बेटी की आबरू नहीं बिखेर सकती। भाप की-सी आब है लड़की की जाति की, फूँक मारते उड़ जाय···। हाँ, कह देती हूँ, इस धरती पर सौ दुश्मन हैं और सौ दोस्त, ज़रा भी किसी ने मुँह का जहर उगल दिया, तो तेरी ज़िन्दगी का नाश हो जायगा···कोई भी भला लड़का इधर नहीं आयेगा······

राधा स्वतः ही क्षुब्ध हो गयी। परन्तु वह बुखार में तप रही थी, अतएव, उस अवस्था मे मुँह पर कपड़ा डाल कर चुप रह गयी।

चौदह

परन्तु अतुल में एकाएक ही परिवर्तन आया। उसके दैनिक कार्य-क्रम में भी हेर-फेर पड़ गया। वह समाज में होने वाले जिन अपराधों की अदालत में वकालत करता, अब उसके प्रति अरुचि प्रकट करता। इसका परिणाम यह हुआ कि उसने चोरी, छुरेबाजी अथवा ब्लैक-मेल करने वाले व्यक्तियों के मुकदमे लेने से इन्कार कर दिया। कदाचित यही देखकर, एक दिन अवसर पाकर मुन्शी ने अतुल की माँ से कहा—'माँजी, मुझे लगता है, बाबू संन्यास लेना चाहते हैं, इस वकालत से ! इस धरती पर मनुष्यों की जगह देवताओं को देखना पसन्द करते हैं।'

सुनकर, अतुल की माँ ने विस्मय से मुन्शी की ओर देखा। उसने बात का अर्थ नहीं समझा।

किन्तु मुन्शी ने कहा—'अब वकील साहब समाज के अपराधों को अच्छा नही मानते। ऐसे मुकदमे नहीं लेते। कहते हैं, जो अपराधी हैं, समाज के कोढ़ हैं, उन्हें नष्ट होना चाहिये।' वह बोला—'कैसी बात है कि बाबू इस छोटी-सी बात को नहीं समझते कि पैसा ऐसे ही लोगों से मिलता है ! जो समाज में चोर-बाजारी करता है, डाकू व चोर

बनता है, वकीलों को उन्हीं से मुँह-माँगा रुपया प्राप्त होता है। अदालत मे ऐसे ही लोगो का जमाव होता है।'

इतनी बात सुनी, तो अतुल की माँ चुप रह गयी। वह एकाएक कुछ बोल नहीं सकी। यद्यपि चोर उसके भी मन में था। उसे भी खटक रहा था कि उसका अतुल कुछ बदल रहा है। ज़िन्दगी में नया मोड़ ले रहा है। अब वह खाने मे और कपड़ा पहनने में भी तल्लीनता नहीं दिखाता। पहिले की तरह माँ से नही कहता कि आज वह खीर खायेगा, अथवा फलां चीज़ खाना पसन्द करेगा।

मुन्शी अपनी बात कह कर चला गया। किन्तु वह अतुल की माँ के समक्ष एक समस्या खड़ी कर गया। उस माँ ने यह भी देखा कि अब राधा भी उसके पास पहिले के समान नही आती। कभी आती है, तो कुछ देर बैठ कर चली जाती है। अतुल के कमरे में भी पहिले की तरह नहीं जाती। लेकिन यह बात उस माँ की दृष्टि में गौण थी। उसे पता था कि राधा की माँ ने लड़का देख लिया है और जल्दी ही राधा की सगाई हो जायगी। इसलिये राधा अब इस घर पर पहिले के समान नहीं आ पाती, तो यह उसका अपराध नहीं था। परन्तु जब-तब यह बात उस माँ के मन को कचोटती कि क्या सचमुच, अब वह राधा दूसरे घर की हो जायगी? वह इस घर की बहू नहीं बनेगी? उसकी इच्छा पूरी नहीं होगी? निःसन्देह, वृद्धा किसी को भी अपना मन नहीं दिखा पाती थी कि एकान्त रूप से उस राधा को ही अपनी बहू बनाने के लिये आतुर थी। लेकिन पुत्र की इच्छा के समक्ष उसकी इच्छा महत्वपूर्ण नहीं थी।

उन्हीं दिनों अतुल की माँ को यह सुनकर भी आश्चर्य हुआ कि उसका अतुल लता के घर भी नही आ-जा रहा था। यद्यपि वह नित्य ही रात में देर से लौटता। अब वह पहिले की तरह माँ से बात भी नहीं करता। घर आया, खाना खाया और कमरे में किताब लेकर पड़

गया । प्राय: पढ़ते-पढ़ते ही सो गया । किसी-किसी दिन उसका दूध भी रखा रहता । अतुल की माँ यह भी देखती कि राधा आयी, तो निश्चय ही, वह अतुल की प्रतीक्षा करती । उसके कमरे की ओर देखती । द्वार पर आहट पाती तो चौकती । किन्तु जब देर तक भी वह अतुल को आता न देख पाती, तो लौट जाती । कदाचित् उन दिनों उसे माँ से निर्देश मिला होगा कि घर जल्दी लौट आये । यद्यपि राधा का दैनिक आने का सिलसिला बन्द हो गया था, फिर भी, वह उस घर आकर निश्चय ही यह चाहती कि अतुल के लिए खाना वह स्वय बनाये । उस खाने मे कोई-न-कोई वस्तु बना कर रख दे । किन्तु राधा की उस अभिरुचि को देखकर ही माँ कहती—'बेटी, मैं सोच नही पाती कि अतुल अब क्या कुछ बन रहा है ? न खाने में रुचि दिखाता है, न पहनने में । मुंशी कहता है, अब वह वकालत का पेशा भी करना नहीं चाहता । यह घर का पैसा कब तक चलेगा ?'

कई दिन के बाद, जब सन्ध्या समय राधा उस घर आई, तो उसके हाथ में एक पलग की काढ़ी नयी चादर थी । उसको देखकर अतुल की माँ बोली—'अच्छा है, विवाह के लिए अभी से तैयारी कर ली जाय ।'

सुनकर, राधा हँस पड़ी—'ताई, तुम्हें विवाह की बड़ी उत्सुकता है । मैं गयी, तो फिर दिखाई भी नहीं दूँगी !'

ताई बोली—'यही सिलसिला है, औरत की ज़िन्दगी का । फिर क्यों आयेगी ? अपना घर सम्भालेगी ।'

राधा वहाँ से उठी और अतुल के कमरे में पहुँच गयी । वह देखकर चकित हो गई कि सभी कुछ अस्त व्यस्त था । कही किताबों का ढेर, कहीं कपड़ों का । उसे लगा कि मेज़ पर भी कई दिन से कपड़ा नहीं फेरा गया । अतएव, उसने तुरन्त ही सब चीज़ों को करीने से रखना शुरू कर दिया । जब वह सफाई कर चुकी, तो अतुल के पलग के पास गयी और पुरानी चादर को हटाकर साथ लायी नयी चादर बिछा दी । वहाँ से

निकल कर उसने अतुल की माँ से एक-दो बात की और फिर अपने घर की ओर चल पड़ी।

जब रात में अतुल घर लौटा, तो अपने कमरे को और पलंग की चादर को देखकर तुरन्त माँ के पास गया और बोला—'कौन आया था, माँ? क्या राधा?'

माँ ने कहा—'हाँ, राधा आई थी।'

'तो वही मेरे पलंग पर भी चादर बिछा गयी?'

माँ ने बात सुनते ही अचरज किया और कहा—'बड़ी नादान है, यह राधा! उसका विवाह सिर पर है और जाने कितने परिश्रम से काढ़ी हुई चादर यहाँ बिछा गयी।'

अतुल ने पूछा—'तो उसका विवाह कब है, माँ?'

माँ ने कहा—'अभी निश्चय कहाँ हुआ है?' वह बोली—'आज-कल राधा भी यहाँ कम आती है। लगता है, बेचारी का मन बुझ गया। उसके अरमानों का किला ढह गया।'

अतुल ने बात सुन ली और अपना मत नहीं दिया। वह फिर अपने कमरे की तरफ लौट गया। उसी समय माँ ने खाना लगाया और अतुल की मेज़ पर जाकर रख दिया। जब माँ लौट चली, तो अतुल बोला—'सुनो माँ, इस राधा के विवाह पर तुम्हें कुछ विशेष खर्च करना होगा। सचमुच, उसे इस घर से अनुराग है।'

माँ ने सहारा पाया, तो कहा—'अरे, पगले! इस घर के लिए प्राण देती है, वह राधा! पर तू है, न मेरी सुनता है, न उस राधा की ओर देखता है। और मैंने कितनी बार कहा कि हमें पैसा नहीं चाहिए। पात्र चाहिए।'

अतुल बोला—'माँ, वह लता भी बुरा पात्र नहीं।' और उसने बताया—'आज मिले थे, लता के बाबूजी! मैं इधर कई दिन से उस

घर नहीं गया। अतः उनके साथ जाना पड़ गया। उन्हें स्वयं तो पिकनिक के बीच से तिरोहित हो जाना बुरा नहीं लगा, परन्तु लता को मेरा कृत्य संगत दिखायी नही दिया। अतएव, आज जब उस ओर गया तो वह एकाएक मेरे पास नही आयी। मुझे स्वयं ही उसके कमरे में जाना पड़ा।'

एकाएक माँ ने झल्लाकर कहा—'तू यह सब मुझसे क्यों कहता है, रे ? मुझे अच्छा नही लगता।'

खाना खाने बैठते हुए अतुल हँस दिया—'माँ, तू पुराने जमाने की है न, तो बुरा लगता है। परन्तु यह समझ ले, आजकल की लड़कियों और बहुओं के मिजाज का पता नहीं चलता ! मैं जब उस लता के कमरे में गया तो वह छूटते ही तमतमा उठी और रो पड़ी। अब तुम्ही कहो, यह औरत का कौन-सा रूप था ?'

वहाँ से लौटती हुई माँ बोली—'मैं कुछ नहीं जानती। मैने तो इस घर के लिए जिस बहू की चाह की, वह तुझे पसन्द नहीं आई। अक्ल की बात है, हीरा छोड़कर तुझे माटी की डली पसन्द आ गयी।'

अतुल ने बात सुनी, तो वह बोला कुछ नही, जाती हुई माँ की ओर देखने लगा। किन्तु जब वह खाना खा चुका, तो हाथ में बेंत लेकर माँ के पास जाकर बोला—"मैं अभी आता हूँ, माँ ! जरा राधा के यहाँ जाता हूँ। बहुत दिन से उसकी माँ से नहीं मिला, तो दो-चार बात कर आता हूँ।'

उस समय माँ ने चाहा कि उसे रोक दे, उस घर जाने से मना कर दे। परन्तु बहुत दिन के बाद उसने अतुल की उस इच्छा को पाया था, अतएव, विस्मय के साथ पुत्र को घर से बाहर जाता देखने लगी। किन्तु जब अतुल उस घर पहुँचा, तो अन्दर से दरवाज़ा बन्द था। वह खटखटाने लगा। तभी पड़ोस के एक व्यक्ति ने देखकर कहा—'अरे, अतुल बाबू, आप यहाँ कैसे ?'

अतुल ने कहा—'जरा राधा की माँ के पास आया था।'

उसी समय दरवाज़ा खुला। राधा को सामने देखते ही अतुल बोला—'अभी से सो गयी क्या? बहुत दरवाजा खटखटाया।'

राधा ने कहा—'इस घर रात में कोई नहीं आता। इसलिए निश्चिन्त बनकर पड रहने के अतिरिक्त और काम ही क्या था?'

अतुल ने कहा—'चलो अन्दर। आज मैं आ गया।'

राधा बोली—'हाँ, यही तो। सोचती हूँ जाने किधर से चाँद निकल आया। शायद भूल से ही इस घर का दरवाज़ा दिखायी दे गया।'

घर में अन्दर जाते हुए अतुल बोला—'नहीं देवीजी, मैं माँ से कह कर आया हूँ कि राधा के घर जा रहा हूँ।' वह उसकी माँ के पास जाकर बोला—'माँ जी, नमस्ते।'

राधा की माँ ने कहा—'आओ बेटा! बैठो। आज कैसे इधर भूल आये?'

अतुल ने हँस कर कहा—'आश्चर्य क्या, यही बेटी ने कहा, तो यही माँ ने।' वह बोला—'माँजी, सुना है, तुम राधा का विवाह कर रही हो। इसलिए आज सोचा, तुम्हारे पास आकर पूछूँ, मेरे लिए क्या काम है? यह समझ लो, मैं सेवक हूँ।'

एकाएक आल्हादित बनकर राधा की माँ बोली—'बेटा, यह विवाह क्या है, हाथ पीले करने हैं लड़की के! भला इस घर में क्या रखा है?'

अतुल ने कहा—'नहीं माँजी, राधा का विवाह उसी प्रकार होगा, जैसा तुम चाहो। आखिर मुझे गैर क्यों समझती हो? तुम्हारा बेटा हूँ। पैसा मैं लगाऊँगा।'

राधा की माँ ने इतनी बात सुनी, तो चुप रह गयी। उसी समय अतुल ने देखा कि राधा ने लाल किनारीदार धोती पहन रखी थी। वह उसके गोरे बदन पर भली लग रही थी। उस समय उसका जूड़ा भी खुला था। सिर की लट कुछ मुँह पर आ गयी थी। वह अतुल की बात सुनकर अपनी बड़ी-बड़ी आँखों को कभी ऊपर उठाती और

कभी शरमा कर नीचे गिरा लेती। कमरे के उस धीमे प्रकाश मे, सचमुच, राधा भली लग रही थी।

उसी समय माँ ने राधा को टंकोरा—'बेटी, अतुल भैया को चाय तो बना दे। आज जाने कितने दिन में इधर आ पाया है। इसके मन की मौज है, नहीं तो नजदीक घर रहते भी कभी नहीं आता।'

अतुल ने कहा—'अम्मा, फ़ुरसत नही मिलती। सुबह जाता हूँ और रात में घर लौटता हूँ।' वह बोला—'माँ ने कितनी बार कहा कि कोई नौकर लाकर दूँ। परन्तु खोज नहीं पाता। किसी से कहने का भी ध्यान नही रहता। पुराना नौकर जब से गया है, तब से दूसरा नहीं मिल पाया। अकेली माँ को काम करते कष्ट होता है।'

राधा की माँ ने कहा—'अब उनमें भी दम नहीं रहा। शरीर थक गया। कोई आदमी मिल जाये, तो सहारा मिलेगा।'

अतुल बोला—'अब तुम्हारी यह राधा भी कम आती-जाती है। उस घर को गैर मान बैठी है।'

उसी समय राधा ने अतुल की ओर देखा। जैसे कुछ कह देना चाहा। परन्तु उसने कहा कुछ नहीं, केवल एक बार उसकी ओर देखकर, फिर आँखों को झुका दिया। लेकिन उसकी माँ बोली—'नहीं बेटा, यह कैसे होगा ? राधा तो तुम्हारी है। उस घर आ-जाकर तो बड़ी हुई है।' उसने कहा—'अब इसे भी दूसरे घर जाना है। अब बचपन नहीं रहा, जवानी आ गयी, तो दुनिया की रीत को भी मानना पड़ेगा। अब इस राधा को हम लोगों से नाता तो तोड़ना ही होगा।

अतुल ने जैसे एकाएक कहा—'माँजी, अजीब संसार है यह ! सम्बन्ध जुड़ता है और टूटता है।'

माँजी ने कहा—'बेटा, जीवन ही टूट जाता है। बालू का घरौंदा बनता है और बिगड़ जाता है। उत्थान और पतन, जीवन और मृत्यु, इन सबका लेखा-जोखा साथ-साथ चलता है।'

तभी राधा उठी और रसोई की तरफ जाने लगी। किन्तु, उसे रोक कर अतुल बोला—'राधा, अब चाय नहीं लूँगा। जाकर सोऊँगा।' उसने कहा—'इधर कई दिन से मैं परेशान अधिक रहा। उस औरत का मरना, उसके गाँव जाना, वह सब मुझे जिस प्रकार अनायास देखना पड़ा, तो उसी तरह, बरबस, मन में यह बात भी आयी कि मैं अपनी ज़िन्दगी का रास्ता बदलूँ। केवल धन उपार्जन के लिए इस जीवन को न खपा दूँ।' वह कहने लगा—सो, मै उस प्रकार का रास्ता पा गया। मैं एक ऐसे समाज का सदस्य बन गया कि जहाँ प्रत्येक सदस्य को जनता-जनार्दन की सेवा में कुछ-न-कुछ योगदान करना पड़ेगा। श्रमदान भी उस कार्य का एक अंग होगा।'

तभी राधा ने अपनी आँखें ऊपर उठाईं। वह अभी तक चुप थी। माँ बोल रही थी। किन्तु जब स्वय अतुल ने अपनी गतिविधि की रूपरेखा बता दी तो, उसने कहा—'सुनती हूँ, वकालत का काम भी कम कर दिया है। बहुत से मुकदमे लेने बन्द कर दिये।'

सुनते ही अतुल बोला—'हाँ, राधा! उस संस्था का एक यह भी उद्देश्य है। पाप और व्यभिचार को प्रश्रय देना उसके नियमों के विरुद्ध है।' उसने कहा—'देखती हो, आज समाज में ब्लैक-मार्केट करने वाले अधिक है। वे सामान्य जनता की विवशता का लाभ उठाते है। सरकार को भी धोखा देते है। ऐसे लोग धन तो उपार्जित करते हैं, परन्तु मनुष्यता के मुँह पर काला पोता फेरते हैं।'

राधा ने कहा—'लेकिन आपके जीवन के साथ उसकी संगति कहाँ है? उस अवस्था का निभाव कहाँ?'

तुरन्त ही, अतुल बोला—'मैं चेष्टा करूँगा। आमदनी कम होगी तो, अपने खर्च घटा दूँगा। पहले साल भर में चार सूट बनवाता था, तो अब दो बनवाऊँगा।'

राधा सहज भाव से मुस्करायी—'यह भावना हो सकती है, वास्तविकता नहीं।'

उदास होकर, अतुल ने सिर के ऊपर तारों भरे आसमान को देखा और कहा—'जीवन में कुछ प्रयोग किये जाते है। वे सफल भी उतरते है, बहुधा असफल भी।'

राधा की माँ बोली—'बेटा, पैसा सर्वोपरि है। यदि आज इस घर में पैसा होता, तो राधा मनचाहे घर में जाती।'

अतुल ने जैसे खिसियाकर कहा—'अम्मा, मैं इस परम्परा को तोड़ दूँगा। मैं चेष्टा करूँगा कि जीवन संयमित हो। सीमा से बाहर न हो।'

सहसा राधा ने अपने स्वर पर जोर देकर कहा—'बाबू, आप एक मीठा स्वप्न देखते है।'

उसी प्रकार, अतुल बोला—'निःसन्देह, मैं समूचा जीवन स्वप्न मानता हूँ। इसे प्रयोगशाला भी समझता हूँ।'

यह सुनते ही, राधा के मुँह पर एक अजीब प्रकार का भाव आया। उसे कमरे के धूमिल प्रकाश में अतुल भली भाँति नही देख सका। किन्तु यह स्पष्ट था कि राधा कदाचित् कह देना चाहती थी कि तुम्हारे जीवन का प्रयोग मैने समझ लिया। देख भी लिया। इसलिए वह सहज भाव से मुस्करा कर रह गयी।

तभी अतुल उठकर बोला—'अच्छा माँजी, फिर कभी आऊँगा। आज तो यही कहने आया था कि मैं तुम्हारा हूँ।'

माजी ने कहा—'हां बेटा, तुम मेरे ही हो।'

अतुल चल दिया। जब द्वार तक राधा साथ आयी, तो वह बोला—'जिस चादर को तुम पलंग पर बिछा आयी हो, मैं समझता हूँ वह एक दिन में नही कढ़ी होगी। वह क्या इस अतुल को दे देने की चीज़ थी? ज़रूर, उस चादर के फूलों में तुमने अपनी भावना को गूँथा होगा।'

राधा ने कहा—'तो क्या यही कहने आये थे, आज?' वह बोली—'समझ लो, जहाँ से भावना पायी, वही पर वह चादर समर्पित कर दी।'

अतुल ने कहा—'लेकिन मैं अनुभव करता हूँ कि स्वयं भावना-शून्य हूँ। किसी अन्धेरे में खड़ा हूँ। अंधे पथिक की तरह रास्ता खोजता हूँ। तुम हँसोगी तो, परन्तु सत्य यह है, मैं स्वयं कोई सम्बल चाहता हूँ। लगता है, जीवन के राग क्षुब्ध बन चले हैं, स्वर-हीन हो गये हैं, अतएव, मैं कातर और त्रस्त बना हूँ।'

सहसा राधा के मुँह से निकला—'तो मैं क्या कर सकती हूँ, अतुलजी ? मैं तुम्हारे लिए जीवन का श्रेष्ठतम त्याग करने के लिए तत्पर हूँ। तुम्हारे जीवन की दिशा कहीं भी जाये, परन्तु जीवन के किसी कगार पर यह राधा भी टिकी है। जब चाहो, इससे अपने मन की बात आकर कह सकते हो।' वह बोली—'मै नारी तो हूँ, पराश्रित भी हूँ, समाज की परम्परा से बँधी हूँ, परन्तु जब भी मेरी आवश्यकता होगी, तो तुम मुझे अपने पास पाओगे।'

एकाएक साँस भर कर अतुल बोला—'मुझे भरोसा है, राधा ! तुमको ही एकान्त रूप से अपना समझा है।' और वह विदा लेकर घर की ओर बढ़ गया।

——

पन्द्रह

उन दिनों अनायास लता की मनोदशा अत्यन्त विषम और भया-वह बन रही थी। वह तरुणी जीवन की जिन उद्दाम आकांक्षाओं को अपने हृदय मे समेटे थी, वे दिन-दिन भारी बनती जा रही थी। इसका परिणाम यह हुआ कि लता प्राय: घर से बाहर रहती। अवस्था यह थी कि पिता को तो उससे बात करने का अवकाश ही कम था, परन्तु घर में बैठी हुई माँ जब लता से कही आने-जाने का कारण पूछती, तो वह बहुधा या तो बात को टाल जाती, अन्यथा किसी सहेली से मिलने की बात कह देती। फलस्वरूप, उन दिनों लता का खर्च भी अधिक बढ़ गया था। वह आये दिन पिता से रुपयों की माँग करती।

किन्तु उसी समय जब लता के पिता को अतुल का नया रूप दिखायी दिया, वह लता के पास भी कम आया-गया, तो समाज के अपराधी व्यक्तियों की वकालत करने वाले उस व्यक्ति ने सहसा इस बात को अपने मन मे समझ लिया कि कहीं अतुल विवाह के प्रस्ताव से विमुख तो नही हो रहा! कदाचित् इतना सोचने का एक कारण यह भी था कि अतुल तेजी के साथ दूसरी दिशा की तरफ बढ़ गया था। नगर के सम्भ्रान्त व्यक्तियों मे उसकी चर्चा होने लगी थी। यह बात सर्वविदित थी कि अतुल वकील भले ही अच्छा न हो, परन्तु तरुणाई

की दहलीज पर खड़े हुए उसकी प्रतिभा और वक्तृत्व शक्ति अजेय थी। अतुल जिस संस्था का सदस्य था, उसने एक भाषणमाला का आरम्भ किया था, जिसके अन्तर्गत नागरिक सुधार और अधिकारों के लिए लोगों को प्रोत्साहित किया जा रहा था। उन भाषण-कर्ताओं में अतुल का प्रमुख स्थान था। इस प्रकार वह नगर का एक सामान्य वकील न रह कर; वहाँ का विशिष्ट व्यक्ति बन गया था। एकाएक ही अतुल इतना व्यस्त रहने लगा कि उसे अपनी वकालत को समय देने के लिए कठिनाई में पड़ जाना पड़ा। किन्तु लगता यह कि अतुल अपनी गति-विधि से सन्तुष्ट था। वह अनुभव करता कि अब उसमें चेतना आयी है। वह जनता का व्यक्ति बना है। यदि वह समाज से कुछ लेता है, तो देना भी चाहता है। मानो अब तक लेता ही था, देने को उसके पास कुछ नहीं था।

एक दिन जब अतुल कचहरी से लौट कर घर की ओर जा रहा था, तो तभी, उसके एक अनन्य मित्र ने रोक कर कहा—'मेरी बधाई स्वीकार करो, अतुल बाबू! वकील के साथ नगर के नेता भी बन गये।' वह मुस्कराया—'आज सर्वत्र आपकी चर्चा है। आपने यह अचूक शस्त्र पकड़ा है। चुपड़ी और दो-दो। निःसन्देह काम इसी प्रकार चलता है। अब आप की वकालत भी चलेगी। अच्छे केस मिलेंगे। बडे लोग अपने मामले लायेंगे।'

अतुल बात सुनते ही कुछ व्यस्त बन गया। अदालत का साथी था, वह भी वकील था। अतएव, बात सुनकर वह सहज भाव से मुस्कराया और चुप रह गया।

किन्तु उस युवक वकील ने फिर कहा—'और हाँ, आपके कम्पेनियन यानी साथी का क्या हाल है?' वह बोला, 'लगता है, लता देवी अब और किसी डाल पर बसेरा डालना चाहती है। उनको होटल में देखा, तो एक फौजी जवान साथ बैठा था। जरूर, वह लता का पुराना

साथी होगा। उस समय सचमुच ही अन्यतम बना था।' यह कहते ही वह बरबस हँस दिया।

किन्तु स्वभाव से अतुल इस प्रकार की बात सुनने का आदी नहीं था। वह कुछ अप्रतिम बनकर बोला—'श्यामबाबू, यह व्यक्तिगत मामला है। कहना और सुनना असंगत लगता है।'

श्यामबाबू ने कुछ सचेत बनकर कहा—'हाँ, हाँ, यह तुम्हारा व्यक्तिगत मामला है, भाई! परन्तु कहता हूँ तुम्हें सोच-समझ कर पग उठाना चाहिए।' वह बोला—'आज प्रातः जिस प्रकार की बात मेरी बहिन रम्भा ने बतायी, उसे सुनकर, मैं, ही क्या, किसी को भी अच्छा नहीं लगेगा। कल लतादेवी स्कूल गयी थी। मेरी बहिन रम्भा भी उसी स्कूल में अध्यापिका है, जहाँ आपकी पड़ोसिन राधा है। रम्भा ने बताया कि लतादेवी स्कूल जाकर उस बेचारी राधा को वह सभी कुछ कह आई, कि जो एक सम्भ्रान्त घर की लड़की को नहीं कहना था। उस बेचारी राधा को वह अपमानित करने से भी किसी प्रकार पीछे नहीं रहीं।'

एकाएक क्षुब्ध बनकर अतुल बोला—'क्या कहते हो?'

श्याम ने हाथ की सिगरेट फेंक दी और उसे पैर के जूते से मसलता हुआ बोला—'मैं ठीक कह रहा हूँ, अतुल बाबू!' उसने कहा—'तुम आजकल आदर्श और सिद्धान्त के दरिया में गोता मार रहे हो। सेवा और त्याग का संकल्प भी ले चुके हो। परन्तु इस धरती का इन्सान क्या है, नारी क्या है, इतना भी समझ पाओ, तो कदाचित् अपने साथ न्याय करोगे। आप वकील हैं न, तो समाज के व्यक्ति की वकालत करने के साथ कुछ अपनी भी वकालत करो। सत्य और न्याय को देखो। मेरी बहिन रम्भा कहती थी कि राधा उस लता से कुछ कह नहीं सकी। वह केवल रो पड़ी।' यह कहते हुए उसने अपना स्कूटर स्टार्ट किया और बैठ कर चल दिया। वह पल भर में तिरोहित हो गया।

उसी समय अतुल ने अपने मुंशी को पास बुलाया और उसे अपना बैग देकर कहा—'इसे घर दे देना।' और वह तब पैदल ही एक दूसरी दिशा की ओर बढ़ गया। निःसन्देह उस समय अतुल का भाव संतप्त था। वह उत्तप्त कड़ाहे में पडे तेल की तरह खौल उठा था। उसके मन में बार-बार आ रहा था कि वह अभी लता के घर जाये और उसे फटकार दे। वह उसके माता-पिता को भी सुनाकर कह दे, यह लता बेहुदा है, बेशर्म है। मेरे लिए इससे सम्बन्ध बनाना कठिन है। किन्तु अतुल जिस रास्ते पर जा रहा था, उससे छूटने के लिए तैयार नहीं हुआ। वह रास्ता नदी की तरफ जा रहा था। उसके किनारे बड़ी-बड़ी कोठियाँ थीं। उन्ही में एक कोठी लता के पिता की थी। वह किराये पर चढ़ी थी। एक बार लता ने स्वयं अतुल को बताया था कि उसके पिता की इच्छा है, विवाह के बाद वे दोनों उस कोठी में रहेंगे। लता ने अत्यन्त गहरी मुस्कान के साथ कहा था कि हम लोग इसी कोठी में हनीमून मनायेंगे। परन्तु उस समय जब वह विशाल कोठी आँखों के सामने आयी, तो अतुल एक बार उसकी ओर देख, तुरन्त ही तेज़ी के साथ आगे बढ़ गया। जब नदी का किनारा समीप था और वह सड़क के किनारे खड़े पेड़ों के नीचे-नीचे बढ़ रहा था, तो तभी, सहसा वह चौंक गया। हतप्रभ भी रह गया। मानो उसकी छाती का समस्त खून सूख गया। उसने देखा कि उसका परिचित राजीव गाड़ी चला रहा था और पास बैठी लता से इस प्रकार हँसता-बोलता आगे बढ़ रहा था कि मानो वे दोनों अभिन्न थे। एक दूसरे के जीवन में खो चुके थे। नहीं कहा जा सकता कि लता ने और राजीव ने भी अतुल को देखा था या नहीं, परन्तु जो कुछ तभी तब श्याम ने अदालत के एक पार्श्व में खड़े होकर कहा, वह सर्वथा सत्य ही था यद्यपि उस समय अतुल को उसके मुँह से सुनकर अच्छा नहीं लगा, किन्तु उस समय यदि श्याम मिल जाता, निश्चय ही, वह उससे क्षमा माँग लेता।

फलस्वरूप, मन की उस दुरूह अवस्था में ही, अतुल नदी पर पहुँच गया। वह एक निर्जन स्थान पर जा बैठा। यद्यपि उन दिनों वह अधिक व्यस्त था जीवन में कोलाहल अधिक बढ गया था, परन्तु जिस शांति की आकांक्षा से वह उधर आया, वहाँ वह उसे प्राप्त कर सका। श्याम की बात से तो परेशान हुआ ही, उसे सत्य पाकर और भी अधिक व्यथित हो गया।

फिर भी, नदी का किनारा था। कुछ दूर पर ही नावें खड़ी थीं और उनमें बैठे मल्लाह कोई गीत गा रहे थे और कोई अपनी चिलमों से धुएँ उड़ा रहे थे। नदी के पानी में किनारे पर कभी कछुवा आता और अपना मुँह निकाल कर शूँ करता हुआ फिर गोता मार जाता। कुछ मछलियाँ भी किनारे पर तैरती दिखायी देती थी। किन्तु अतुल कछुवा देखता, न मछलियाँ, वह केवल देख रहा था कि नदी का पानी गहरा है। उस पानी के नीचे जिस प्रकार का अंधेरा है तो वहाँ न विश्व का कोलाहल पहुँचता है, न इन्सान के मन में भरा ज़हरीला गुबार। मानो वहाँ सभी कुछ सपाट हैं और निर्विकार है। उस नदी के तल-अतल में केवल धरती की दलदल है जहाँ पहुँचकर आदमी चिर-निद्रा मे सो सकता है।

लेकिन अतुल को मरना नहीं था। उसे जीवित रहना था। जीवन के जिस चौराहे पर वह आकर खड़ा हो गया था, वहाँ से उसे रास्ता चुनना था। आगे बढ़ना था। स्पष्ट था कि अभी तो उसे दूर तक जाना था। इसलिए, वह तुरन्त नदी और उसके पानी की गहराई की बात छोड़कर अपनी बात लेकर बोला, इस लता ने मुझे परेशान कर दिया। जाने क्यो है यह विवाह की बात, इसने बरबस ही मुझे जकड़ दिया।

किन्तु उसी समय, मानो मूक भाव से, उस नदी के पानी पर राधा तैरती दिखायी दी। नितान्त सौम्य, सरल और सीधी वह राधा।

लेकिन लता ने उसी राधा को जो कुछ जाकर सुनाया, भले ही श्याम बाबू से उसका ब्यौरा नहीं मिला, परन्तु अतुल ने स्वयं समझ लिया कि उस लता ने क्या जाकर कहा होगा ··हाँ, बोली होगी, तू मेरे रास्ते का काँटा है। अतुल बाबू से जब मेरा विवाह होने जा रहा है, तब तू क्यों उसके घर आती जाती है। तू हम दोनों के जीवन में विष घोल देना चाहती है।

निःसन्देह उस समय अतुल सचमुच ही, अपने आप में सिकुड़ गया। वह नदी पर जिस उद्देश्य से आया था, वह सार्थक नहीं हुआ। उस दिन उसे कचहरी में अधिक बोलना पड़ा था। अतएव चाहता था कि शान्ति मिले। परन्तु लता और राधा के प्रसंग ने उसे एकदम व्यथित बना दिया। अतएव, वह उठ खड़ा हुआ। सड़क पर आते ही उसने टैक्सी ली और घर की तरफ चल दिया। जब अतुल घर में प्रविष्ट हुआ, तो सामने ही पड़कर माँ बोली—'आ गया, अतुल ! तुझे लता के पिता ने बुलाया है। अभी उसकी माँ आई और कह गयी कि इसी सप्ताह उन्हें सगाई करनी है।' उसने कहा—'दो दिन बाद ही राधा की सगाई जायेगी। उसकी माँ से भी मिल आता, तो ठीक था।'

सुनते ही, अतुल एकाएक कुछ नहीं कह पाया। वह सीधा कमरे में चला गया। कोट उतार कर खूँटी पर टाँग दिया और पैण्ट पहिने ही, कटी डाल की तरह कुर्सी पर गिर गया। यद्यपि उसके मन में बात आई कि माँ से कह दे कि वह न लता के घर जायेगा, न राधा के घर; परन्तु इतना वह नहीं कह सका। फलस्वरूप, उसने सिर पकड़ लिया और दीवार पर लगे एक चित्र की ओर निरुद्देश्य भाव से देखने लगा।

किन्तु कदाचित् माँ को अपनी बात कह कर सन्तोष नहीं हुआ। वह स्वयं भी फिर कमरे में आ गयी और अतुल के पास खड़ी होकर बोली—'लगता है, लता के पिता लड़की के विवाह में अधिक पैसा खर्च करेंगे। यहाँ आकर उसकी माँ ने कहा कि हमें कोई ज़ेवर नहीं

बनवाना है। लता को जो कुछ पहनना है, वह सब बम्बई से बनकर आ गया। बताती थी, पचास हज़ार रुपया ज़ेवर में लगा है।'

एकाएक अतुल ने झल्लाकर कहा—'हाँ, हाँ जब बाप के पास पैसा है, तो वह खर्च करेगा। समाज के समक्ष पैसे का प्रदर्शन दिखायेगा।'

माँ को सहारा मिला—'हाँ, बेटा! पैसे वाले यही करते हैं।' वह बोली—'एक वह राधा है, जिसके विवाह में हज़ार-दो हज़ार लग जायें तो यही बहुत होगा।' उसने कहा—'कितना बड़ा अन्तर है, इस समाज में। कोई सोने की मुहरों से तुलता है, कोई माटी के ढेलों से। सब पैसे को देखते हैं, पात्र-अपात्र को कोई नहीं परखते हैं।'

एकाएक अतुल चीख पड़ा—'माँ, यह समाज गन्दा है। इसके शरीर से कोढ़ का पीब चू रहा है। देखती नहीं, पैसे ने आदमी को गन्दा बना दिया।

माँ बोली—'जब लता की माँ आई तो मैं उसकी मोटर को देख कर ही हैरत में रह गई। क्या किसी राजा महाराजा की ऐसी गाड़ी होगी। वह स्वयं हीरे-जवाहरात के जेवरों से लदी थी।'

अतुल बोला—'उस घर में पाप की कमाई भरी है। लता के पिता समाज के प्रति निर्दय है ही, अपने तईं भी अमानुषीय बने हैं। देखने में वे हाड़-माँस के है, परन्तु निखालिस पथरीले हैं। पत्थर से बने है। क्या मजाल वे किसी को एक पाई दे दें। लेकिन पुत्री के विवाह पर रुपया उड़ाना चाहते हैं। पाप के दरिया में बहने वाले उसी में डूबना पसन्द करते हैं।'

उसी समय अतुल की माँ ने साँस भरी—'राधा नहीं आई, इन दो दिनों से! शायद काम से नहीं छूट पायी होगी।'

अतुल बोला—'माँ, अब उसे इस घर पर नहीं आना चाहिए।'

माँ ने कहा—'नहीं बेटा, यह घर भी उसका है। वह मेरी गोद में खेली है। ताई के बगैर क्या उसे चैन मिलता है। अब वह स्कूल

से लौट कर सीने-पिरोने के काम में लगती होगी । आखिर ब्याह में कुछ दहेज तो देना होगा । बेटी को खाली हाथ कैसे भेजा जाए ।'

सचमुच, उस समय अतुल नहीं चाहता था कि माँ विवाह का प्रकरण छेड़े । किन्तु मां को शायद वह विषय अत्यधिक प्रिय था । अतएव, जब वह अपनी बात कह कर लौट चली, तो दरवाज़े पर खड़ी होकर फिर बोली—'हाँ, बेटा, खाना खाकर हो आना लता के पिता के पास । किस दिन सगाई देंगे, उसके लिए इस घर पर भी कुछ इन्तज़ाम करना होगा । कुछ मित्र सम्बन्धी आयेंगे । उनका भी चाय-पानी करना पड़ेगा । साल भर हो गया है, मकान की पुताई और रंग-रोगन को, तो वह भी कराया जायेगा । तेरे बाबूजी का कमरा प्रायः बन्द ही पड़ा रहता है । कितनी बार कहा तुझसे कि उसमें बैठा कर, परन्तु जाने इस छोटे कमरे से तुझे क्यों इतना मोह हो गया है । अब उस कमरे को साफ़ करना ज़रूरी है ।'

अतुल ने कहा—'माँ, मैं बाबूजी के समान बड़ा आदमी नहीं हूँ । उनके पास तो आदमी आते थे, पंचायत होती थी ।'

माँ हँसी—'अरे, अब तू भी उसी रास्ते पर चल पड़ा है । उस दिन मुंशी बताता था कि अब तेरे पास आदमियों का ताँता लगा रहता है । वह तो कहता था, अतुल बाबू भाषण बड़ा अच्छा देते हैं । आदमी के मन को छूते हैं ।'

अतुल ने कहा—'माँ, मुझे इससे सन्तोष नहीं । जब आदमी की कथनी और करनी में अन्तर हो, तो वह इन्सान नहीं उस शरीर के अन्दर बैठा भेड़िया है ।'

माँ फिर लौट आई । वह साँस भर कर बोली—'हाँ, बेटा ! बात तो यही है । तेरे बाबूजी का भी यही मत था । उन्होंने कभी किसी को नहीं सताया । यदि किसी ने पैसा लेकर नहीं लौटाया, तो उस पर मुकद्दमा नहीं किया । अपना हज़ारों रुपया इसी तरह छोड़ दिया ।

इस राधा के पिता को जितना रुपया दिया, वह कभी मुंशी को नहीं लिखाया।

अतुल सहज भाव से बोला—'माँ वे देवता थे। गये तो हमें अपना आशीष प्रदान कर गये।'

आश्वस्त होकर माँ लौट पड़ी। वह सीधी रसोई घर में चली गई। किन्तु जब वह खाने का थाल लेकर लौटी, तो देखकर चकित रह गयी कि वहाँ कमरे में राधा खड़ी थी और धोती में मुँह दिये सुबक रही थी। अतुल ने भी कुर्सी छोड़ दी। वह कमरे की खिड़की के पास खड़ा था। उसने सिर के बालों में हाथ दे रखे थे और बड़े कठोर भाव से तारों भरे आसमान को देख रहा था।

अतुल की माँ ने खाने का थाल मेज़ पर रख दिया और बरबस जब राधा के सिर पर हाथ रखा, तो वह और अधिक फूट कर रो पड़ी। वह चीख पड़ी—'मैं वही असहाय हूँ, ताई !' और कहने के साथ ही उसने अपना मुँह उस ताई के कन्धे पर रख दिया।

सोलह

नि:सन्देह अतुल परेशान था। विक्षिप्त था। उस रात में ही उसने निश्चय कर लिया कि वह लता के घर नहीं जायेगा। परन्तु जब दूसरा प्रातः हुआ और अतुल कचहरी जाने के लिए घर से निकला, तो तभी, लता के पिता की मोटर आती दिखायी दी। अतुल को देखकर वह रुक गयी। यदि दोनो की चार आँखें न होतीं, तो कदाचित् अतुल अपने रास्ते पर बढ़ जाता। परन्तु तुरन्त ही लता के पिता ने गाड़ी से बाहर आकर कहा—'अतुल बाबू, अभी कचहरी नहीं, घर चलो। ज़रा लता को जाकर देखो।'

व्यस्त बनकर अतुल बोला—'मेरा मुकद्दमा है।'

लता के पिता ने कहा—'हाँ,हाँ, भाई तुम्हारा मुकद्दमा है। मैं मजिस्ट्रेट को फोन कर दूँगा। तारीख डलवा दूँगा।' और तभी उस व्यक्ति ने नितान्त आकुल बनकर कहा—'अतुल जी, देखते तो हो, मैं पिता हूँ। कचहरी में खूनी और डाकू अपराधियों के मुकद्दमें करके भी, घर में तुच्छ हूँ। दुर्बल और कमजोर हूँ।' वह बोले—'लता मेरी इकलौती सन्तान है। वह मेरा बहुत बड़ा सिर-दर्द है।' यह कहते ही, उन्होंने अतुल को मोटर में बैठा लिया।

जब गाड़ी उस बंगले में प्रविष्ट हुई, तो लता के कमरे में जाकर अतुल ने देखा कि लता बिस्तर पर पड़ी है। अतुल को देखते ही उसकी माँ ने बताया कि डाक्टर आया, उसने देखा और दवा दे गया। एक इन्जेक्शन भी लगा गया।

किन्तु अतुल ने एक ही दृष्टि में देखा कि लता के सिर का जूड़ा खुला है। उसके बड़े-बड़े बाल तकिये पर फैल गये हैं। अतुल के वहाँ जाते ही उसने आँख खोल दी है। वह अजीब दृष्टि से उसकी ओर देखने लगी है। लेकिन उस रंग-ढंग को देखकर अतुल ने समझ लिया कि यह लता शायद अभी अभी घर में आयी है। ज़रूर रात में इसने शराब पी है। आँखें अब भी चढ़ी हैं।

उसी समय लता के पिता ने अतुल का हाथ पकड़ा और अपने कमरे में ले गये। वहाँ जाते ही, उन्होंने अपनी आलमारी खोल दी जहाँ सौ-सौ और दस-दस रुपये की गड्डियाँ प्रचुर मात्रा में रखी थीं। उन्हीं को लक्ष्य कर लता के पिता ने कहा--'अतुलजी! यह रुपया मैंने कल ही बैंक से मगाया है। सोचा था, विवाह की वस्तुएँ खरीदने के लिए बाजार में कैश देना होगा। चाहता हूँ, यह रुपया आप ले लें। अपनी मनचाही वस्तुएँ खरीद लें।

यह सुनते ही, एकाएक अतुल के माथे में बल पड़ गये। मन में रोष भी फूट आया। किन्तु उसने उसे वाणी पर नहीं आने दिया। वह कड़वे भाव से मुसकराया—'मेरी दृष्टि में यह सब तमाशा है, बाबूजी!' वह बोला—'देखिये, मैं आपकी इज्ज़त करता हूँ। इस विवाह के नाम पर अब ऐसी बात नहीं होनी चाहिए कि जिससे आपको कष्ट हो। मैं यह भी अनुभव करता हूँ कि आपकी पुत्री के लिए जिस प्रकार का साथी चाहिए, शायद वैसा मैं नहीं हूँ।'

एकाएक विचलित होकर लता के पिता ने कहा—'क्या कहते हो, अतुलबाबू! जब मंज़िल के समीप पहुँचे हो, तो फिर उस मंज़िल को

आरम्भ करने की बात कहते हो ! सोचो तो, तुम और लता कितने पुराने साथी हो । कितनी दूर से साथ-साथ चल कर आये हो ! और तभी उस व्यक्ति ने निपुण वकील अथवा व्यवसायी के सदृश बनकर कहा—'ओह, मैं समझ गया, लता के साथ मुझे तुम्हारा भी मन रखना होगा । यही सोचकर तो यह रुपया मैंने बैंक से निकाला है । मैंने निश्चय कर लिया है, लता का विवाह इतने ठाठ से करूँगा कि शायद इस नगर में पहिले न हुआ हो । और यह तो जानते ही हो तुम, मेरे पास जो कुछ है, वह पुत्री का है, तुम्हारा है ।'

किन्तु आश्चर्य था कि अतुल इतना बड़ा प्रलोभन पाकर भी, विचलित नहीं बना । वह पत्थर के समान कठोर और भारी बना रहा । उसी अवस्था में उसने कहा—'बाबूजी, यह वकालत का पेशा आरम्भ करते समय मैं आपसे दीक्षित हुआ हूँ । इतने समय में ही मैंने अनुभव किया है कि अदालत के समक्ष किसी अपराधी की वकालत करने वाला व्यक्ति स्वयं दुर्बल होता है । अपने जीवन की वकालत करने में वह अपने को असमर्थ पाता है ।'

एकाएक क्षुब्ध बनकर लता के पिता ने कहा—'मैं तुम्हारा मतलब नहीं समझा ।'

अतुल ने कहा—'मैं स्वयं अपनी वकालत नहीं कर पाता । लगता है, इस विवाह की बात पर मुझे नये सिरे से सोचना होगा ।' वह बोला—'यह तो आप भी अनुभव करते होंगे कि मैं इधर कुछ समय से अपना समय अदालत में कम दे पाता हूँ । वस्तुतः स्थिति यह है, मैं वकील के काम को कुछ अवास्तविक समझने लगा हूँ ।

लता के पिता जगजीवन बाबू कुछ कहने चले थे कि तभी लता की माँ उधर आयी और वह अतुल को लक्ष्य करके बोली—'बेटा ज़रा लता के पास नहीं बैठोगे ? लड़की परेशान है । अब भी उसका मन ठीक नहीं है ।'

अतुल ने कहा—'मांजी, तुम्हारी लता जिस वातावरण में पली है, बड़ी बनी है, उसमें परेशानी अधिक मिलती है, मन की शांति कम।' वह कड़वे भाव से मुसकराया—'यह धन-सम्पदा, शरीर का ऊपरी आवरण सजा सकती है, परन्तु मन और आत्मा को सुख नहीं दे सकती।'

लता की माँ ने एकाएक साँस भर कर कहा—'तुम ठीक कहते हो, बेटा!'

अतुल ने कहा—'यह सम्पदा मनुष्य को प्रायः वास्तविकता से भी दूर रखती है। आँखों पर पर्दा डालती है।'

लता के पिता ने एकाएक उपहास के साथ कहा—'अब अतुलबाबू उपदेशक बन गये हैं। देखता हूँ समाज के कार्यों में अधिक समय देते है।' वह बोले—'परन्तु महाशय, पैसे का भी मूल्य है। मनुष्य का उत्थान इसी के द्वारा होता है।'

तुरन्त ही अतुल बोला—'पतन भी इसके द्वारा होता है, बाबूजी!'

लता की मां ने कहा—'तुम्हारी बात ठीक है।'

तभी अतुल ने सीधी बात ली और कहा—'यदि इस घर में धन न होता, तो कदाचित् माँ-बाप को इस बात का ध्यान होता कि उनकी युवा पुत्री कहाँ जाती है। रात के काले प्रहर कहाँ बिताती है।'

एकाएक क्षुब्ध बनकर लता के पिता ने कहा—'अतुलबाबू भूलो मत, मैं लता का पिता हूँ। मैने पुत्री को छूट दी है कि वह आज के युग का उपभोग करे, उसके दर्शन करे। तभी तो वह आधुनिक नारी बनेगी।'

उसी समय अतुल ने कमरे के द्वार की ओर देखते हुए कहा—'यदि आधुनिकता का यही अर्थ है कि मनुष्य दुराचारी बने. व्यसनी हो, तो मैं आपके इस तक को स्वीकार करता हूँ।'

एकाएक व्यस्त बनकर लता के पिता ने कहा—'इतना सब कहने का अभिप्राय क्या है ?'

तब जैसे अज्ञात भाव में अतुल खुल पड़ा—'आपकी पुत्री लता रानी दूसरे युवकों के साथ घूमती है। होटलों में बैठकर खाती-पीती है।'

ऊँचे स्वर में लता के पिता ने कहा—'और इसी को तुम पाप मानते हो......इतने दकियानूसी, हो तुम !'

किन्तु उस समय लता की माँ बार-बार अपने मुँह का पसीना पोंछ रही थी। वह सचमुच कातर और दुःखी थी। उसे लग रहा था कि जैसे वह विशाल भवन धू-धू करके जल जाने वाला था। अतुल जो कुछ कह रहा था, वह किसी कील की तरह उसके मस्तिष्क में गड़ रहा था। इसी से, उसने व्यस्त बनकर कहा—'बेटा, तुम लता के पास चलो। वह परेशान है, उसे कुछ दिलासा दो।'

अतुल ने कहा—'माँजी, लता स्वयं ठीक हो जायगी।'

लेकिन लता की मां ने अतुल का हाथ पकड़ लिया। उसने विनय के स्वर में कहा—'नहीं, चलो मेरे साथ।'

और जब वह अतुल को साथ लेकर चली, तो तभी उस कमरे से बाहर आकर उसने कहा—'बेटा, लता अभी अजान है। तुमने ठीक ही कहा कि पैसा आशीष कम देता है, अभिशाप की आग में जलाता है। कौन समझाये लता के पिता को, स्वयं तो आधुनिकता के रंग में रंग ही गये, बेटी को भी उसी में डुबो देना चाहा है। अब लता तुम्हारी है, जैसा चाहो, वैसा बनाओ।'

उस समय अतुल के मन में तो आया कि कह दे, लता उसकी नहीं, उस पर कोई अधिकार नहीं। परन्तु इतना वह कह नहीं सका। वह चुपचाप ही लता के पलंग के पास पहुँच गया। देखा कि लता आँख खोले कमरे की छत देख रही थी। वह उस समय न खिन्न थी, न

उन्मन। किन्तु जब अतुल उसके पास पहुँचा, तो बरबस, उसने, अपनी वे सुन्दर आँखें अतुल की आँखों पर टिका दीं और मुस्करा दी।

माँ ने कहा—'अरी, लता ! अब क्या हाल है तेरा ! अब तो सिर में चक्कर नहीं।'

लता ने कहा—'माँ कॉफ़ी मंगाओ। अतुल बाबू के लिए कुछ नाश्ता !' और तभी उसने अतुल की ओर देखकर हलका-सा हँस दिया।

लेकिन अतुल ने कहा—'मैं घर से खाना खाकर चला था। अब कुछ नहीं लूँगा।'

माँ कमरे से लौट गयी थी। लता ने अतुल की बात सुनी, तो उसकी ओर अतिशय भावुक बनकर देखती हुई बोली—'अब तक सुना था कि औरत प्रायः गलतियाँ करती है। परन्तु जब अपने प्रति सजग बनना चाहती है, तो पुरुष से केवल उपेक्षा पाती है। कहिये, क्या यही सब होने जा रहा है, हम दोनों के बीच में ? आप में मेरे प्रति क्रोध होगा, यह समझती हूँ। लेकिन जब मैं पश्चात्ताप की आग में जल जाने को उद्यत हूँ तो क्या आपका सहारा नहीं पा सकती ? नारी भूल कर सकती है, कृतघ्न नहीं हो सकती।'

अतुल ने कहा—'लता देवी—यह विचार का विषय है। मेरी केवल यह जानने की इच्छा है कि तुम्हारा मन तो ठीक है।'

लता ने जैसे बरबस कह दिया—'अब आप आ गये हैं, तो मैं ठीक हूँ।' और तब उसने अपना गरम हाथ अतुल के ठण्डे हाथ पर रख दिया।

लेकिन अतुल अपने हाथ को अलग हटाकर बोला—'यह समझो कि मुझे तुम से कोई शिकायत नहीं है। हम दोनों के मध्य एक धारणा बन

गयी थी, वह आज मुझे भ्रान्त दिखायी दी। अभी-अभी तुम्हारे पिता से मेरी बात चली, तो मैने कह दिया, उनकी पुत्री को जो रोग है, वह उन्हीं का दिया है।' यह कहते ही वह कुर्सी से खड़ा हो गया। वहाँ से चलने को उद्यत होता हुआ बोला—'अच्छा, अब जाऊँगा। एक नया मुकद्दमा है, उसे लूँगा।'

किन्तु व्यस्त बनकर लता बोली—'अरे आप जा रहे है। अम्मा कॉफ़ी लेने गयी है। बस, एक प्याला।'

अतुल ने कहा—'अब मैं कुछ नहीं लूँगा। पेट भरा है। फिर मिलूँगा।'

किन्तु अतुल उस कमरे से निकलता कि तभी लता की माँ सामने आ गयी। पिता भी आ गये। अतुल को जाते देखकर उन्होंने कहा—'मैंने फोन कर दिया है, मि० माथुर को। तारीख बढ़ाने को कह दिया है।'

अतुल ने कहा—'मुझे और भी काम हैं। मुझे जाना है।'

लेकिन लता के पिता ने आकुल भाव में अतुल का हाथ पकड़ लिया और कहा—'बाबू, सचमुच, आदमी दुर्बल है। अशक्त है। अभी जो कुछ तुमने कमरे में कहा, वह मेरे दिल और दिमाग में घूम रहा है। निश्चय ही मैं मानता हूँ, पैसा अभिशाप है। और यह वकालत का पैसा पुण्यमय कैसे हो सकता है। आओ बैठो। अब तुमसे यही कह सकता हूँ, मेरे बुढ़ापे को मत बिगाड़ो। जब बेटी का हाथ तुम्हारे हाथ में देना पसन्द किया, तो मैंने यह भी चाहा कि तुम दोनों को सुखी देखकर मेरा यह अन्तिम पड़ाव सुख और शांति से बीत जायेंगे।'

अतुल फिर कुर्सी पर बैठ गया और बोला—'निश्चय ही आप मेरे पिता तुल्य है। आपसे स्नेह पाया है। मैं लता और इसकी माँ का भी अनुगृहीत हूँ कि जहाँ से जीवन की अभूतपूर्व भावना देख पाया। परन्तु मैं आज यह कहने के लिए विवश हूँ कि जहाँ तक आपकी पुत्री के विवाह

का सम्बन्ध है, मैं उसके लिए अपने को असमर्थ पाता हूँ।' यह कहते ही, अतुल के मुँह पर खून छलछला आया। लगा कि उसके मन का रोष सहसा मुँह पर तैर आया। उसी अवस्था में उसने कहा—'आपकी कृपा से इतना मैं समर्थ हूँ कि अपने जीवन की सामान्य आवश्यकताएँ पूर्ण कर सकूँ। यदि मैं कुछ न भी करूँ तो इतना आलम्बन पिताजी छोड़ गये हैं।'

आतुर बनकर लता के पिता ने कहा—'हाँ, हाँ, तुम भी सम्पन्न घर के हो, भाई! तुम्हारे पिता नगर के सामान्य व्यक्ति नहीं थे।'

लेकिन उसी समय लता की माँ चीख उठी--'बेटी!'

तभी सब के साथ अतुल ने देखा कि लता की छाती की धड़कन बढ़ गयी है और वह देखते-देखते निःशक्त तथा बेहोश हो चुकी है।

यह देखते ही, लता की माँ रो पड़ी—'अतुल, मेरी बेटी को बचा लो। इसे अपनी छाँह में छुपा लो।' उसने पति से कहा—'आप अपने कमरे में जायें।' और वह स्वयं भी वहाँ से हटती हुई बोली—'बाबू, तुम्हारी बात ने बड़ी चोट मार दी है, इस लता के मन पर! यह इतनी कठोर कहाँ! नितान्त कोमल है,—फूल की पंखुड़ी सरीखी! अब तुम्हीं इसे सम्हालो!' और यह कहते ही, वह स्वयं कमरे से बाहर निकल गई।

लेकिन अतुल विस्मय में था। सचमुच, वह घृणा और उपेक्षा से आविर्भूत था। लता का नाम, लता का चिन्तन अब उसे पसन्द नहीं था। वह पिछली रात कठिनाई से एक घण्टा से अधिक नहीं सो सका था। राधा के साथ लता ने जिस प्रकार का अभद्र व्यवहार किया, वह उसके मन से नहीं उतर रहा था। स्थिति यह थी, यदि वह समर्थ बन पाता तो उस लता का गला घोट देता।

किन्तु जब वह अनायास फिर कमरे में अकेला रह गया, तो सचमुच, वह एक अजीब प्रकार की उलझन में पड़ गया। कदाचित्

लता को इतनी सुन्दर और कोमल वह कभी नहीं देख पाया, जैसी उस समय देख सका यद्यपि लता के बदन पर परिधान थे, परन्तु यदि उसे नग्न-प्राय: कहा जाता तो अनुपयुक्त न होता। उसका वह गौरवर्ण और कोमल शरीर जब समीप से अतुल ने देखा, उसे मूर्च्छित भी पाया, तो वह अनायास उसकी छातियों पर साड़ी ढककर इस प्रकार उसकी ओर झुक गया, मानो वह लता कोई और थी कि जिसके प्रति उसके मन में रोष था।

फलस्वरूप, लता के रेशम सरीखे सिर के बालों पर हाथ फेरकर, अपने मुँह को उसके मुँह के पास ले जाकर अतुल ने अगाध ममता भरे स्वर में पुकारा—'लता !'

लता कुछ कुनमुनायी और धीरे से मुँह खोलकर बोली—

'हाँ !'

'तुम आँख खोलो, लता ! देखो मैं अतुल हूँ। तुम्हारे पास बैठा हूँ।'

लता ने आँख खोली और अपनी बाँह अतुल के ऊपर डाल दी। तभी वह फूटकर रो पड़ी। उसी अवस्था में बोली—'तुम हो न, तुम ! लो, मुझे मार दो। मेरा गला भींच दो।'

किन्तु अतुल खिन्न था। वह बोला—'तुम शांत बनो, लता !'

लता ने कहा—'जब औरत अपराध करती है, उसे स्वीकार करती है, तो शांत नहीं हो सकती।' वह बोली—'जानते तो हो, जब नाव किनारा छोड़ देती है, तो तब, लहरों की कृपा को छोड़कर और कुछ नहीं पा सकती।'

तुरन्त ही, अतुल ने बात पकड़ी—'हाँ, हाँ, तुम लहरों की कृपा मान लो। भगवान को देखो। उसकी भावना को समझो। तुम्हारा

यह कोमल और सुन्दर जीवन है, एक बार समझो तो कि यह भगवान की देन है।'

लेकिन लता तो रो रही थी। उसकी आँखें बह रही थी। वह उसी अवस्था में बोली—'अतुलजी, मेरे भगवान तुम हो—तुम !'

अतुल ने बात सुनी, तो सूखे भाव से मुस्करा दिया। उसी समय उसने कमरे के पास से उसके नौकर को बुलाया। उससे कहा—'लता के लिए कॉफी लाओ।'

लता ने कहा—'मैं अकेली नहीं पीऊँगी।'

अतुल स्वयं आकुल था—'हाँ, हाँ, मैं भी साथ दूँगा।' और तब वह फिर उस सुन्दरी लता के जीवन-व्यूह में फँसकर जैसे एक अकेला नहीं था। वह मन और मस्तिष्क से उस लता के पास.था।

से घर दूर नही था। परंतु जब उसे फिर रात की घटना का ध्यान आया, तो वह एकाएक घर जाने के लिए तत्पर नही हुआ। जीवन में पहली बार उसने अनुभव किया कि वह राधा अथवा माँ के समक्ष अपराधी बन गया है। उसे इस बात का भी आभास हुआ कि वह दुर्बल है। निस्तेज है। वह लता के रूप और सौदर्य को पाने के साथ उसके पिता के प्रचुर धन को भी लालसा की दृष्टि से देखता है। अतुल ने यह भी अनुभव किया कि वह शिक्षित, सुधारवादी और भावनावादी भले ही हो, परन्तु तथ्यतः वह समाज के निम्न स्तर पर खड़ा सभी की भाँति उस जीवन को देख रहा है। उसके मन का विकार, उसका स्वार्थ काल-नाग की तरह फूत्कार उठा है।

यों, सहसा अतुल अपने आप में इतना हीन और कायर बन गया कि वह यह भी नही समझ सका कि उसे जाना कहाँ है। जब वह निरुद्देश्य भाव से नगर के एक बडे पार्क के समीप पहुँचा, तो तभी, खिन्न और उन्मन बना पार्क की एक बेंच पर जाकर बैठ गया। दिन का समय था, इसलिए पार्क जन-शून्य था। कुछ बच्चे इधर-उधर खेल रहे थे। दूर पर आदमियों का एक समूह ताश खेलने में लगा था। अतुल को वहाँ जाकर बैठे अभी कुछ ही देर हुई थी कि तभी उसके दो परिचित मित्र उधर निकल आये। अतुल को एकांत में बैठा पाकर एक बोला—'अरे, आप अतुल जी !' उसने कहा—'आज क्या बात है कि आप यहाँ है ! क्या कचहरी नहीं गये ?'

अतुल कुछ कहता कि तभी दूसरे युवक ने चुटकी ली—'शायद लता देवी से यहाँ मिलना होगा।'

किन्तु पहले मित्र ने कहा—'वह भेंट तो घर भी हो सकती है। अतुल भाई को छूट है।'

वे दोनों नगर के सम्भ्रान्त परिवारों से सम्बन्धित युवक थे। किसी समय अतुल के सहपाठी भी रहे थे। जब लता की बात चली

तो दूसरे युवक ने कहा—'जनाब, लता देवी अपने पिता के पैसे का उपयोग करती हैं। रात होटल में वह जिस युवक के साथ थीं मैं देखकर चकित नहीं बना कि उन दोनों की मुलाकात न तो पहले थी, न आकस्मिक। यदि अतुल बाबू भी उस होटल में अपनी भावी पत्नी को देख पाते, तो शायद दाँतों तले उंगली दबा लेते।'

एकाएक अतुल ने खिन्न बनकर कहा—'कमल बाबू, प्रसंग अटपटा है, इसे छोड़ दो। आये हो, तो कोई और बात लो। यह बताओ, तुम बहुधन्धी बनकर भी इस पार्क में कैसे आ गये?'

कमल ने कहा—'हम सब एक ही रोग के रोगी हैं।' वह बोला—'ये कान्त महाशय पकड़ लाये हैं। तुमने भी सुना तो होगा ही कि इसके पिता एक बडे घराने में इनके विवाह का सम्बन्ध पक्का कर रहे हैं।'

अतुल ने कहा—'हाँ, मैंने सुना था।' वह बोला—'वह घर उपयुक्त है। समान प्रतिष्ठा का द्योतक है।'

उसी समय कान्त ने अतुल की ओर देखकर पूछा—'भाई, तुम तो वकील हो, समाज सुधारक भी हो। अपनी स्पष्ट राय दो कि इस विवाह के प्रसंग में मुझे क्या करना चाहिए। एक तरफ पिताजी प्रतिष्ठा की बात लेते हैं और दूसरी तरफ मैं नारी के रूप-अरूप का पक्ष लेता हूँ!'

तभी कमल बाबू ने कहा—'अतुलजी, कान्त भाई का रोग असाध्य है। ये जिस लड़की से विवाह करना चाहते हैं, वह एक सामान्य परिवार की लड़की है। सुशिक्षित है, सुहावनी है। परन्तु पिता के समक्ष अपने घर की मर्यादा का प्रश्न है।'

निःसन्देह, उस समय अतुल गम्भीर था। उसे लगा, वह भी कान्त के समान रोगी है। अतएव, एकाएक कुछ नहीं कह सका।

तभी कमल बाबू ने फिर कहा—'बन्धु, मैंने कान्त बाबू से कहा है, साथी तुम्हें चुनना है, तुम्हारे जीवन के साथ ही उसका जीवन चलना है। इसलिए भौतिक प्रतिष्ठा का प्रश्न नगण्य है। उसमें आत्म-सुख नहीं है।'

अतुल और अधिक गम्भीर हो रहा था। उसके चेहरे पर पसीना भी आने लगा था।

कमल बाबू ने कहा—'अतुलजी, संयोग की बात है कि आप मिल गये। लगता है, आप भी किसी समस्या में उलझे हैं। आप भी एक धनिक बाप की बेटी से विवाह करने के लिए उत्सुक हैं। लता के पिता ने इसीलिए आपको चुना है कि सम्भ्रान्त परिवार का आप प्रतिनिधित्व करते हैं। परन्तु मैं कह सकता हूँ, लतादेवी आपके लिए सर्वथा अनुप-युक्त हैं। यही बात मैं कान्त बाबू से कह रहा हूँ। इन्हें सामान्य घर की लड़की से विवाह करना चाहिए। उस अक्षत बाला ने अपना स्नेह दान दिया है, उसकी रक्षा होनी चाहिए।'

कठिनाई से अतुल बाबू ने सूखे भाव से मुस्कराया—'लेकिन म्याऊ का ठौर कौन पकड़ेगा? इनके पिता को समझाना क्या सरल रहेगा?'

कमल बाबू ने ऊँचे स्वर में कहा—'अतुलजी, मनुष्य को सिद्धान्त वादी होना चाहिए। जिस लड़की से आज तक प्रेम किया, उसे आश्वस्त किया, क्या उसकी रक्षा नही होनी चाहिए?'

आश्चर्य कि कान्त के समान अतुल भी चुप था। तभी कमल बाबू ने फिर कहाँ—'अतुलजी, मुझे लगता है, यह मनुष्य प्रेम और भावना के नाम पर नारी को सदा ठगता आया है। रूप-अरूप का जाल बिछाता आया है। इसके वचन, आश्वासन और सिद्धान्त पानी के बबूले की तरह उठते हैं और बैठते हैं। मैं कह सकता हूँ, नारी के प्रति यही मनुष्य का सबसे बड़ा पाप है।'

बरबस, अतुल के मुँह से निकला—'सचमुच, । यही पाप है ।'

'और यही पाप हमारे कान्त भाई करने जा रहे हैं!' कमल बाबू ने अपने एक हाथ को ऊपर उठाकर कहा ।

किन्तु तभी कान्त ने अत्यन्त तीव्र बनकर कहा—'नहीं, नहीं, यह नहीं होगा, कमलबाबू !'

कमलबाबू ने कहा—'तब मैं पहला व्यक्ति हूँगा, जो तुम्हें बधाई दूँगा ।'

तब भी जैसे अज्ञात भाव में अतुल के मुँह से निकला—'सत्य को पहचानना हमारा काम है । जीवन का यही ध्येय है ।'

'शाबाश, मेरे पुराने साथी!' कमलबाबू ने उल्लसित बनकर कहा—'आज भी आपने वही बात कही, जो कभी कालेज की डिबेटों में कहा करते थे । तुम तब भी हमारे मध्य हीरो थे ।'

किन्तु उसी समय अतुल खड़ा हो गया और कान्त की ओर देखकर बोला—'जिस लड़की से प्रेम किया है, उसे जीवन का साथी बनाओ, कान्तबाबू ! वही सत्य है । वही शिव ।'

कान्त ने कहा—'मैं यही करूँगा ।'

तभी अतुल ने उन दोनों से विदा ली और तेज़ी के साथ उस पार्क से बाहर निकल गया यद्यपि उसके मन में घर जाने की बात उठी थी, परन्तु जब पार्क के द्वार पर पहुँचा, तो सीधा एक अन्य दिशा की ओर बढ़ गया । स्पष्ट था कि इस समय अतुल अपने-आप में कठोर और उद्वेलित हो उठा था । पार्क में ही, लता के विषय में उसने जो कुछ सुना, यद्यपि वह नया नहीं था, परन्तु कुछ समय पूर्व जब वह उसके प्रति भावना से भर कर तल्लीन हुआ, तो यह भूल गया कि लता पत्नी बनने की अपेक्षा प्रेमिका बनना अधिक पसन्द करती है । और एक वकील की स्थिति में इतना उसे पता था कि प्रेमिका या प्रेमी बनने का

अर्थ है, शरीर का और मन का भोग। कदाचित् यही वह अवस्था थी कि जिसे अतुल ने कभी स्वीकार नहीं किया। उसकी दृष्टि में पुरुष का अथवा नारी का यही नैतिक पतन था।

जब अतुल नगर के एक चौराहे पर पहुँचा, तो तभी, एक खाली तांगे में बैठ गया। उसने तांगेवाले को निर्देश दिया कि सीधा चले, नगर के पार। फलस्वरूप, जब नगर की सीमा समाप्त हुई और किसानों के लहलहाते खेत सामने आ गये, तो अतुल तांगे से उतर गया। उसने तांगेवाले को रुपया दिया और स्वयं पैदल ही एक तरफ को बढ़ गया।

सचमुच, अतुल निरुद्देश्य था। वह उन्मन और व्यस्त भी था। वह अपने मन और मस्तिष्क को शान्त करने की दिशा चाहता था। उसकी आँखों के सामने एक के बाद एक नये परिवर्तन आ रहे थे। उन सभी में कुछ सुहावनापन तो था नहीं, पीड़ा और क्षोभ का भी आधिक्य था। अतएव, उसके मन में झुंझलाहट थी, कसक थी। वकील अतुल स्वयं अपनी वकालत करने में असमर्थ बना था।

किन्तु जब वह कुछ खेतों के पास पहुँचा, प्रकृति की उस हरियाली को देखने लगा, तो एकाएक, उसका ध्यान भंग हुआ। एक युवा और सुन्दर नारी गाँव की तरफ से खेत पर आयी थी। वह अपने पति के लिए रोटी लायी थी। संयोग से, जब वह अतुल के पास से निकल कर आगे बढ़ी, तो उसके पैरों में पड़े पायजेब बज उठे थे। उनकी ध्वनि उसे बाद में भी सुनायी दी। एक खेत की डोली पर खड़े होकर अतुल ने देखा कि वह नारी एक स्थान पर रुकी है। उसका पति खेत में काम कर रहा है। पत्नी को देखते ही वह बढ़ आया है। जाने मन की किस जिज्ञासा को लिये अतुल देर तक उस डोली पर खड़ा रहा। उसने सरलता से देखा कि वह युवती पति को देखते ही मुस्करायी है। अपने श्वेत दाँतों से हँसी है। जब पति रोटी खाने लगा, तो वह उसके पास बैठी है। बातें कर रही है।

उसी समय, एकाएक, अतुल ने अपने आप कहा, यह है, जीवन ! इसमें सुख है । सन्तोष है । आत्म शांति है । वह बोला, यहाँ ग्लानि नहीं । उपेक्षा नहीं । दुराशा नहीं ।

किसी चुम्बक की तरह, अतुल उस युवा दम्पत्ति की ओर बढ़ गया । जब वह पास गया, तो अचरज के साथ उन दोनों ने उसकी ओर देखा । किन्तु वह कुछ कहता, तभी उस युवक किसान ने अतुल को देखते ही, एकाएक उत्सुक होकर कहा—'अरे, आप बाबू—'

किन्तु बीच में ही, अतुल ने कहा—'लछमन, तुम—' उसे याद आ गया कि उस लछमन का एक मुकद्दमा उसने लड़ा था । खेत का मामला था, तो उसने निर्णय कराया था । उस लछमन के पास पैसा नहीं था, तो वह भी अतुल ने अपनी जेब से भर दिया था ।

अतुल ने कहा—'तुम रोटी खाओ, लछमन । बैठो ।' वह बोला—'आज मैं इधर निकल आया । खेत देखने की इच्छा थी, तो शहर से बाहर हो आया ।' और यह कहने के साथ ही उसने देखा कि लछमन की रूखी रोटियाँ थी । साथ में कुछ साग-दाल भी नहीं था ।

लेकिन तभी उस लछमन ने आह्लादित भाव से अपनी पत्नी को सुनाया—'यशोदा, यही हैं वे बाबू,—वकील साहब !' वह बोला—'बाबू, यहाँ तो चारपाई नहीं, कोई कपड़ा भी नहीं !'

किन्तु अतुल वहीं बैठ गया । वह बोला—'लछमन, यह धरती सबसे बड़ा बिछौना है । यह बताओ, कैसा चल रहा है, तुम्हारा काम ?'

लछमन ने कहा—'बाबू, यह खेत है । इसी पर ज़िन्दगी है ।' और उसने फिर आभार प्रकट किया—'आप बडे दयालु हैं बाबू । सच, बड़े भले आदमी हैं !'

अतुल ने कहा—'लछमन, हम सब भाई हैं ।'

लछमन ने रोटी खानी बन्द कर दी थी और वह पानी पी चुका था। अतुल की बात सुनकर उसने अपनी पत्नी की ओर देखा, उसी अवस्था में बोला—हाँ, बाबू ! सत्य तो यही है। पर कोई मानता नहीं। इस रास्ते पर नहीं चलता।'

अतुल ने पूछा—'तो घर में तुम दो ही प्राणी हो, या कोई और।'

तुरन्त ही लछमन ने कहा—'हाँ, दो ही हैं।'

'कोई बच्चा नहीं।'

लछमन मुस्कराया—'बाबू, अभी तो हम ही बच्चे है। माँ-बाप थे, पिछले साल चले गये।'

अतुल चुप रह गया। सचमुच, उस परिवार को देख, उसे अच्छा लगा। उसका मन स्वतः ही खिल गया। तभी उसे आभास मिला कि धन-सम्पदा शांति नहीं देती। आदमी को देवता भी नहीं बना पाती।

उसी समय लछमन की बहू उठी और खेत चली गयी।

अतुल ने कहा—'लछमन, तुम सुखी हो। भाग्यवान हो।'

लछमन ने कहा—'बाबू, भगवान की कृपा से रोटियाँ मिल जाती हैं।'

तभी लछमन की बहू खेत से निकल आयी। वह कुछ मटर की फलियाँ तोड़ लायी थी। वे जब अतुल के सामने रखीं, तो लछमन बोला—'बाबू, यही है, हमारी मिठाई ! भला तुम्हारी क्या खातिर करें।'

आतुर बनकर अतुल बोला—'अरे, ऐसा क्यों कहता है, लछमन ! तेरी बहू समझदार है। बहुत भली है।'

किन्तु लछमन की बहू तो घूँघट काढ़े हुए थी। वह कुछ नहीं बोल रही थी। उसके झिलमिलाते घूँघट से अतुल इतना देख रहा था कि बहू सुन्दर है, सलोनी है। अपनी प्रशस्ति सुन कर वह बार-बार अपने होठ काटती है और उन साँवली आँखों से पास बैठे अतुल को

निहार लेती है। उसकी आँखों में मादकता है, शोखी है और सारल्य है।

अतुल अभी फलियाँ ही खा रहा था, तभी गाँव के दो आदमी उधर आये। लछमन और उसकी बहू के पास अतुल को बैठे देखकर वे एकाएक ठिठक गए। उन्हीं में से एक अतुल को देखता हुआ बोला—'अच्छा, तुम वकील बाबू !'

दूसरे ने कहा—'मैं समझ गया, क्यों इस लछमन की मदद की थी। यह खेत मेरे हाथ से निकाला था।'

लेकिन पहिला बोला—'किसलिए मदद की, इसका राज़ आज खुल गया। शहरी साँप इधर भी आ गया।'

एकाएक लछमन ने क्रुद्ध होकर कहा—'हरिया के बच्चे !'

हरिया ने कहा—'अरे, मूर्ख ! मैं सब समझता हूँ। शहरी आदमी की आँख पहचानता हूँ। यह तेरी बहू है न.........'

किन्तु बात पूरी करने से पूर्व ही, लछमन ने लाठी उठा ली। निश्चय ही, वह हरिया के सिर में मार देता, किन्तु अतुल खड़ा हो गया। वह बीच में पड़ गया। वह उस हरिया के सामने जाकर बोला—'समझ गया, तुम क्या हो ! कुछ और कहना चाहते हो, तो कह डालो।'

हरिया उस युवक लछमन से बलिष्ठ नहीं था। निर्बल था। अतएव, वह अपने साथी के साथ आगे बढ़ता हुआ बोला—'बाबू, मैंने भी आदमी देखे हैं, हमारे भी आँखें हैं। तुम यहाँ क्यों आए हो, इसका मतलब हम खूब समझते हैं।' एक दिन यह लछमन मूँड पकड़कर न रोया, तो मैं अपना नाम बदल दूँगा।

लछमन चीख पड़ा—'हरामजादे, जान से मार दूँगा।' और यह कहते ही, जब वह उसकी तरफ लपका, तो अतुल ने उसे रोक लिया। वह उन दोनों के आगे जाते ही बोला—'लक्ष्मन, इस धरती पर आग

फैली है। मैं समझता था, शहर जल रहे हैं, परन्तु यहाँ गाँवों में भी कोढ़ का पीब बह रहा है। आदमी को सड़ा रहा है।' यह कहते ही, वह चलने को उद्यत हो गया।

लेकिन लछमन ने अतुल के पाँव पकड़ लिये—'मुझे माफ करो, बाबू! तुम गाँव चलो!'

अतुल ने कहा—'अब जाऊँगा। आ सका, तो फिर आऊँगा। और वह तभी तेज़ी के साथ वहाँ से मुड़ चला। कुछ ही देर में फिर सड़क पर आ गया। उसने एक ताँगा पकड़ा और बैठकर चल दिया। निश्चय ही, अतुल का मस्तिष्क अत्यन्त विकृत था। उसे क्रोध था। एकाएक ही एक विशाक्त भाव उसके मानस में ज़हरीले धुएँ की तरह मंडरा उठा था।

ताँगा चल रहा था। घोड़ा भाग रहा था। अतुल भी ताँगे वाले को कई बार तेज़ चलाने के लिए कह चुका था। सचमुच, वह जल्दी-से-जल्दी घर पहुँचना चाहता था। किन्तु वह भागता हुआ ताँगा जब एक मोड़ पर पहुँचा, तो सहसा सामने से आते मोटर ठेले से टकरा गया। वह टकराव इतना तीक्ष्ण और भारी था कि ताँगे का घोड़ा गिर गया। ताँगे वाला घायल हो गया। दूर सड़क के एक पार्श्व में अतुल जब गेंद की तरह उछल कर गिरा, तो बाद में उसे पता नहीं चला कि किस प्रकार उस घटना में सबसे अधिक चुटीला और घायल केवल वही हुआ था। अतुल को जब होश आया, तो उसने अपने आपको नगर के अस्पताल में पड़ा पाया।

———

अठारह

अस्पताल के कमरे में पड़े हुए, अतुल ने पूरी रात बिता दी। किन्तु उसकी बेहोशी दूर नहीं हुई। डाक्टरों का मत था कि अतुल बाबू को शरीर में चोट लगने के साथ दिमाग में भी चोट लगी है। रात भर में ही नगर के अनेक व्यक्ति उस अस्पताल में अतुल बाबू को देखने आ चुके थे। लता के पिता भी आये। अतुल की माँ और राधा रात भर रोगी के पास बैठी रहीं।

किन्तु इस अशुभ दिन के बीतने के बाद जब नया प्रातः आया तो अतुल की मूर्च्छा भंग हुई। आँख खोलते ही उसने राधा की ओर देखा। तभी आकुल और द्रवित बनकर माँ बोली—'बेटा!'

क्षीण स्वर में अतुल बोला—'चिन्ता की बात नहीं, माँ!' और तभी आँख बन्द करके चुप हो गया।

उसी समय डाक्टर आया। जब माँ ने अतुल के बोलने की बात कही, तो वह हर्षित बनकर बोला—'भगवान का शुक्र है।' डाक्टर ने बताया—'यदि इतना समय बीतने पर भी अतुल बाबू न बोलते तो हमें आपरेशन करना पड़ता। रात में ही डाक्टरों ने यह निश्चय किया था।'

माँ ने तब अशांत भाव से अपनी आँखें मूँद लीं। उसने भगवान का आभार माना।

लेकिन राधा ने कहा—'ताई तुम घर जाओ। रात भर की जगी हो। घर पर आराम करो।'

ताई ने राधा की ओर देखा—'अरी, पगली ! मेरा तो लड़का है। पर तू बता न, रात भर से बैठी है। जा, तेरी माँ प्रतीक्षा में होगी।'

तब राधा एकाएक ही झल्ला पड़ी—'कैसी बात करती हो ताई ! अतुल बाबू तुम्हारे बेटे हैं, तो मेरे भी कुछ है !'

वृद्धा एकाएक ही, जैसे अपनी बात पर टिक गयी। उसने प्यार और ममता के साथ राधा के सिर पर हाथ रखा और आँख भर कहा—'हाँ, हाँ, बेटी ! अतुल तेरा भी है। कुछ तो है। यह मेरी बात मान जाये, तो यही अतुल तेरा सब कुछ है।'

राधा ने अपनी बात फिर दुहराई—'तुम घर जाओ ताई ! स्नान करो और भजन करो।'

और यह स्पष्ट था कि अतुल की माँ सचमुच थक गयी थी। उसमें इतनी शक्ति नहीं थी कि अस्पताल के उस कमरे में रात भर बैठी रहती। चिन्ता, दुःख और दुराशा अपनी छाती पर लिये रहती। फलस्वरूप, जब राधा ने फिर घर जाने की बात कही, तो वह उठ चली। जल्दी लौट आने की बात कह गयी।

माॅ के जाने के कुछ देर बाद ही, सहसा अतुल ने फिर आँख खोलीं। उसने देखा कि राधा उसकी ओर झुकी है। उसकी गरम साँसें भी उस पर आ रही हैं। किन्तु जब अतुल ने आँख खोलीं, तो तुरन्त राधा बोली—'अब कैसी तबियत है। ताई घर गयी हैं। मैंने भेज दी हैं।'

'और तुम !' अतुल ने कहा—'तुम भी घर जाओ, राधा !'

तब एकाएक ही राधा ने जैसे अपने किसी अधिकार का उपयोग

किया और कहा—'घर जाना या न जाना मेरा अपना काम है। यह मुझे सोचना है।'

सुनकर, अतुल चुप रह गया। किन्तु तब उसने आँख बन्द नहीं की, अपितु वह एक अजीब भाव से राधा की ओर देखने लगा। निश्चय ही, उस तरह, अतुल ने राधा की ओर नहीं देखा था। उन आँखों में दुलार था, अपनत्वता और सहृदयता का भाव था। किन्तु राधा की आँखें झुक गयीं। वह जैसे शरमा गयी।

तभी अतुल ने कहा—'राधा, मेरी ओर देखो। सच मेरी ओर !'

राधा ने कहा—'कुछ लोगे ? थोड़ा दूध ?'

अतुल ने कहा—'नहीं, चाय !'

'अच्छा, अभी लाती हूँ। अस्पताल की कैंटीन जाती हूँ।' यह कहते हुए राधा खड़ी हो गयी। और जाने लगी।

लेकिन अपने स्वभाव के विपरीत अतुल बोला—'सुनो, राधा। तुम न जाओ। इस प्रातः की वेला में आज मुझे जीवन में एक विशेष आनन्द मिला है। तुम सोचती होगी कि मैं बेहोश था। नहीं, मै सो गया था। बड़े अजीब प्रकार के स्वप्न देखता रहा। कह सकता हूँ कि मैं एक अलौकिक और अभूतपूर्व जीवन में पहुँच गया था।'

राधा फिर बैठ गयी। वह अतुल की ओर झुक गयी।

अतुल ने कहा—देखो, यह अस्पताल का वार्ड है। मरीजों से भरा है। यहाँ सभी समान हैं। धनिक-निर्धन, बलिष्ठ-निर्बल एक ही प्रकार की पीड़ा को व्यक्त करते हैं। डाक्टर भी सबको समान रूप से दवा देता है। ऐसे ही भगवान हैं, इस धरती पर चलने वाले जीव उसके बच्चे हैं। लेकिन, हम इतना अनुभव नहीं कर पाते। इसी तरह मैं यह भी नहीं जानता कि जाने किस जीवन के संस्कारवश हम और तुम पास-पास आ गये। यों एक-दूसरे से मिल गये।'

तभी चंचल बनकर राधा ने कहा—'देखिये, आप उद्विग्न हैं। रो पड़ना चाहते हैं।'

किन्तु अतुल सचमुच ही रो पड़ा। वह उसी अवस्था में बोला—'लता ने जो कुछ तुम्हारे साथ किया, वह मेरे मन में शूल की तरह गड़ा है।'

'ओह, मेरे राम !' राधा ने अत्यन्त खिन्न बनकर कहा—'आपको हो क्या गया है।'

लेकिन अतुल चीख पड़ा—'मैं उस लता का गला घोट दूँगा।'

तभी राधा ने अपने हाथ अतुल के पैरों पर रख दिये—'मैं पैर पड़ती हूँ, चुप हो जाओ। डाक्टर ने बोलने को मना किया है।'

किन्तु अतुल ने कहा—'री, राधा ! डाक्टर मेरे शरीर के जख्मों का इलाज कर सकता है, मन में पैदा हुए नासूर का नहीं। उसका इलाज मुझे स्वयं ही करना होगा। मैं यह भी जानता हूँ कि उसकी दवा तुम्हारे पास है।'

तुरन्त ही राधा बोली—'मेरे पास ऐसा क्या है, जो तुम्हारा नही ?'

उसी समय नर्स आई। वह अतुल की ओर देखकर सहज भाव से मुस्कराई—'ये आपकी पत्नी हैं।'

बलात् अतुल के मुँह से निकला—'जी !'

'रात इन्होंने आपके लिए खून दिया है। वह खून ग्लूकोज़ के साथ आपके शरीर में चढ़ा दिया गया। जिस दुर्घटना से आप घायल बने, उससे शरीर का खून अधिक निकल गया है। आप बोलें कम। अभी डाक्टर आयेगा। बड़ा डाक्टर देखेगा।' यह कहते हुए नर्स दूसरे मरीज की ओर बढ़ गयी।

लेकिन वह जितनी बात अतुल को बता गयी, वह सब सुन कर वह भावुक अतुल एकाएक ही गम्भीर बन गया। तभी लम्बी साँस भर कर

उसने राधा की ओर देखकर कहा—'तो तुमने मुझे अपना खून भी दे दिया।'

'ओ हो ! आप वकील क्या बने, प्रत्येक बात का बतंगड़ बनाने लगे।' राधा ने कहा—'और जानते नहीं, इस दुनिया में यही सब चलता है। परस्पराश्रित बनकर ही इन्सान अपनी जिन्दगी का कारवां आगे बढ़ाता है। दया, सदाशयता और प्रेम ही इस जगत का सम्बल है। क्या कल मेरे साथ ऐसा होता, तो तब आप क्या इतना भी न कर पाते ! मैं कहती हूँ ज़रूर करते !'

अतुल ने फिर लम्बी साँस भरी—'राधा, मैं नहीं जानता। कुछ भी नहीं समझता कि मैं क्या करता। इतना देखता हूँ कि मनुष्य बनकर मैं स्वार्थी हूँ, दम्भी हूँ और शायद क्रूर भी हूँ।'

राधा ने कहा—'चुप रहो। चुप रहो ! भगवान के लिए इन मरीजों के सामने मेरा तमाशा मत बनाओ !' यह कहते हुए, वह बरबस ही कातर हो उठी और सहसा अपनी आँखें गोरे गालों पर बहाती हुई बोली—'अतुल जी, वह लता सोचती है कि मैं आप को ठग लेना चाहती हूँ। पति बनाकर उससे छीन लेना चाहती हूँ……न, न, मैं ऐसा कभी पसन्द नहीं करूँगी। मैं तो सदा—सर्वदा चाहूँगी कि आप सुखी रहें। बचपन से नेह किया है न, तो अब वह मेरे खून में मिल गया है। मेरे प्राणों के किसी परकोटे में आपका ममत्व छुप कर बैठा है। मैं उसे नहीं निकाल सकती। इस जीवन में ऐसा नहीं चाह सकती।'

अतुल ने तभी राधा की ओर देखा—'तो तुम रोती हो। मेरे समान ही अपनी दुर्बल भावना का प्रदर्शन करना चाहती हो। न, राधा, तुम हँसो। तुम मुस्कराओ। तुम ऐसा पुष्प हो, जो सदा महकता रहे। मेरी इस प्रातः के समय भगवान से प्रार्थना है कि वह तुम्हें जीवन भर हँसाता रहे।'

राधा ने कहा—'आप हँसेंगे, तो मैं भी हँसूंगी। मैं औरत हूँ न, तो एकाकी बनकर नहीं हँस सकती। अपने मन की भावना को दबोच कर नहीं रख सकूँगी।' वह बोली—'अतुल जी, यह नारी की कमजोरी है, कि वह अपने जीवन की प्रार्थना, साधना और मन:तप की आराधना दूसरे को भेंट करती है। इसी में सुख पाती है। सो, मैं भी यही चाहती हूँ। यह ज़रूरी नहीं कि वह आदमी पति हो। मैं कहती हूँ, वह साथी हो, उस नारी की भावना समझने वाला हो।'

तभी अतुल ने कहा—'राधा, दुर्भाग्य से मैं वकील हूँ। मुझे यह बनना नहीं था, बन गया। मेरा निश्चय है कि जल्दी ही इस पेशे को छोड़ दूँगा। बाजार का डाक्टर, बाज़ार की वेश्या और कचहरी का वकील, ये सब मेरी दृष्टि में एक ही तराजू के पलडे में बैठे हैं। ये सभी समाज में अराजकता का प्रचार करते है। आत्मा बेच कर पैसा चाहते हैं।'

सहसा, अतुल की आशा के विपरीत राधा ने कहा—'क्या वेश्या भी आत्मा बेचती है?'

सुनकर, अतुल रुक गया। वह चकित भाव से राधा की ओर देखने लगा।

राधा बोली—'वेश्या शरीर बेचती है, आत्मा नहीं।'

अतुल कड़वे भाव से मुस्कराया—'नहीं, वह भी ऐसा करती है। शरीर की साज—सज्जा से अपना रूप आयु छुपाती है। एक प्रौढ़ा नारी एक युवक को ठगती है।'

निश्चय ही, वह विषय राधा की मन:स्थिति के अनुरूप नहीं था। अतएव, उसने लम्बा नही किया। वह चुप रह गयी। कुछ लजा भी गयी।

किन्तु अतुल बोला—'मैं बाजार में बैठने वाली औरत को क्षमा कर सकता हूँ, परन्तु वकील या डाक्टर को नहीं। ये दोनों मनुष्यता का खून

करते हैं। डाक्टर भी मरीज़ के पैसे देखता है, उसके रोग की अथवा आर्थिक स्थिति की तुलना को नहीं। यही वकील का हाल है। मेरा तो यह भी मत है कि समाज को वकील की आवश्यकता नहीं। वे न्याय दिलाने का आश्वासन देकर समाज से पैसा लूटते हैं। इस अर्थ में लता के पिता को मैं कसाई मानता हूँ।'

राधा कुछ कहने चली थी कि तभी अन्य डाक्टरों के साथ बड़ा डाक्टर आ गया। उसने अतुल के पास आकर कहा—'मुझे खुशी है कि हमारा सन्देह गलत निकला। आपके सिर में ऊपर ही चोट लगी, अन्दर कोई विकार नहीं पैदा हुआ। फिर भी बोलें कम।' और वह पास खड़ी राधा की ओर देखकर मुसकराया—'मुझे प्रसन्नता है कि आपने रात को एक योग्य पत्नी का पार्ट अदा किया। आजकल हमारे पास खून नहीं। सब फौजियों को दिया जा रहा है। आपके दिये खून से अतुल बाबू को निश्चय ही शक्ति प्राप्त होगी।'

उसी समय दूसरे डाक्टर ने कहा—'जब आपका खून ले लिया, तो बाद में अतुल बाबू के लिए अनेक व्यक्ति खून देने आ गये। किन्तु हमने बताया कि अतुल जी की पत्नी ने खून दे दिया है।'

तभी राधा ने बोलना चाहा—'देखिये—'

किन्तु बड़े डाक्टर ने कहा—'आज प्रातः भी मेरे पास फोन आये हैं, अतुल बाबू के लिए। कल भी अनेक व्यक्ति आये।' वह अतुल की ओर देखकर बोला—'एक सप्ताह में आप अस्पताल से लौट जायेंगे।' और तभी उसने बताया—'अभी अब एक स्त्री मेरे पास आयी और आपके विषय में जानकारी लेने लगी। तभी वह रो पड़ी। शायद वह बता रही थी, इसी सप्ताह उसकी लड़की का विवाह होना है।'

एकाएक अतुल ने कहा—'ओह, वह बेचारी अनुराधा !
डाक्टर ने कहा—'शायद वह औरत विधवा थी। गरीब भी थी। परन्तु

उसके पास भी आपके लिए ममता थी, यह देखकर मुझे खुशी हुई ।' उसने राधा की ओर देखकर कहा—'तुम भाग्यवान हो, देवी । ऐसा पति पाकर भला कौन औरत सुख न पायेगी ।'

बरबस, राधा के मुँह से निकला—'डाक्टर जी—'

डाक्टर ने आगे बढ़ते हुए कहा—'विश्वास रखो, अतुल बाबू का यहाँ विशेष ध्यान रखा जायेगा । मैंने नर्स और डाक्टरों को कह दिया है ।' यह कहते ही डाक्टर आगे बढ़ गया ।

तभी राधा ने अतुल की ओर देखकर कहा—'राम-राम ! यह भी कैसा तमाशा है । जो बात सत्य नहीं, लोगों ने उसी को कहना आरम्भ कर दिया ।' वह अतुल की ओर मुड़ी—'आप भी जाने क्या सोचते हैं । मेरा इस तरह उपहास हो, तो आपको क्या अच्छा लगता है । खून देना मेरा कर्त्तव्य था । इस पति—पत्नी के सम्बन्ध का आपको विरोध करना था ।'

अतुल ने देखा कि राधा सचमुच ही आकुल है, कुछ परेशान हो उठी है । अतएव, वह धीर भाव से बोला—'राधा, इसमें चिन्ता की बात क्या है । इन अस्पताल वालों को पता क्या ! यह तुम्हारा काम था कि बता देती कि मैं मित्र हूँ, पत्नी नहीं । पड़ोसिन हूँ । और भला मुझे क्या कहना था ।'

'हे मेरे राम !' राधा ने जैसे झुंझला कर कहा—'तो आप समझते हैं, हमारा यह देश योरोप या अमेरिका बन गया है । शायद वहाँ जवान लड़कियों के मित्र पुरुष होते होंगे । परन्तु इस देश की ऐसी परम्परा नहीं है । यहाँ इसे पाप माना जाता है, व्यभिचार के विकास का रास्ता ।'

अतुल गम्भीर था । उसी अवस्था में बोला—'देवी जी, अब इस देश में भी सह-शिक्षा की प्रणाली चल पड़ी है । कालेज और यूनिवर्सिटियों में लड़के-लड़कियाँ साथ-साथ पढ़ते हैं । तो क्या तुम उन्हें व्यभि-

चारी कहोगी। आज तो दफ्तरों में लड़कियाँ और औरतें काम करती हैं। पुलिस और फौज में भी तुम्हें स्त्री जाति की बहुतायत मिलेगी। तब क्या वहाँ उनका दुरुपयोग होता है ? स्त्रियाँ आज जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में कन्धे-से-कन्धा मिला कर चल रही है।'

'ओहो ! आपने तो एक लेक्चर दे दिया !' राधा ने कहा—'बात क्या थी और क्या बना दी। मैं कहती हूँ, वे सब लड़कियाँ बलात् किसी की पत्नी नही बन जातीं। बरबस, किसी के गले नहीं पड़तीं। यों अपना उपहास भी नहीं कराती दिखतीं।'

तभी अतुल ने अपना गरम हाथ राधा के ठण्डे हाथ पर रख दिया—'नाराज मत बनो, राधा ! भगवान की इच्छा को समझो। वस्तु-स्थिति को पहचानों।'

लेकिन राधा के मन में तो रोष था, क्षुब्ध भाव आ गया था। उसका गोरा मुँह उस अवस्था में और अधिक लाल पड़ गया। जब अतुल ने परिस्थिति की बात कही, तो वह और अधिक क्षुब्ध बनकर बोली—'खाक पड़े ऐसी अवस्था पर ! और आप कहते हैं भगवान की बात, मैं तो प्रायः सोचती हूँ, शायद आप उस जगत के त्राता को नहीं मानते। वकील हो न, पाप को पुण्य और पुण्य को पाप करने वाले, तो भला इस प्रकार के शब्दों से मानवता का ढिंढोरा पीटने से लाभ क्या ! मैं कहती हूँ, यह भी इन्सान का दम्भ है और छल है !'

किन्तु उसी समय अतुल के मन में डाक्टर द्वारा बतायी उस औरत की बात आयी, जो उसकी दृष्टि में अनुराधा थी। उसी के प्रसंग पर टिक कर वह अतिशय गम्भीर बन गया और बोला—'राधा, मुझे भी दुःख है कि तुम्हारी भावना को ठेस पहुँची। देखो मैं अस्पताल में हूँ। मां से कुछ मांग नहीं सकता। डाक्टर जिस औरत की बात कह गया, वह अनुराधा है, माली टोले के पचहत्तर नम्बर मकान में रहने

वाली। उसकी लड़की का विवाह है। यह सम्बन्ध मैंने कराया है। पाँच सौ रुपये उस अनुराधा को देने है। तभी लड़की का विवाह होगा। यह मेरी अंगूठी और घड़ी की चेन बाजार में बेच दो। चुपचाप ये रुपये उस अनुराधा को दे आओ।'

सुनते ही राधा ने पूछा—'ये रुपये किस सिलसिले में दिये जायँगे, क्या मुफ्त !'

कठिनाई से अतुल बोला—'हाँ, राधा ! ये रुपये भेंट किये जायेंगे। उस अनुराधा का पति तपेदिक से मर गया था। तभी मैं उस घर के सम्पर्क में पहुँचा था।'

अपने सूखे होठों पर राधा ने जीभ फेरी—'तो यों कहो। ताई ठीक कहती हैं, आप जो कुछ कमाते हैं, उसमें से एक पाई भी घर नहीं देते।'

अतुल ने कहा—'राधा, मैंने जिस व्यक्ति की बात तुमसे कही, सचाई यह है कि वह मेरा गुरू था। वह देश के लिए पूरे बीस वर्ष काले पानी की सज़ा काट चुका था। उसके पास सम्पत्ति थी, वह भी देश के अर्पण कर चुका था। संयोग की बात यह कि पत्नी भी उसे भली मिली। अनुराधा साक्षात् देवी है। मुझे अपना पुत्र मानती है।' यह कहते हुए उसने अपनी अंगूठी और घड़ी उतार दीं। उस घड़ी की चेन सोने की थी। अंगूठी में हीरा जड़ा था।

उन दोनों वस्तुओं को देखकर राधा बोली—'मैं इन्हें लेकर बाज़ार नहीं जाऊँगी। कहो तो रुपये जुटा दूँगी।'

अतुल ने कहा—'हाँ, मैं अच्छा होते ही लौटा दूँगा। मेरे कई मुकदमे हैं, उनसे रुपया आता है।' लेकिन यह कहते ही वह चंचल बन गया—'फिर भी, यह सब रखो। क्या पता, रुपया आये या नहीं। मैं इस अस्पताल से जाऊँ या नहीं। यहाँ जीवन भी मिलता है और

मौत भी । भगवान क्या चाहता है, मुझे इसका कुछ पता नहीं ।'

व्यस्त भाव में राधा बोली—'अच्छा, अच्छा, आप दार्शनिक भी बन रहे हैं । वकील हैं, समाज सुधारक हैं और अब—'

उसी समय अतुल की मां लौट आई । वह पुत्र के लिए दूध लाई थी । तभी राधा सहज भाव से मुस्कराती, अतुल की ओर देखती, घर जाने के लिए, अस्पताल से बाहर निकल गयी ।

उन्नीस

एक सप्ताह बाद जब अतुल अस्पताल से घर पहुँचा, तो उसे मां ने बताया कि राधा की मां परेशान है। उसकी मां ने बेटी की सगाई का सब सामान एकत्र किया किन्तु राधा ने विवाह करने से इन्कार कर दिया।

अस्पताल से लौट कर, यद्यपि अतुल पूर्ण स्वस्थ था, परन्तु जब उसने मां से राधा के निर्णय की बात सुनी, तो हठात् गम्भीर बन गया। उसे अपने मस्तिष्क में दुखन का भी अनुभव हुआ। उसकी मन:स्थिति अत्यन्त विकृत और विषैली बन गयी। हालाँकि अतुल ने अपने मन में उठे किसी विचार को न मां के समक्ष व्यक्त किया, न राधा के सामने रखा; परन्तु अस्पताल में पड़े हुए वह इस भावना पर टिक गया था कि विवाह का प्रश्न गौण है, मुख्य है, जीवन और उसका उत्थान तथा पतन। कदाचित् यही कारण था कि उसने अस्पताल में पड़े हुए इस बात को सुन लिया कि लता नगर में नहीं है। वह कहीं बाहर गयी है। फिर भी उसने अपना मत व्यक्त नहीं किया। जैसे उस बात को कोई महत्व नहीं दिया।

किन्तु जिस व्यक्ति ने अतुल को लता के जाने की सूचना दी, निश्चय

ही उसे इस बात का भरोसा था कि अतुल उस समाचार को पाते ही क्षुब्ध बनेगा। लेकिन अतुल ने बात सुनी और सूखे भाव से मुस्करा कर रह गया।

तभी उस व्यक्ति ने कहा—'अतुल जी, लता का पिता कचहरी में जाकर समाज के अपराधियों की तो वकालत करता है, परन्तु अपने घर के सदस्यों की अपराध शृंखला को नहीं देख पाता। उसके पास पैसा है, तो उसका सदुपयोग भी करना नहीं जानता।'

उदास भाव से अतुल ने कह दिया—'भाई, बहुधा यही होता है। पैसे का उपयोग क्या सहज मे किया जाता है। यह जैसे आता है, वैसे ही जाता है।'

अतुल की इस दार्शनिक बात को सुनकर मित्र चुप रह गया। लता का प्रसंग आगे नहीं बढ़ सका।

लेकिन अपने घर लौट कर भी अतुल इस बात को नहीं भुला सका, कि अस्पताल में रहते एक सप्ताह के समय में जितने व्यक्ति उसका कुशल समाचार पूछने आये, मानो वे सभी, उसके ऊपर एक भार लाद गये। अतुल इतना मूर्ख नहीं था कि जो यह न जानता हो कि समाज का वह भाग उसके पास जिस आत्मीयता का भाव लेकर आया, वह किसी स्वार्थ से बंधा नहीं था। वह देखकर चकित था कि नगर के लोग तो उसके पास आये ही, कुछ गाँवों के व्यक्ति भी आये। वे सभी उसे अपना स्नेह प्रदान कर गये।

एक दिन जब अतुल के पास अधिक आदमी आये हुए थे, कुछ महिलाएँ भी थीं तो तभी, गाँव की एक वृद्धा ने उसके सिर पर हाथ फेरते हुए कहा—'बेटा, तुम जुग-जुग जियो। अपने समाज की सेवा करो।'

संयोग से उस समय वह प्रौढ़ अनुराधा भी वहाँ बैठी थी। वह

कुछ देर पूर्व ही अतुल को बता चुकी थी कि उसकी लड़की का विवाह हो गया। राधा ने दो दिन तक बड़ा काम किया। पाँच सौ रुपया और लड़की के लिए एक साड़ी दी। उसी ने जब गाँव की वृद्धा का आशीष सुना, तो सहज भाव से, अतुल की ओर देखकर बोली—'अतुल भैया, यही जीवन है। यह आशीष बड़ा है। इसका विशिष्ट स्थान है।' उसने अब तक समाज में जो कार्य किया, यह उसका पुरस्कार है।

किन्तु उस ग्रामीण वृद्धा ने कहा—'री, बहू ! लोग नादान हैं। समझ से दूर हैं। पैसे को बड़ा समझते है। अपना आपा ही मुख्य मानते हैं। सब स्वार्थी हैं।'

अनुराधा ने कहा—'हमारे योगी, महात्मा इसीलिए तो सत्कार पाते हैं कि वे दूसरों के कल्याण की कामना करते थे। इसी भावना से भरा आदमी भगवान बनता है।'

उस समय नगर के एक विशिष्ट व्यक्ति वहाँ उपस्थित थे। उन्होंने उन दो नारियों की बात सुनकर अतुल की ओर देखा—'हाँ, बाबू। ठीक कहती हैं ये देवियाँ ! आप गांधी को क्यों पूजते हैं ? क्या वह बहुत विद्वान् थे ? बहुत धनिक थे ? न, वे तो सेवा, त्याग और सद्भावना के प्रतीक थे।'

किन्तु जब अतुल घर आ गया, तो वे अस्पताल की बातें उसके साथ थीं। मानो किसी षोडशी के समान वह अमर भावना प्राणों के किसी परकोटे में अज्ञात भाव से छुपकर बैठ चुकी थी। घर आकर वह समय पाते ही अपना मुँह निकालती और उस अतुल की ओर देखकर मुस्कराती। मानो वह उसका आवाहन करती। उसे प्रेरणा देती। चुपके से कुछ कह देने की इच्छा करती।

कदाचित् यही कारण था कि अतुल उस अवस्था में नितान्त मौन और गम्भीर बना था। जब उसकी माँ ने विवाह की बात पर राधा की

इन्कारी की बात कही, तो वह चुपचाप बना रहा । किन्तु माँ ने कहा–'इस लड़की के मन का भी कोई पार नहीं पाता । माँ बुढ़िया है । साँस की रोगी है । किसी दिन भी धरती से जा सकती है । भला क्वांरी और जवान लड़की किस तरह अपना जीवन बितायेगी ।'

अतुल ने कहा—'माँ यह चिन्ता का विषय नहीं । राधा समर्थ है । अपने पैरों पर खडी है । अब तो वह माँ का भी पोषण करती है ।'

किन्तु अतुल की माँ जानकी खिसिया गयी —'अरे, तू क्या कहता है । नारी की दुर्बलता नही देखता । उसे न घर में चैन, न बाहर चैन !'

बरबस, अतुल उत्तेजित हो गया—'माँ, यह विवाह का विषय है । 'समरथ को नही दोष गोसाईं' की बात तो तुमने सुनी है । दुश्चरित्र स्त्री या पुरुष सर्वत्र परेशान रहते है । किन्तु यदि औरत अपने चरित्र की साधना रखती है, तो कोई उसे मार्ग से हटा नहीं सकता । ऐसे पुरुष को भी कोई सुन्दर नारी अपनी ओर आकृष्ट नही कर सकती ।'

लेकिन जानकी पुराने विचारों की औरत थी । पुत्र की बात उसे पसन्द नहीं आई । वह बोली—'पगले, शरीर की भूख सबको सताती है । पुरुष की तरह औरत भी इसी धरती से पैदा होती है । वह भी जीवन की लालसा और वासना का मुँह देखती है ।'

हठात् अतुल चुप रह गया । माँ कमरे से लौट गयी, संयोग से उस दिन रविवार था । जैसे ही माँ उस कमरे से गयी कि तभी घर के आँगन में राधा का बोल सुनाई दिया । उसने ताई को पुकारा ।

जानकी ने एक दूसरे कमरे से कहा—'अरी, तू आ गयी राधा ! देख, स्टोव जला ले । अतुल को दूध दे दे । रात से मेरी कमर में दर्द है ।'

राधा ने बात सुन ली और रसोई में न जाकर अतुल के कमरे में पहुँची । जाते ही बोली—'तो क्या लेंगे श्रीमान् जी, दूध या चाय ?' और वह मुस्करायी—'थोड़ा हलवा भी,—क्यों ?'

अतुल ने राधा की ओर देखा। उसकी मुस्कान को लक्ष्य किया। तभी वह पत्थर की तरह कठोर बना हुआ बोला–'तो राधा, तुम विवाह नहीं कर रही, क्या? इन्कार कर चुकी हो?'

राधा हँस पड़ी—'यह क्या कोई दूसरा रोग आ गया?' वह पास होकर बोली—'अस्पताल के डाक्टरों ने आपके सिर का ज़ख्म तो ठीक कर दिया। लगता है, दिल का कोई नासूर अभी बन्द नहीं हुआ।'

अतुल ने कहा—'देखो राधा, यह परिहास का विषय नही है। अभी अब माँ ने मुझे बताया। उसने सुनाया कि तुम्हारी माँ परेशान हैं।'

किन्तु राधा तो पूर्ववत् हँसती हुई बोली—'अजी, जनाब! हमारे समाज की जितनी बुढ़िया औरतें है, वे सब, अपने पीछे छूटी मंज़िल पर लड़कियों को चलती देखना चाहती है। उसने कहा—'और रही मेरे परिहास की बात, वह तो अब मेरे जीवन में आ गया है। जब मैं अस्पताल में झूठ-मूठ ही दूसरे की पत्नी बन गई, 'मान न मान, मैं तेरा मेहमान' की परम्परा चरितार्थ कर बैठी, तब भला, हँसने के अतिरिक्त मेरे पास और क्या रह गया है। और सच भी तो कहा है किसी ने, जिसके पास दुराव नहीं, छिपाव नहीं, छल या कपट के साथ दम्भ नहीं, वह हँसे नहीं तो क्या रोये! भगवान की विडम्बना के समक्ष मुझे सिर झुकाना पड़ेगा। और आप तो अब नेताजी हैं, समाज-सुधारक हैं, तब समाज के अन्य व्यक्तियों की तरह, मैं भी हँस कर श्रीमान् का मनोरजन कर पाऊँ, तो क्या मेरे इस भाव को पाप की चादर से संजोया जायेगा।'

एकाएक व्यस्त बनकर अतुल बोला—'ओह!'

राधा ने वहाँ से लौटते हुए कहा—'मेरी चिन्ता मत करो। मेरा पथ साफ है, सुगम है।'

अतुल पूछना चाहता था कि वह क्या है ? परन्तु वह कुछ कह नहीं सका। उस कमरे से बाहर जाती हुई राधा की पीठ पर देखने लगा। उसके सिर की लम्बी चोटी नीचे कमर तक भूल रही थी। कमर पर पड़ी बारीक धोती के नीचे बालों की वह लट, सचमुच जैसे किसी नागिन के समान उस कमर पर भूल रही थी। अतुल ने अनुभव किया कि राधा बाल सँवार कर आई है। वह केसरिया रंग की धोती भी उसके गुलाबी ब्लाउज़ पर भली लग रही थी। किन्तु कमरे में जब राधा ने हँसकर, अपनी बड़ी-बड़ी आँखों से मुस्करा कर बात कही, तो तब भी, वह उसे अपूर्व लगी। कदाचित् उस समय राधा की आँखें भी अपेक्षाकृत सुन्दर दिखायी दीं। उसी समय अतुल के मन में बात आई कि अब राधा बदल चली है। कुछ उपार्जित करती है। उसे याद आया कि राधा अस्पताल जाने में भी नित्य अपनी साड़ी बदल कर जाती थी। वह माथे पर बिन्दी नही लगाती, न माँग में सिन्दूर, परन्तु क्या मजाल कि कोई सधवा युवती इस राधा के समक्ष ठहर पाती। इससे अधिक सुन्दर लगती।

उसी समय एकाएक अतुल के मन में बात आई कि इस राधा ने मुझे खून दिया था। वही खून अब मेरे शरीर में दौड़ रहा है। लेकिन जब राधा के उसकी पत्नी बनने की बात उसके समक्ष आई, तो बरबस, जैसे अतुल की साँस रुक गयी। आँखों में अन्धेरा छा गया। मस्तिष्क शून्य हो गया। उसे लगा कि जाने भगवान क्या चाहता है। जीवन की जाने किस अज्ञात तथा पावन घड़ी में राधा का इस घर में प्रवेश हुआ है।

तभी माँ कमरे के द्वार पर आ गई। बोली—'अरे, अतुल ! देख, मैंने तेरे कपड़े निकाल दिए हैं, बदल ले।' उसने कहा—'मैंने तो तेरा बक्स आज देखा है। राधा कहती है, सभी कमीज़ें फट गयीं। कुरता भी कोई ठीक नहीं। अब तू एक दिन बाज़ार जाकर कपड़ा ले आ।'

अतुल ने कहा—'माँ, मेरे पास पैसे नहीं है।'

माँ ने कुछ विचलित बनकर कहा—'पैसा तो तेरे पास आज है, न कल होगा। तेरे पीछे मुंशी ने मुझे सब बता दिया है। उसने कह दिया है, ये भोले भंडारी वकील साहब पैसा नही कमा सकते। पैसा कहीं से मिलेगा भी, तो घर नही ला सकते।'

अतुल ने कहा—'माँ, मुंशी तो बात बनाता है। तुम्हें बहकाता है।'

माँ ने विद्रूप का रूप धारण करके कहा—'वह बहकाता नहीं, सच का बखान करता है। जो वकील अपने मुवक्किलों से पैसा न ले, उल्टा उन्हें जेब से निकाल कर दे दे, वह आदमी क्या कभी फूले-फलेगा? ऐसा दानी आदमी इस धरती पर नही पनप पायेगा।'

संयोग से तभी राधा भी उधर निकल आयी। उसने ताई की बात सुनी, तो बोली—'ताई, तुम अपने पुत्र की इस साधना को भ्रष्ट मत करो। उतने दिन अस्पताल में तुमने जो कुछ देखा, वह क्या सन्तोष के लिए पर्याप्त नहीं। तुम समझ लो, इन्सानियत से पैसा बड़ा नहीं।'

ताई चिढ़ गयी—'तब यह घर नही चलेगा। भूतों का डेरा बनेगा।' वह राधा की ओर देखकर बोली—'अरी, राधा! तू भी तो चार पैसे लाती है। उन्हें किस तरह संजोती है। माँ को लाकर देती है।'

राधा सहज भाव से मुस्करायी—'ताई, मेरी और बात है। मेरा घर गरीब है।'

'और यह अमीर घर है,—क्यों? नादान लड़की!'

किन्तु राधा बोली—'ताई, तुम्हारे पास बहुत रुपया है। ताऊ सब तुम्हें दे गये हैं। और अतुलजी के रूप में यह बड़ी सम्पत्ति भी तुम्हें सौंप गये हैं।'

राधा की यह चतुराई भरी बात उस जानकी के मन को

छू गयी। वह बोली—'हाँ, बेटी! पैसा तो नहीं है मेरे पास ! पर बेटा ज़रूर है। मेरा अपना है।'

राधा वहाँ से जाती हुई बोली—'तब इन्ही को सहेजो। इनकी इच्छा पूरी होने दो। यह जिधर जाना चाहते हैं, जाने दो।'

बरबस, जानकी चुप रह गयी। उसने हाथ में लिये पाँच सौ रुपये अतुल के सामने रख दिये और कहा—'आज बाजार जाना और कपड़ा ले आना। चाहे तो इस राधा को साथ ले जाना।' यह कहते हुए जानकी फिर वहाँ से लौट गयी।

तभी राधा दूध और हलुवा लेकर कमरे में प्रविष्ट हुई।

जब अतुल दूध पी चुका, तो तभी राधा ने कहा—'अतुलजी, आज मैं आपसे विदा लेने आई हूँ। मेरी पोस्टिग समीप के एक गाँव में हुई है। वहाँ एक नया स्कूल खुला है। कह सकती हूँ, मेरी एक सीढ़ी पद-वृद्धि भी हुई है।'

अतूल ने हलुवा खाते हुए अपना हाथ रोक लिया और चकित बनकर पास खड़ी राधा की ओर देखा। वह जैसे राधा के कथन को परिहास समझ रहा था, अथवा उसे निरी रहस्यपूर्ण।

किन्तु राधा ने उसके मन का भाव समझ कर कहा—'यह इच्छा मेरी स्वयं थी कि नगर से बाहर जाऊँ। जब यही काम करना है, तो अन्यत्र करूँ। मैने सदा अनुभव किया है कि इस नगर के वातावरण में मैं फ़िट नहीं बैठ सकती। खर्चीला समाज है, वैभवपूर्ण है। यहाँ मन की शान्ति उपलब्ध नहीं होती। आप अस्पताल से लौट आयें, इसलिए रुकी थी।'

सहसा अतुल ने पूछा—'मेरी माँ को पता है ? तुम्हारी माँ ने क्या कहा ? और तुमने मुझसे भी आज तक इसका उल्लेख नहीं किया।'

राधा बोली—'अभी मैंने किसी को नहीं बताया। माँ से केवल

इतना कहा है कि मुझे पास के गाँव में जाना है, वहाँ कुछ दिन रहना है।'

उस समय अतुल की मां कमरे के बाहर आँगन में खड़ी थी। वह चिड़ियों को बाजरा डाल रही थी। उसी को लक्ष्य कर अतुल ने आवाज़ दी—'सुनो माँ!'

मां कमरे के द्वार पर आ गयी। तभी अतुल ने कहा - 'तुमने सुना मां, यह राधा इस नगर को छोड़ रही है। पास के गाँव में जा रही है।'

विस्मय से जानकी ने राधा की ओर देखा। किन्तु राधा ने कहा—'हाँ, ताई! मेरा तबादला हो गया है।'

'कब हुआ? कैसे हुआ री, राधा?' जानकी ने चकित बनकर पूछा।

राधा बोली—'इसी सप्ताह आदेश मिला है।' उसने कहा—'ताई, गाँव के समाज में अच्छा लगेगा। खर्च भी कम होगा।'

ताई ने साँस भरी—'तो यह कह न कि ससुराल न गई, तो दूसरी दिशा की तरफ मुड़ गयी। आखिर इस ताई को अकेली छोड़ने पर तैयार हो गयी।'

लेकिन उसी समय अतुल कुर्सी छोड़कर खड़ा हो गया। वह माँ की ओर देखकर बोला—'माँ, डिस्ट्रिक्ट बोर्ड का चेयरमैन मेरा मित्र है। मैं राधा का तबादला रुकवा दूँगा। गाँव में नहीं जाने दूँगा।'

किन्तु इतना सुनते ही राधा आतुर बन गयी—'न, न, आपको मेरी कसम! इस विषय में ज़रा भी मुँह न खोलियेगा। किसी से न कहियेगा। यह तो मेरी आकांक्षा थी, भगवान ने पूर्ण की।'

माँ बोली—हाँ, भैया ! राधा को जाने दे। यहाँ कलकल है। विवाद है। उत्पीड़ना है। खर्चीला शहर है।' उसने कहा—'मैं दूसरे की क्या कहूँ, अब तो स्वयं मेरा दम घुटता है। मन कहीं भागने को करता है। मुझे तो लगता है कि यह शहर का इन्सान किसी सड़े हुए चौबच्चे में पड़ा प्राण तोड़ रहा है। ऊपरी साज-सज्जा है, चिकनाहट है, परन्तु अन्दर से सभी का मन कोलाहल से भरा है। जैसे कोढ़ का पीब चू रहा है, प्रत्येक इन्सान के शरीर से!' इतना कहते हुए जानकी लौट गयी।

तभी अतुल ने माँ के दिये हुए पाँच सौ रुपये उठाये और राधा की ओर बढ़ा दिये।

देखकर राधा ने कहा—'यह क्या ! कैसे रुपये हैं ये ?'

अतुल बोला—'तुमने अनुराधा को दिये थे न ! वही हैं।'

'अच्छा ! तो यह कहिये, श्रीमानजी कर्जा उतार रहे हैं।' वह बोली—'परन्तु ये रुपये मैं नहीं लूँगी। मैंने जो रुपये खर्च किये, वे मेरे परिश्रम के थे। ये तो आपको ताई ने दिये हैं। जब आप अपने परिश्रम से उपार्जित करके देंगे, तब लूँगी।' यह कहते हुए वह हँसी—'आजकल लेन-देन में सूद-दर-सूद भी चलता है। जब तक आप देंगे, तो कुछ उनका सूद भी हो जायगा। यह समझ लीजिये कि मैंने रुपये एक साहूकार के पास रखे हैं। मुझे विश्वास है कि वे सुरक्षित हैं।'

अतुल बोला—'राधा देवी, मेरे पास कभी पैसा नहीं होगा। और अब तो निश्चित रूप से नहीं होगा। मैं अब पैसे के पीछे नही चलूँगा। देखता हूँ, रोटी खाने भर को मेरे पास है। तो तब, पैसे का चिन्तन करके मैं व्यर्थ में इस जीवन को बोझीला नहीं बनाऊँगा।'

किन्तु राधा ने जैसे किसी अधिकार को लेकर कहा—'देखिये ये आपकी अटपटी बातें हैं। किसी के समझने योग्य नहीं। आत्मिक और

शारीरिक उन्नति के साथ आदमी भौतिक तरक्की भी चाहता है। तब आपको पैसा क्यों नहीं चाहिए। न, मैं तो कहूँगी की आप पैसा उपार्जित कीजिये। बीबी बच्चे वाले बनिये और वैभव का जीवन बिताइये।'

सुनकर, अतुल मुस्कराया—'अजी मास्टरजी ! क्या स्कूल का काम यहाँ भी याद आ गया ? हो सकता है, यह भूल गयी हो कि बचपन में मैने तुम्हें चपतियाया था। अधिक लेक्चर दोगी, तो अब भी घूँसा मार दूँगा।'

राधा हँस दी—'रहे न कोरे पुरुष ! औरत पर हाथ उठाना खूब पसन्द आता है।'

किन्तु उसी समय अतुल गम्भीर बन गया। उसने कमीज़ पर कोट पहन लिया और राधा से बोला—'आओ, बाज़ार चलें। माँ ने कहा है, तो कुछ कपड़ा ले आयें।'

राधा बोली—'नहीं आप जाइये।'

किन्तु अतुल ने उसका हाथ पकड़ लिया और कहा—'अब अधिक बहको मत ! तुमने मुझे आज बरबस ही चिन्ता में डाल दिया है। अस्पताल में खून देकर जीवन दिया और यहाँ घर आते ही मेरा गला घोटना पसन्द किया।'

यह सुनते ही राधा और समीप आ गयी। वह बडे भावनापूर्ण भाव में अतुल को देखती हुई बोली—'यह आप कहते हैं। क्या सच, मैं दोषी बन सकूँगी ! मर जाऊँगी लेकिन अपनी ओर से आपको कष्ट नही पाने दूँगी ! यह समझिये, यह मेरी आराधना है, जीवन की आस्था है।'

परन्तु अतुल बोला कुछ नहीं, वह राधा को साथ लेकर घर से निकल गया। कुछ ही देर में जब बाज़ार पहुँचा, तो सबसे पहला काम

उसने यह किया कि एक दो सौ रुपये की साड़ी खरीद ली। जब वह अपने लिए कपड़ा लेकर वहाँ से चला, तो साड़ी का बण्डल राधा को देता हुआ बोला—'जब उस नये गाँव में पहुँचो, तो इस साड़ी को पहनना।'

चकित बनकर राधा ने कहा—'यह सब क्या है! मुझे साड़ी नही चाहिए। जितना कपड़ा लेना था, वह नहीं लिया गया।'

अतुल हँस दिया—'देवीजी अब हम दोनों में एक समझौता हो जाना चाहिए। कहीं मैं तुम्हारा आदेश मानूँ और कही तुम! इस समय तुम्हें मेरा आदेश मानना पड़ेगा।'

राधा ने साँस भरी—'हाँ, यह तो देखती हूँ। देर से मानती हूँ। इस विशाल जन-समाज में एक तुम हो कि जिसकी बात के समक्ष मुझे अपना सिर झुकाना ही पड़ेगा।'

अतुल भी हँस दिया—'इस जिन्दगी भर के लिए?'

राधा ने अपने स्वर पर जोर दिया—'जी जनाब! यह ज़िन्दगी कितने दिन की है! हवा में पत्ते की तरह उड़ती है। मैं तो प्रायः सोचती हूँ इस ज़िन्दगी के पत्ते पर अन्य जिन्दगियों की भी तह जम जाना चाहती है। अब भी शायद यह पत्ता अकेला नहीं, बीती जिन्दगियाँ इसके साथ लगी है।'

दोनों बाजार से निकल चले। जब वे एक तांगे में बैठ कर सीधी रेखा में जाती सड़क पर बढ़ चले, तो तभी रास्ते में लता का बगला पड़ गया। लता की माँ बंगले के लॉन में खड़ी थी। राधा ने उसे देखकर भी कुछ नही कहा। किन्तु सहसा अतुल के मुँह से निकला-'हाय, यह बेचारी माँ,' वह बोला—'धनिक पति की पत्नी बनकर भी यह

निरीह है, एकाकी है। लड़की को बाप का दुलार मिला है, तो यह उसकी चाल-ढाल देखकर कुढ़ती है।' और तभी उसने बताया—'आजकल लता इस नगर में नही है। दूर पर्वतीय क्षेत्र में पहुँची है।

राधा ने चाहा कि पूछे किसके साथ ? किन्तु इतना उसने पूछा नहीं।

तभी ताँगा नदी तट पर पहुँचा और रुक गया। अतुल ने पैसे दिये और वह राधा के साथ नदी तट की ओर बढ़ गया।

——

बीस

नर्बदा नाम की एक अध्यापिका अपेक्षाकृत राधा के अधिक समीप थी। जिस दिन लता स्कूल में पहुँचकर राधा से अपशब्द कह आयी तो संयोग से उस समय नर्बदा समीप के कमरे में थी। वह दोनों की आवाज़ सुनकर वहाँ आ गयी। उसी क्षण लता लौट पड़ी थी। उसका रोष से भरा रूप नर्बदा भी देखने में समर्थ बन सकी थी।

संयोग से उस दिन जब स्कूल की छुट्टी हुई, तो नर्बदा ने अत्यन्त सहानुभूति के साथ राधा को अपने साथ लिया और स्कूल से निकल पड़ी। उन दोनों के घर लौटने में पार्क पड़ता था। नर्बदा खिन्न और उन्मन बनी राधा को वहाँ ले गयी। जब दोनों एक बेंच पर जा बैठीं, तो तभी नर्बदा ने अप्रत्याशित रूप से कहा—'राधा, बात इतनी बढ़ेगी, मैं नहीं जानती थी।' वह बोली—'आज स्कूल में आयी लता की बात मैंने भी सुनी। वैसे मुझे पता था कि अतुल बाबू के घर तुम्हारा भी आना जाना है। यह बात मेरी एक अन्य साथिन ने कही थी।'

राधा ने कहा—'किन्तु उस घर जाने का यह अर्थ तो नहीं कि मैं और अतुलबाबू जीवन में बँध जाना चाहते थे।'

सुनकर, नर्बदा सूखे भाव से मुस्करायी । वह कुमारी नहीं, विवाहिता थी । एक बच्चे की माँ बन चुकी थी । राधा की बात लेकर बोली—'राधा बहिन, तुम्हारी दृष्टि में उस घर जाने का अर्थ भले ही अन्य हो, परन्तु समाज यही समझेगा । मैंने इस बात की एक दो जगह और चर्चा सुनी । परन्तु संकोचवश तुमसे कह नहीं सकी ।'

एकाएक रोष से भरकर राधा बोली—'समाज मूर्ख है, कमीना है ।'

इतनी बात से नर्बदा सहसा अपनी बात नही कह सकी । वह चुप रह गयी । उसने देखा कि सचमुच राधा को उसकी बात पसन्द नहीं आई । और वह साथिन थी । दोनों एक ही स्कूल की अध्यापिका थीं । अतएव प्रस्तुत बात को विवाद में ले जाना नर्बदा को पसन्द नहीं था । अन्ततः उसकी सहानुभूति राधा के साथ थी ।

तभी राधा ने कहा—'मेरे पिता नहीं हैं, माँ बूढ़ी है, इसलिए समाज मुझे हीन दृष्टि से देखता है । वह मेरी विपन्नता का भी उपहास करना चाहता है ।'

किन्तु नर्बदा ने अत्यन्त ममत्व लिये स्वर में कहा—'न, राधा ! भला समाज को इससे क्या लेना-देना । और तुम अपने पैरों पर खड़ी हो । समर्थ हो । सुशिक्षित हो ।' वह बोली—'लेकिन दुर्भाग्य से तुम कुमारी हो । युवा हो । सुन्दर हो । अतएव, समाज यह देखता है कि सम्भ्रान्त परिवार के अतुलबाबू से तुम्हारा सम्पर्क और सान्निध्य इसी-लिए है कि तुम उस सुन्दर युवक को अपना पति बना सको । हाँ, राधा.........

एकाएक राधा ने कहा—'नर्बदा, मैंने ऐसा कभी नहीं कहा ।'

नर्बदा कड़वे भाव से मुस्करायी—'बहिन, भले ही तुमने मुँह से न कहा हो, परन्तु ऐसा चाहा जरूर होगा । यह स्वाभाविक है । पुरुष

के समान नारी की भी यही कल्पना है। इसी साधना पर वह जीवित रहना चाहती है।'

राधा ने कहा—'मेरी मां अन्यत्र विवाह की बात चला रही है।'

नर्बदा तीखे भाव में बोली—'परन्तु तुम्हारी आस्था अतुल बाबू में है।' उसने कहा—'आज बताती हूँ तुम्हें, मुझसे मेरी पड़ौसिन ने सर्वप्रथम यह बात कही थी कि तुम्हारी साथिन राधा उस अतुल बाबू को पकड़ना चाहती है इसलिए उस घर जाती है। यह भी उसी ने बताया कि अतुलबाबू की बात एक बड़े घर में चल रही है। वहाँ लाखों रुपया है, प्रतिष्ठा है। जिस लता की बात उसने कही, वह मैंने आज ही देखी। कह सकती हूँ, वह भी अपूर्व है, सुन्दर है। तब ऐसी स्थिति में तुम्हारी और अतुल बाबू की समता कहाँ। वह व्यक्ति यदि उस सुन्दर लता की ओर जाये, तो यह स्वाभाविक है। मैं कहती हूँ, तुम्हें इस रास्ते से हट जाना चाहिए। अपने स्वार्थ के लिए किसी के जीवन में विष नहीं घोलना चाहिए।'

एकाएक राधा ने अपना सिर पकड़ लिया और कहा—'ओह ! तुम क्या कह रही हो, नर्बदा !'

नर्बदा उस समय अपने मन की बात कह चुकी थी। वह खाली थी। अतएव, गम्भीर बनी हुई वह फिर बोली—'बहिन राधा, तुम मेरे अधिक समीप हो। मेरी तुमसे सहानुभूति है। आज तुम्हारे साथ जो कुछ हुआ, वह अब भी मेरे मन पर साँप की तरह रेंग रहा है। मेरा बस चले तो मैं उस लता का गला घोट दूँ। वह सफेद कबूतरी स्कूल में आयी और चहक कर लौट गयी। उस समय तुमने तो अनुभव नहीं किया, परन्तु मेरे मन में बात थी कि उसकी शानदार मोटर और ठाठदार परिधान सभी अध्यापिकाओं की निगाह में गड़े थे। तुम वस्तु-स्थिति समझो, समाज उसी का पक्ष लेगा, तुम्हारा नहीं। इसलिए कि

तुम्हारी उसकी कोई तुलना नहीं। वह वैभवपूर्ण जीवन में पली है। उसी वैभव की ओर अतुल बाबू को प्रेरित कर रही है। दोनों में समानता है, एकता है। तुम समझती क्यों नहीं, इस समाज में पग-पग पर रेखाएँ खिंची हैं। वे व्यक्ति को बाँटती है, दूर-दूर करती है। तुम निर्धन हो। सामान्य अध्यापिका की नौकरी पर लगी हो। सभी को पता है कि तुम्हारी नौकरी के पैसों से मां का और तुम्हारा भरण-पोषण होता है। जिन्दगी का कारवाँ चलता है। भला यह वर्गभेद तुम्हें अतुलबाबू से मिलने देगा ? वह युवक तुम्हारी तरफ़ आयेगा ? मैं कह सकती हूँ, कभी नहीं। उसकी दिशा और है। विचार और जीवन की आकांक्षा और।'

नर्बदा से इतनी लम्बी बात सुनकर राधा एकाएक कुछ कह नहीं सकी। उसका सिर झुक गया।

लेकिन तभी नर्बदा ने फिर कहा—'बहिन, मैं विवाहित और एक बच्चे की माँ हूँ तो क्या, तुम्हारा मर्म समझती हूँ। वह बड़े बाप की बेटी लता आज जिस तरह तुम्हारे मन को घायल कर गयी, व्यथा पहुँचा गयी, मैं उसे अनुभव करती हूँ। इसी से मैं कहती हूँ कि तुम वह पथ छोड़ दो। वह भयावना है, काँटों से भरा है। तुम अपनी सीमा से बाहर मत जाओ। तुम यह ध्रुव सत्य समझो कि अतुलबाबू अपनी परिधि को लांघ कर तुम्हारे पास नहीं आयेंगे। अन्ततः वह उसी ओर झुकेंगे।'

उस समय सन्ध्या आ गयी थी। सूरज छुप रहा था। सर्दी भी बढ़ चली थी। अतएव, राधा काँप रही थी।

नर्बदा ने कहा—'आओ उठो, घर चलो।' वह बोली—'आज मुझे तुमसे यह कहना ही था। तुम्हारा अपमान हुआ है। मुझे लगा कि मेरी अपनी बहिन को बदनाम करने का प्रयत्न किया गया है। वह

सुनते ही, राधा का सिर चकरा गया। वह तुरन्त ही इस बात को भूल गयी कि अभी-अब उसकी और नर्बदा की अतुल बाबू पर बात चली है। भले ही वह नर्बदा से कह नहीं सकी, परन्तु उसके मन में बात थी कि अब वह अतुल बाबू से नहीं मिलेगी। उस घर भी नहीं जायेगी।

राधा को चुप देखकर ही, माँ ने फिर कहा—'अरी, खड़ी है। चुप है। जाकर देख तो, क्या हाल है, उस बेचारे का! हाय, एक ही चिराग है, उसकी माँ के जीवन का! वह बुझ गया, तो वह भी बुझ जायगी......जानकी मर जायेगी।......'

एकाएक जैसे किसी बिच्छू ने राधा के डंक मारा हो। वह चीख पड़ी—'माँ।'

माँ ने कहा—'बेटी, बड़ा भला घर है वह! हम पर बड़े अहसान हैं। अतुल हजारों में एक है। तू अस्पताल जा, उसकी माँ को धीरज दे।'

राधा लौट पड़ी—'मैं जाती हूँ माँ।'

सड़क पर जाकर उसने रिक्शा किया और अस्पताल की ओर चल दी। वहाँ पहुँचते ही, राधा ने देखा कि अतुल के सिर में पट्टी बँधी हैं। कपड़ों पर भी खून है। वह बेहोश है। यह देखते ही वह आहत भाव से जैसे ही जानकी से चिपटी, तो फफक कर चीख उठी—'यह क्या हुआ, ताई!'

उस समय जानकी रो रही थी और राधा। पलंग के आस-पास लोगों की भीड़ लगी थी। उस कारुणिक और भयावने दृश्य को देखकर राधा ऐसे खो गयी कि मानो वह सचमुच ही अस्तित्वहीन थी, निरालम्ब!

किन्तु उस रात के बाद जब राधा अगले दिन स्कूल गयी, तो तभी प्रधान अध्यापिका ने उसे अपने पास बुलाया। उसे ऊपर के अधिकारियों का पत्र दिया और कहा—'तुमने एक बार कहा था कि इस नगर से

कहीं अन्यन्त्र तुम्हारा तबादला हो, तो मान्य होगा । यह पत्र पढ़ लो । यदि इस गाँव में जाना पसन्द हो, तो तुम्हें प्राथमिकता दूँगी । मैं लिख दूँगी ।'

पत्र पढ़कर राधा ने कहा—'मुझे स्वीकार है ।'

किन्तु राधा के लिए स्कूल से तबादला कराना आसान हो सकता था, लेकिन परिस्थितियों ने उसे जिस प्रकार अतुल के और समीप ले जाकर खड़ा कर दिया, उससे मुँह मोड़ना उसके लिए सरल नहीं था । नियति का जाने कौनसा अदृष्ट आदेश उसे मिला कि जिस व्यक्ति से दूर होने की बात उसने सोची, उसे अपना खून तो दिया ही, अपने मुंह पर डाक्टर द्वारा उस अतुल की पत्नी सुनना भी उसे पड़ गया । कदाचित् यही कारण था कि राधा उस सप्ताह मन और मस्तिष्क से अत्यन्त दुरुह और गम्भीर बनी थी । माँ ने जिस स्थान पर उसका सम्बन्ध करना निश्चित किया, सगाई का दिन भी रख दिया, तो राधा ने स्पष्ट रूप से माँ को सुना दिया कि वह विवाह नहीं करेगी । अभी नहीं कर सकेगी ।

लेकिन माँ के समक्ष न सिद्धान्त का प्रश्न था, न विवेक का । उसने सामान्य रूप से समझ लिया कि अतुलबाबू की अवस्था देखकर ही इस राधा को यह कहना सूझा है । अतएव, उसने भी निकट समय में पुत्री के विवाह का प्रश्न छोड़ दिया ।

फलस्वरूप यों राधा को स्थान परिवर्तन किये एक सप्ताह से ऊपर हो गया । अतुल उसका कोई समाचार नहीं पा सका । वह सप्ताह धीरे-धीरे महीने में परिवर्तित हो गया । तभी एक दिन जानकी ने कहा—'अरे, अतुल ! देख तो, राधा नहीं आई । इधर उसकी माँ भी नहीं दिखायी दी ।'

अतुल उस समय अपने काम में व्यस्त था । मुंशी पास बैठा था ।

माँ की बात सुनकर उसने कह दिया—'सुनता हूँ, बीच में राधा आई और अपनी माँ को भी साथ ले गयी। मकान बन्द कर गयी।'

चकित बनकर जानकी ने पूछा—'राधा आई थी ?' वह बोली—'हे राम ! वह आई भी और बिना मिले चली गयी। उसकी माँ भी कह कर नहीं गयी।'

अतुल ने इस बात का जवाब नहीं दिया। वह अपने कागजों को देखने में लगा रहा। जानकी उस कमरे से लौट गयी।

किन्तु जब अतुल कचहरी जाने लगा, तो उसने जानकी से कहा—'मै आज बाहर जाऊँगा, माँ। कल कचहरी बन्द है, परसों आऊँगा।'

सहसा जानकी ने पूछा—'क्या राधा के पास जायेगा ?' वह बोली—'अरे, उसके पास भी जाना चाहिए। जवान लड़की है, गाँव मे गयी है। शहर में पैदा हुई और अब तक शहर में रही। भला गाँव के रहन-सहन में वह कैसे सुख पायेगी ?'

अतुल बोला—'माँ, गाँव में भी आदमी रहते है। वे अधिक सहृदय और भले होते हैं। शहरों में तो लोग एक दूसरे को ठगना अधिक पसन्द करते हैं।'

जानकी ने साँस भारी—'हाँ, बेटा ! ये सफेदपोश इन्सान मन से घिनौने और काले-कलूटे हैं।' यह कहते ही जानकी के मन में बात आई कि अतुल से कहे, कल लता की माँ आई थी। वह सगाई भेजने का दिन पूछ रही थी। परन्तु उस समय जाने क्या सोचकर जानकी चुप रह गयी। निश्चय ही, उसके मन में बात थी कि यह अतुल जब स्वयं ही उस राधा के पास जा रहा है, तो जाने दे। लता की बात छेड़कर शुभ काम में व्यवधान न आने दे। क्योंकि उसने स्वयं लता की मां से कह दिया कि अब उसने विवाह की बात अतुल पर छोड़ दी है। वह जिस दिन सगाई के लिए नियत करेगा, मैं खबर भेज दूँगी।

कदाचित् जानकी का लता की माँ से इतना कहने का अभिप्राय केवल यही था कि पुत्र के विवाह का प्रश्न अब विवाद का बन गया है, उस वृद्धा ने इस बात को सहज ही समझ लिया कि जिस राधा ने अस्पताल में अतुल की इतनी सेवा की, अपना खून तक दिया, अब अपने विवाह का प्रश्न अतुल स्वयं निश्चित करेगा। वह लाभ-अलाभ की बात सोचेगा। पात्र-अपात्र को देखेगा। और जब उसका अतुल अपने-आप ही उस राधा के पास जा रहा है, तब भला, वह इतनी अबुद्धिमत्ता का काम क्यों करे कि शुभेच्छा की ओर अग्रसर होते हुए बेटे के मन मे विष घोल दे, उसका मन राधा की ओर से हटा दे ?

फलस्वरूप, अतुल घर से कचहरी चला गया। वह एक छोटी अटैची भी साथ ले गया, जिसमें दो-चार किताबें और दो-चार कपडे थे, यह सब समान उसने स्वयं ही रखा। माँ से नहीं कहा। यह भी संयोग की बात थी कि उस दिन कचहरी में अतुल का एक बड़ा मुकदमा था। उसके निर्णय का दिन था। जब वह जज की अदालत में गया तो निर्णय उसके पक्ष में रहा। जिसका परिणाम यह हुआ कि अतुल को वहाँ पर एकत्र समाज का प्रचुर रूप से साधुवाद प्राप्त हुआ। न्याय और अन्याय की तुला पर वह मुकदमा टिका था। नगर के समाज को इस बात का भी ज्ञान था कि उस मुकदमे में एक ओर प्रचुर धन बहाया जा रहा था, बड़े वकीलों का योगदान था, किन्तु इसकी ओर जहाँ धन का अभाव था, वहाँ नगर की सुधारवादी संस्था के मन्त्री होने के नाते केवल एक अतुल ही वकील था। फिर भी यह स्पष्ट था, लोगों में चर्चा थी कि उस मुकदमे से समाज के व्यक्ति की कुरूपता, वीभतसता पूर्णरूप से नग्न होती दिखायी दी, जहाँ संवेदन-शील इन्सान की जगह क्रूर भाव लिये कोई दानव खड़ा था, जिसका स्वार्थ मानवता की लाश पर खड़ा दुन्दुभि बजा रहा था।

कदाचित् यही कारण था कि विद्वान जज ने अपना निर्णय देते हुए कहा, इस घटना से समाज के व्यक्ति का काला और वीभत्स रूप

दिखायी देता है। यह भी लगता है कि मनुष्य केवल अपना स्वार्थ देखता है। नारी के प्रति समाज की निष्ठा केवल वाणी तक परिसीमित है, व्यवहारतः वह नगण्य है, पुरुष उसे स्वीकार नहीं करता।

अपने फैसले में जज ने लिखा, जिस धन को मनुष्य ने अपनी आवश्यकता की पूर्ति का माध्यम बनाया, वह अब समाज के दिल और दिमाग पर छा गया है। धर्म, परम्परा और जीवन के प्रति श्रद्धा का भाव मनुष्य से तिरोहित हो गया। जिसका दुष्परिणाम निरीह व्यक्ति और नारी को भोगना पड़ा है।

और मुकदमा था, एक युवती के पिता की ओर से, जिसका कि निकट समय में विवाह हो चुका था, दहेज देने में असमर्थ। संयोग से उसी समय उस युवती के पति को दूसरा घर मिला। सुन्दर कुमारी और उसके पिता के पास पैसा। फलस्वरूप विवाह हो जाना निश्चित हो गया। विवाह का दिन आया और जब बरात उस सम्पन्न लड़की के द्वार पर पहुँची, तभी पुलिस ने दूल्हा और उसके पिता को गिरफ्तार कर लिया। क्योंकि उन्होंने पहली विवाहिता को बीमारी से मरी हुई घोषित किया था। जब कि उसे मारा गया था।

नगर में यह बात किसी से छिपी नहीं थी कि उस मुकदमे में आरम्भ से अन्त तक प्रेरणा का स्रोत केवल अतुल था। उसने अपनी जेब से पैसा भी लगाया और मुकदमा भी लड़ा। लड़के को और उसके पिता को लम्बा कारावास दण्ड तो मिला ही, साथ ही जज द्वारा लड़के की होने वाली भावी पत्नी की भर्त्सना की गयी और कहा गया कि वह सम्पन्न घराने की शिक्षित और कुमारी होते हुए चरित्रहीन है। जज ने स्वीकार किया कि उसका अपराध सिद्ध नहीं हो सका, परन्तु अपनी पत्नी का खून करने वाले युवक से उसका शैक्षणिक काल से मेल-जोल था। निश्चय ही, इस हत्या में उसकी प्रेरणा भी सहायक रही। विद्वान जज ने खेद प्रकट किया कि सह-शिक्षा का दुरुपयोग हो

रहा है। माता-पिता अपनी सन्तानों की गति-विधि के प्रति उदासीन है। समाज की कुमारियाँ पथ-भ्रष्ट हों, युवक वासना के दास बनकर क्रूर हों, यह किसी भी जाति के लिए शोभनीय नहीं।

किन्तु उसी दिन जब अतुल नगर से चल कर संध्या होते-होते एक गाँव में प्रविष्ट हुआ, तो पनघट पर खड़ी गाँव की कुमारियाँ और बहुएँ विस्मयभाव से उसे देखने लगी। वही पर अतुल ने एक युवा लड़की से स्कूल का रास्ता जानना चाहा।

लेकिन उस युवती ने तुरन्त ही कहा—'आप राधा देवी के पास जायेंगे ?'

अतुल ने बताया—'हाँ, वहीं।'

'तो चले जाइये, नाक की सीध में। पश्चिम को मुड़ जाइयेगा। वहीं स्कूल है।' वह बोली—'लेकिन राधा बहिन इस समय स्कूल में क्या मिलेंगी। वे तो चमारों के पुरवे में होंगी। उनकी औरतों को कुछ बता रही होंगी, सफाई से रहने की बात। खाना बनाने की बात।' यह कहते हुए वह स्वतः ही मुस्कराई।

किन्तु अतुल आगे बढ़ गया। उस पनघट के कुए से आगे बढ़ते ही उसने सुना, किसी औरत ने दूसरी से कहा था—'कहीं ब्याहता आदमी न हो, यह राधा बहन का !'

और उत्तर में कहा गया—'लगता तो ऐसा ही है। कहीं दूर से आया है।'

तब तक अतुल आगे बढ़ गया। कुछ दूर चल कर ही मोड़, था, वह उधर ही बढ़ गया। पास ही एक मकान पर बोर्ड लगा था—प्राईमरी स्कूल।

उस स्कूल के द्वार से प्रवेश करते ही जब अतुल अन्दर प्रविष्ट हुआ, तो देखता है कि कुछ छोटे-छोटे बच्चे खड़े है और राधा एक कुर्सी पर बैठी उन्हें कुछ बता रही है।

एकाएक अतुल को देखते ही किंचित वह विस्मित बनी और तभी उल्लास भाव से इस तरह उसकी ओर बढ़ गयी कि मानो उसका कोई निकटतम आत्मीय सहसा उस स्कूल के द्वार पर आ चढ़ा था। पास आते-आते राधा ने कहा—'ओ, आप !' और उसने तभी सानुमोदित बन, अतुल की अटैची को अपने हाथों में ले लिया।

इक्कीस

अतुल को एकाएक गाँव में देखकर राधा विस्मित तो हुई, परन्तु साथ ही उसके मन में बात आई कि अकेले क्यों हैं ? लता साथ नहीं ? उसका विश्वास था कि लता अब और अधिक निकट आयी होगी। अतुल की और उसकी सगाई हो गयी होगी। किन्तु यह बात मन में आकर भी राधा चुप रही। कुछ कह नहीं सकी। उसने अतुल के लिए चाय तैयार की और नाश्ता दिया। तश्तरी में रखे पेड़ों को देखकर अतुल बोला—'तो गाँव में मिठाई मिलती है ?'

राधा मुस्करायी—'यहाँ सभी कुछ मिलता है।'

अतुल ने कहा—'स्थान अच्छा है। साफ आबहवा है। चारों ओर हरे-भरे खेत हैं।' तभी उसने बताया, कि गाँव का पनघट मुझे सर्वप्रिय लगा। वहीं पर एक युवती से स्कूल का पता पूछा। रंग-बिरंगे परिधानों में वे महिलाएँ मुझे अपूर्व लगीं।'

राधा ने हँस कर कहा—'यदि आप कवि होते, तो यहाँ अनुभूति पाते। ममत्व और वात्सल्य का रूप भी इस गाँव में देखते।'

अतुल ने कहा—'कवि भी आदमी होता है। वह केवल भावना में जीवन का रूप देखता है।'

राधा ने कहा—'लेकिन वह व्यक्ति किसी वकील की तरह पाप को पुण्य नहीं बनाता। पैसा और यश पाना भी उसका उद्देश्य नही होता।'

बात संगत थी, परन्तु वह अतुल को चुभ गयी। उसे लगा कि इस राधा ने सीधा उस पर प्रहार किया है। परन्तु वह चुप रहा। अपितु उसे अच्छा लगा कि यह राधा सत्य को बताने में समर्थ हुई।

उसी समय वहाँ कुछ युवा लड़कियाँ आईं। अतुल को देखकर एक बोली—'बहिन जी, यही आपके पति हैं।'

राधा ने हँस कर कहा—'अरी, नही। ये वकील हैं। शहर के पड़ोसी हैं। मिलने आये हैं।'

लड़की चुप रह गयी। परन्तु अतुल ने तभी अनुभव किया कि सच-मुच, यह राधा अब बदल चली है। अस्पताल में उसने 'पति' और 'पत्नी' के सम्मिलन पर मौन रखा था, परन्तु, गाँव में जब लड़की ने प्रश्न किया, तो उसने तुरन्त अपने सम्बन्ध का स्पष्टीकरण कर दिया। कुछ देर बाद जब वह राधा की माँ से मिला, तो तब भी उसे वह व्यव-हार नही मिला, जिसे पाने का वह अभ्यस्त हो गया था।

तभी राधा ने अतुल की ओर देखा—'आप गाँव में चलेंगे ? मैं इस समय कुछ घरों में जाती हूँ। जो प्रौढ़ और युवा नारियाँ हैं, उन्हें पढ़ाने के साथ कुछ बताने का प्रयत्न करती हूँ। ये लड़कियाँ उन्हीं घरों की हैं। अभी-अब जंगल से लौट कर आई हैं।'

एक लड़की ने कहा—'बहनजी, मैं ये मटर की फली लाई हूँ।'

दूसरी बोली—'ये गन्ने हैं।'

राधा ने वे चीज़ें रख लीं और खड़ी होकर बोली—'आज मैं अधिक देर नहीं रुकूँगी। मेहमान आये हैं तो इनके लिए भोजन बनाऊँगी।'

अतुल भी खड़ा हो गया। उसने कहा—'मैं खेतों पर जाऊँगा।' तुम जाओ। तुम्हारे काम में बाधक नहीं बनूँगा।' यह कहते हुए वह उस मकान से निकल खेतों की ओर बढ़ गया। चारों तरफ हरे-भरे खेत थे। वे सुहावने लगते थे। जब अतुल दो खेतों के मध्य से निकल रहा था, तो तभी उसने देखा कि दो पंछी एक पेड़ पर बैठे थे। उन दोनों की चोंचें मिली थीं। आँखें बन्द थीं। बलात् अतुल को लगा कि यही जीवन है। यही जीवन की पावन वेला है।

किन्तु तुरन्त ही अतुल उदास पड़ गया। अपने पर झुंझला गया। उसने देखा कि वह जीवन के झंझावात में पड़ा है। सुख और शांति से दूर है। उसे जिस प्रकार जीवन में आत्मसात् होना चाहिए, वैसा नहीं हो रहा।

उसी समय एक वृद्ध किसान उस ओर आया। अतुल ने देखा कि वह जर्जरकाय है। कमर झुकी है। आँखें माथे में धँस चुकी हैं। वह लाठी का सहारा लिये है। पास आते ही उसने अतुल की ओर देखा। पहचानना चाहा। किन्तु वह समझ गया कि कोई परदेसी है। गाँव में आया है। अतएव, उसने पूछा—'शहर से आये हो, भैया ?'

अतुल ने कहा—'जी, हाँ।'

'अच्छा, अच्छा, जमींदारबाबू के यहाँ आये होगे।' उसने अतुल की वेश-भूषा पर दृष्टिपात किया।

किन्तु अतुल ने कहा—'मैं स्कूल की मास्टरनी के पास आया हूँ।'

'अरे, उस राधा बाई के पास ?' वृद्ध ने कुछ उत्साहित होकर कहा—'बड़ी अच्छी है, वह ! गाँव में घर-घर जाती है। बच्चों को पढ़ाने के साथ बड़ों को भी पढ़ाती है। वह तो जिन्दगी बिताने का शऊर सिखाती है।'

अतुल ने बात सुन ली, लेकिन चुप रह गया। राधा इस गाँव मे आते ही इतनी जल्दी प्रशस्ति पा गयी, यह उसे अच्छा लगा। वृद्ध से पूछा—'क्या खेत देखने आये हो, बाबा ?'

'हाँ, बाबू ! अब मुझे यह भी करना पड़ गया।' वह बोला—'भाग्य की बात है, एक जवान लड़का था, वह पिछले दिनों मर गया। अब उसकी बहू, बच्चा है। बटाई पर खेत दिया है, उसी से कुछ मिल जायगा।'

अतुल ने कहा—'तो बुढ़ापे में तुम पर बोझ पड़ गया।'

'अरे, बाबू ! यही सब तो है, इस जिन्दगी में। गर्मी है, बरसात है और जाड़े हैं। सुख:दुख तो धूप-छाँह की तरह आते-जाते हैं।'

वृद्ध से उस दार्शनिक बात को सुनकर अतुल अत्यन्त प्रभावित हुआ। अपनी बात कह कर बाबा आगे बढ़ गया। अतुल उन खेतों के चक्कर काट कर फिर गाँव में पहुँच गया। वह जब गाँव के बाहरी हिस्से में प्रविष्ट हुआ, तो संयोग से वहीं पर एक बड़े चबूतरे पर बैठी राधा दिखाई दी। देखकर, सभी ने अपना मुँह उठाया। अतुल समीप पहुँच गया। उस समय राधा गाँव की स्त्रियों को कपड़े मशीन पर रखकर सीना सिखा रही थी। उसने देखा कि सभी पुराने कपड़े थे जिनमें पैबन्द लगाये जा रहे थे। इस प्रक्रिया को देखकर वह विस्मित बना। किन्तु तभी राधा ने बताया, 'जब कपड़े फटते हैं, तो सार-सम्भाल माँगते हैं। ये पुराने कपड़े भी अभी चल सकते हैं।' उसने पास बैठी जवान और प्रौढ़ा स्त्रियों से कहा—'इसी तरह पैबन्द लगाओ, अपने लहंगों में और ओढ़नियों में। अब मै जाती हूँ।' कहते हुए राधा खड़ी हो गयी।

जब वह अतुल के साथ चल पड़ी, तो रास्ते में बोली—'बड़ा गरीब समाज है, यह ! विपन्नता के अलावा शऊर भी नहीं है।'

अतुल ने कहा—'यहाँ अन्धेरा है। अभाव है।'

राधा बोली—'यह शहर वालों का काम है कि इधर देखें। इस समाज को उजाले में ले जायें।'

अतुल कड़वे भाव से मुस्कराया—'शहर के लोग इन गाँवों को चूसते हैं। इनके गाढ़े पसीने की कमाई लूटते हैं।'

राधा ने कहा—'नगर के लोग शिक्षित हैं, किन्तु गाँव वालों से अधिक अनुदार हैं। निःसन्देह, पाप अथवा भ्रष्टाचार यहाँ नहीं, उसका सृजन नगर के लोग करते हैं।'

मकान आ गया। राधा ने एक चारपाई पर कपड़े बिछा दिये। तभी उसने कहा—'मैं इस गाँव में आकर अभाव नहीं मानती। अपने को एकाकी भी अनुभव नहीं करती।'

उस समय अतुल के मन में बात आई कि राधा से प्रश्न करे, क्या उसे एकाकी रहना है, यों अविवाहित ही? परन्तु इतना उसने नहीं पूछा। बात रोक गया। देखा कि राधा की माँ ने साग बना लिया था। राधा तब पूरी बनाने बैठ गयी। जब वह खाना अतुल के समक्ष आया, तो हलुवे को देखकर बोला—'इतना खर्च नहीं करना था।'

राधा बोली—'मुझे घी-दूध खरीदना नहीं पड़ता। अन्न भी मोल नहीं लिया जाता। देखते हो, यह आलू-मटर का साग मुफ्त में ही आ गया।' उसने कहा—'यह गाँव है। यहाँ आत्मीयता है। मनुष्य की भावना है। नगर के लोग तो मनुष्यता का ढिंढोरा पीटते हैं, परन्तु गाँव वाले उसे जीवन में उतारते हैं। ये गरीब इन्सान भगवान के अधिक समीप रहते हैं।'

अतुल ने कहा—'आश्चर्य है कि फिर भी गाँव के लोग भूखे हैं, अभावग्रस्त हैं।'

राधा ने कहा—'यह शहर वालों का षडयन्त्र है। वकील लोग इसके प्रमुख उदाहरण हैं।'

अतुल ने बात सुनी और हँस कर रह गया। उसने खाना खा लिया और पड़ गया। उस दिन उसे कुछ पैदल चलना पड़ा था, अतएव, जल्दी ही सो गया। वह रात का दूध भी नहीं पी सका। गिलास उसी प्रकार पास में रखा रहा।

लेकिन जब प्रातः हुआ, तो अतुल समय पर उठ गया। नगर में रहते वह प्रातः घूमने जाता था, अतएव गाँव में भी घर से निकल पड़ा। जब जगंल में उसने हिरणों की चौकड़ी देखी, मोरों को नाचते पाया, तो उसका मन खिल गया। तभी उसके मन में आया कि यदि उसके पास समय होता, तो उस गाँव मे टिकता। कुछ दिन अवश्य रहता।

जब वह जंगल से लौटा, तो उसने पाया कि राधा ने दूध और हलवा उसके लिए तैयार कर दिया था। यह देखते ही वह बोला—'यह सब क्यों, राधा!'

राधा सहज भाव से मुस्कराई—'आप मेहमान हैं।'

अतुल ने कहा—'तब तो सीमा में बंध गया हूँ। सब जानते हैं, मेहमान देर तक नहीं रह सकता। तुम्हारी दृष्टि में मेरा अस्तित्व बढ़ने की अपेक्षा घट गया। लगता है, हम लोग जितने समीप थे, उससे हट गये हैं। मैंने यहाँ आकर भी कुछ खोया है, पाया नहीं।

राधा ने इतनी बात सुनी, तो सहसा वह कुछ बोल नहीं सकी। सिर झुकाये, पैर के अंगूठे से जमीन कुरेदने लगी।

किन्तु अतुल ने कहा—'राधा, इस गाँव में आकर मुझे तुम्हारा आतिथ्य नहीं पाना था, मनुहार पानी थी। तुम अनुभव नहीं करतीं कि मुझे अपने एकाकी जीवन में शांति नहीं मिलती।'

तभी, जैसे अज्ञात भाव में राधा बोल पड़ी—'क्यों, वह लता जो है। उसका वह वैभव भी आकर्षण प्रदान नहीं करता क्या?'

बरबस अतुल ने अनुभव किया कि राधा उस पर प्रहार करने चली

है। उसके मर्मस्थल पर चोट करना चाहती है। किन्तु उसने मन की बात रोक कर कहा—'हाँ, हाँ, वह लता है, उसका वैभव भी है। परन्तु क्या मनुष्य को इतने से तृप्ति होती है।'

राधा ने कहा—'तब तो ऐसे व्यक्ति का रोग असाध्य है। उसका उपचार किसी के पास नहीं।' यह कहते हुए वह व्यस्त बनी—'आज रविवार है न, मुझे अधिक काम रहता है। मैने स्वेच्छा से अपना काम बढ़ा लिया है।'

अतुल ने कहा—'यह अच्छा है। व्यस्तता में ही मनुष्य अपने विकारो का शमन करता है। कहो तो, आज क्या करना है ?'

राधा ने कहा—'आओ, चलो मेरे साथ। आप भी दर्शक बनना।' और वह अतुल को साथ लिये मकान से निकल पड़ी।

वहाँ से राधा सीधी गाँव के उस पार्श्व में पहुँच गयी कि जहाँ अछूत रहते थे। वहाँ आसपास दुर्गन्ध थी। जगह-जगह पानी के गढ्डे बने थे और उनमें मच्छर कुलबुला रहे थे। वही एक स्थान पर जाकर राधा ने कहा—'देखिये, यहाँ भी मनुष्य रहते है। यह कहिये, रखे जाते है। इन सभी घरों के लोग इस दुर्गन्ध में रहकर अनेक रोगों का शिकार बनते है।'

अतुल के देखते-देखते घरों की स्त्रियाँ और बच्चे वहाँ आ गये। एक जवान लड़की जिस बक्स को उठाकर लायी, राधा ने उसका ताला खोला। टिंचर, कुनेन और मल्हम आदि उस बक्स में रखे थे। जिन बच्चों के फुन्सियाँ निकली थीं, राधा ने स्वयं उनके ज़ख्म साफ किये। उन्ही पर मल्हम और पट्टियाँ बाँधी, सभी को कुनेन दी। जब वह उस काम से निवृत्त हो गयी, तो अतुल देखकर चकित रहा कि तभी राधा ने अन्य स्त्रियों के साथ बच्चों की धुलाई-सफाई करनी आरम्भ की। उनके पुराने कपड़े धुलवाये और साफ पहनाये। इतने कार्य में

जितनी तन्मयता और ममता राधा ने दिखायी, कदाचित् वह अतुल ने कभी नहीं देखी। इतनी तत्परता भी उसने नहीं देखी।

लेकिन उस कार्य का जब एक नया दृश्य अतुल के समक्ष आया, तो वह स्वतः ही भाव-विभोर हो गया। मानो वह प्रोग्राम सुनियोजित था। प्रति रविवार को होता था। कुछ ही देर में जवान लड़के और लड़कियाँ हाथो में झाड़ू लिये गाँव का गलिहारा साफ करने लगे। उसने देखा कि राधा उस कार्य में भी अगुवा थी। उनको प्रेरित कर रही थी। जब एक लड़की सफाई करने में भूल कर बैठी, तो तभी राधा ने उसकी झाड़ू पकड़ ली और स्वयं सफाई करने में लग गयी।

मानो अतुल की दृष्टि में वह एक अपूर्व नाटक का दृश्य था। वह इतना तन्मय बना कि आगे बढ़ कर उसने एक लड़के से झाड़ पकड़ ली और उस कार्य में लग गया। वह सफाई करते हुए कूड़ा गढ़ों में भरने लगा।

तभी सहसा वहाँ का समाज चकित बनकर देखने लगा कि गाँव में एक सुन्दर मोटर प्रविष्ट हुई है। जहाँ सब लोग सफाई का कार्य करने लगे थे, वह मोटर वहीं आकर रुकी। उस गाड़ी से सर्वप्रथम लता उतरी फिर उसके पिताजी। पिता-पुत्री उस दृश्य को देखकर चकित बने और बरबस हँस दिये कि अतुल के सभी कपड़े रेत से भरे थे। मुँह पर भी रेत थी। सिर के बालों में भी गलिहारे का कूड़ा-करकट आ गया था।

उसी समय लता ने मुँह बनाकर उपेक्षा भाव से राधा की ओर देखा और तब अतुल से कहा—'यह कोरी भावुकता है। इसमें क्या व्यावहारिकता है ?'

पिता ने कहा—'जो बात टिकाऊ नहीं, उसका करना बेकार है। जब गाँव वाले सफाई से नहीं रह सकते, तब शहर का कोई बाबू एक

दिन ग्राकर यह प्रदर्शन करे, तो इससे क्या गाँव का सुधार हो सकता है ? यह कार्य प्रचारात्मक है, कुछ ग्रौर नहीं ।'

लता ने कहा—'पापा, यह थोथा प्रदर्शन है ।'

किन्तु ग्रतुल मौन था । वह ग्रपने कपड़ों की धूल झाड़ कर ऊपर के नीले आसमान की ओर देख रहा था ।

पास जाकर लता ने कहा—'चलिये, हाथ-मुँह धोइये । अच्छा हुआ, स्कूल की मास्टरनी ने हमें ठीक पता बता दिया । ग्राप तो घर यही कह कर चले कि कहीं बाहर जाना है । परन्तु मुझे विश्वास था कि आप यहाँ आये होंगे ।'

ग्रतुल के मन में आया कि कह दे, तुम्हें यहाँ नहीं आना था । परन्तु वह इतना नहीं कह सका । वह सभी के साथ स्कूल चल दिया ।

स्कूल जाकर राधा ने लता के पिता की ओर देखा—'आप चाय लेंगे ।'

किन्तु उससे कहा गया—'नहीं, हम चाय-नाश्ता लेकर चले थे ।'

अतुल ने कपड़े बदल लिये । मुँह साफ कर लिया । उसी समय लता ने बढ़कर कहा—'ग्रब चलिये । गाँव देख लिया । सफाई का काम करके सेवा-कार्य का प्रदर्शन भी कर लिया ।'

उसके पिताजी ने कहा—'हाँ, अतुल जी ! हमें लौटना है । अब तो ग्रापको चलना है ।'

अतुल ने कहा—'जी, हाँ । जाना तो है । आज ही ।' यह कहते ही, वह दूर खड़ी राधा के पास गया और बोला—'ग्रच्छा राधा, स्थान देख लिया । रास्ता भी समझ लिया । अब जाऊँगा । कुछ ग्रन्यथा न समझ लेना, मुझे ग्राज लौटना भी था ।'

राधा ने कहा—'जाने वाले को भला कौन रोकता है ? ग्रपनी मंज़िल पर जाने वाला मुसाफिर क्या टिक पाता है ?'

अतुल ने बात सुन ली और आगे बढ़ गया। वह राधा की माँ के पास गया। फिर अपनी अटैची उठाकर बाहर आते हुए बोला—'चलिये मैं तैयार हूँ।' और वह राधा की ओर एक बार हाथ उठाते हुए स्वतः ही आगे बढ़ गया।

गाड़ी गाँव से बाहर निकल गयी। उसकी धूल दूर तक उड़ती गयी। किन्तु अपनी राह पर जाते हुए उस अतुल को इस बात का कैसे पता चलता कि अपने घर मे बैठी रह गयी राधा जब एकाकी बनी, तो बरबस उसकी आँखें भर आईं और वह उसके गोरे गालों पर बह गयी थीं।

बाईस

नगर की ओर लौटते हुए रास्ते में, लता के पिता ने बताया, अतुल जी, आज आपका हमारे घर आना ज़रूरी था। आज लता की साल-गिरह है। कल रात ही एक मास बाद लता ने इस घर में प्रवेश किया था। वह बोले—'आप तो इस बीच मिले ही नही, परन्तु लता को एक प्रकार से नव-जीवन मिला है। पहाड़ पर इसे फ्लू हो गया था। मुझे वहाँ जाना पड़ा। एक सप्ताह बाद ही मैं वहाँ से इस लता को लेकर लौटा हूँ।'

लता बोली—'हमारा आदमी आपके घर गया था। पता चला आप बाहर गये हैं। कहाँ गये हैं, यह मैंने अनुमान से समझ लिया।' उसने कहा—'अजीब बात है, आप भी उन देहातियों में जाकर ऐसे बने कि भूल गये, जो काम आप करने लगे, वह आपका नहीं था। वह एक सामान्य व्यक्ति के करने योग्य था।'

लता के पिता ने कहा—'निःसन्देह, वह केवल भावना का प्रदर्शन था। उसमें जन-कल्याण का भाव निहित नहीं था। सेवा-पथ पर अग्रसर होने का वह स्थायी रूप नहीं।'

किन्तु संयोग से उस समय अतुल की मनोदशा सर्वथा विपरीत थी।

यह तो सत्य था कि उस दिन ही उसे नगर लौट आना था। परन्तु जिस प्रकार वह आया, वह अप्रत्याशित रूप से स्वयं उसकी दृष्टि में अशुभ था। नगर में प्रवेश करते-करते उसके मन में बात आई कि वह पिता-पुत्री के साथ न आता, तो ठीक था।

फलस्वरूप, नगर में आकर उसने एक चौराहे पर गाड़ी रुकवायी और बोला—'मैं आऊँगा। सध्या-समय पहुँच जाऊँगा।'

लता ने अपने स्वर पर जोर देकर कहा— 'देखिये जरूर।'

उसके पिता ने कहा—'आपकी प्रतीक्षा होगी।' वह बोले—'आज लता की वर्षगाँठ पर सामाजिक रूप से मै इसके विवाह की घोषणा भी कर दूँगा। आगन्तुकों को तिथि बता दूँगा।'

अतुल ने बात सुन ली और अपना मत नहीं दिया। वह अटैची पकड़ कर घर की ओर चल दिया। वहाँ से घर समीप था, अतएव, वह कुछ ही देर में जब वहाँ पहुँचा, तो देखते ही, माँ हँस पड़ी—'अरे, आ गया, तू। मै समझती हूँ, वह लता उस गाँव में पहुँच गयी होगी।' वह बोली—'तूने तो मुझे बताया नहीं कि कहाँ जायेगा, परन्तु मैंने समझ लिया था कि राधा के पास जायेगा। कह तो, ठीक हैं माँ-बेटी? वहाँ गाँव में मन लग गया है, राधा की माँ का?'

अपने कमरे में जाते हुए अतुल ने कह दिया—'हाँ, माँ! वे दोनों ठीक हैं। वहाँ पर माँ-बेटी का मन भी लगा है।"

माँ भी अतुल के कमरे में पहुँच गयी। पास जाकर बोली—'तो आज लता की वर्षगाँठ है। तू जायगा? उसको देने के लिए कुछ ले जायगा?'

अतुल ने कोट उतार दिया। जूते भी खोल दिये। माँ की बात सुनकर उसने कहा—'मैं कुछ नहीं ले जाऊँगा, माँ!'

माँ ने कहा—'नही बेटा! बड़ा घर है। उनकी बड़ी बात है।

जब बहुत से लोग कुछ-न-कुछ लायेंगे, तो तुम्हें भी कुछ देना पड़ेगा।'

किन्तु अतुल ने लापरवाही से कह दिया—'देखा जायेगा।'

उसी समय माँ के मन में बात आई कि पुत्र से पूछे कि वह राधा क्या अकेली रहेगी ? वह कहना चाहती थी कि राधा ने निरुद्देश्य ही विवाह करने से इन्कार नही किया। उसने नगर से तबादला भी किसी उद्देश्य से कराया है। लेकिन जब उसने इतनी बात भी पुत्र से नहीं कही, तो बरबस, यह विचार उसके मानस में ज़हरीले धुंए की तरह घुट गया कि वह लता हाथ धोकर उसके पुत्र के पीछे पड़ी है। इतना उस वृद्धा ने सुन लिया था कि लता जब माँ-बाप के आदेश पर नहीं चलती, तो भला पति की इच्छा का किस प्रकार पालन करेगी। वह एक मास में बाहर से लौटी है। वह किसी की प्रेमिका हो सकती है, सफल और सुयोग्य पत्नी नहीं बन सकती। किन्तु माँ अपने मन के इस अवसाद को भी रोक गयी। जब वह बाहर जाने लगी, तो बोली-'अच्छा, मैं खाना बनाती हूँ। तू स्नान कर।'

अतुल ने कहाँ—'माँ, मैं कुछ नहीं खाऊँगा।'

माँ कमरे के द्वार पर रुक गयी—'तो गाँव में कुछ खा लिया था, क्या ?

अतुल ने कहाँ—'मेरा पेट भरा है।' और वह चादर ओढ़ कर पलंग पर पड़ गया।

लेकिन अतुल को नींद तो आ नहीं रही थी। मन में थकान थी। उदासी थी। उसने स्पष्ट देखा कि लता और उसके पिता अत्यन्त तत्पर है, उस अतुल से सम्बन्ध बनाने के लिए। किन्तु उस समय अतुल को स्वयं अपने ऊपर क्षोभ था। लता के प्रति एक अजीब प्रकार का भाव अपने मन में रखकर भी, अतुल मौन था मानो अपनी गति अवरुद्ध देख चुका था। जब लता अपने पिता के साथ गाँव में पहुँची,

तो तब सचमुच ही, अतुल उस लता के प्रति मन में आई उपेक्षा, ग्लानि और भर्त्सना की बात स्वत: ही भूल गया। वह लता को देख पाते ही, बलात् उसकी ओर झुक गया। उसके वे सुन्दर और कीमती परिधान, कोमल शरीर, वह रुपहली सौन्दर्य मानो उसे आकर्षित करने में तब भी सफल था। वह शानदार मोटर और पिता का वह विशाल व्यक्तित्व स्वत: ही इतने लुभावने थे कि अतुल उस ओर से अपना मुँह नही मोड़ सका। यद्यपि उसने तब भी राधा के प्रति लता की उपेक्षा देखी थी। वह उसके मन को चुभी थी। परन्तु मूढ़ व्यक्ति के समान, उसने भी इस बात का अनुभव नही किया कि राधा के उस कर्त्तव्य कोष में जीवन का ममत्व था, अपूर्व ज्ञान था और मानवता के प्रति समर्पण का भाव।

अभी अतुल को पलंग पर पड़े कठिनाई से आधा घण्टा हुआ होगा कि तभी एक व्यक्ति ने द्वार पर आवाज दी। अतुल उठकर बाहर गया। देखा कि एक कृशकाय व्यक्ति द्वार पर खड़ा है। उसकी कमर झुकी है। आँखें निस्तेज है। आयु भी अधिक है। अतुल को सामने देखते ही वह बोला—'आप अतुलबाबू······'

अतुल ने विस्मय से कहा—'हाँ, मैं अतुल।'

'मेरे धन्यभाग, जो आपको पा गया। इस घर तक आने में परिश्रम तो अधिक करना पड़ा।' वह बोला—'चाहता हूँ आप मुझे अपना थोड़ा समय दे दें। मेरे साथ चले। मेरा लड़का कई मास का रोगी है। आप जानते हैं न राधाबाई को। वह हमारे गाँव के पास दूसरे गाँव में मास्टरनी है। उसी ने मुझे शहर भिजवाया है। आप का पता दिया और कहा, आप मेरे लड़के को अस्पताल में दाखिल करा देंगे।' उसने कहा—'बाबू, ऐसी भली और नेक लड़की मैंने ज़िन्दगी में नहीं देखी। बेचारी ने गाड़ी का किराया भी दिया। परन्तु यहाँ आया, तो डाक्टरों ने उस लड़के को दाखिल करने से इन्कार कर दिया।'

अतुल ने पूछा—'लड़का कहाँ है ।'

'सराय में ।' बाबा बोला—'अस्पताल के पास ही सराय है । लड़के की माँ उसके पास है ।'

'तो तकलीफ क्या है, तुम्हारे लड़के को ?' अतुल ने फिर प्रश्न किया ।

बाबा बोला—'बाबू, जानते तो हो, गरीबी सबसे बड़ी बीमारी होती है । दो मास पूर्व लड़के को बुखार चढ़ा था । वह बिगड़ गया । पैसे के अभाव में इलाज नहीं हो सका । अब डाक्टर कहते हैं कि उसे तपेदिक है ।' वृद्ध ने करुणार्द्र बनकर कहा—'बाबू, पिछले वर्ष ही उस लड़के का विवाह किया है । जवान बहू घर में है । उसके पेट में बच्चा है ।'

'ओह !' एकाएक अतुल के मुँह से निकला—'बाबा, बड़ा गुल-झटदार जीवन है, तुम्हारी गृहस्थी का ।' वह बोला—'तो राधाबाई ने क्या कहा था । कुछ लिखकर दिया ?'

'नहीं बाबू ! लिखकर कुछ नहीं दिया । उसने हाथ में पकड़ा कागज का टुकड़ा दिखाया—'बस, तुम्हारा पता लिख कर दिया था । मुझसे कहा था, डाक्टर दाखिल न करे, तो इन बाबू के पास जाना । इनके मन में दया है । गरीब के लिए करुणा है ।' वह बोला—'बाबू, राधाबाई कहती थी, बस मेरा नाम ही बहुत होगा, उन्हें बताने के लिए । दो दिन पहले मैं उनसे मिला था ।'

अतुल ने कहा—'मैं तो वहाँ गया था । मुझसे कुछ नहीं कहा ।' वह बोला—'अच्छा, अच्छा, तुम ठहरो । मैं चलता हूँ । चेष्टा कर देखता हूँ ।' वह बोला—'ऐसे असाध्य रोगियों को कम लेते हैं, डाक्टर लोग । उनके पास स्थान भी सीमित होते हैं ।' यह कहते हुए वह फिर घर में मुड़ गया । जूते पहन लिये । कोट पहन लिया । उसने कुछ रुपये भी जेब में रख लिये ।

जब अतुल बाहर जाने लगा, तो माँ के पास जाकर बोला—'मैं देर में आऊँगा, माँ ! प्रतीक्षा न करना ।'

माँ ने कहा—'मैं खाना बनाकर रखूँ या नहीं ?'

अतुल हँस दिया—'पेट तो भरना पड़ेगा, माँ !'

माँ बोली—'तू लता के यहाँ भी जायेगा ?'

अतुल कुछ उदास बन गया—'माँ, वहाँ जाना मैं आवश्यक नहीं मानता । जा सका, तो चला जाऊँगा । परन्तु पेट घर आकर भरूँगा ।' और वह तेज़ी के साथ द्वार पर पहुँच गया ।

उसने बूढ़े बाबा को साथ लिया और ताँगे में बैठकर अस्पताल की ओर चल पड़ा । ताँगा सराय के पास रुकवा दिया । सराय के एक कमरे में आकर उसने देखा कि सचमुच, जवान लड़का है । सूख कर काँटा बन गया है। अतुल के पास जाते ही, जब बीमार की माँ ने उसके पैर पकड़े तो वह पीछे हटता हुआ बोला—'नहीं, नहीं, यह तुम्हारा काम नहीं ।'

किन्तु उस नारी ने दीन स्वर में कहा—'बाबू, भला हो उन राधा बाई का कि जिन्होंने हम पर इतनी दया दिखायी । कहती थी, जिनके पास भेज रही हूँ, वे देवता हैं । मेरे कहे पर सभी कुछ कर सकते हैं ।'

अतुल ने कहा—'हाँ, हाँ, उस राधा बाई को यही कहना शोभता है ।' वह बाबा से बोला—'तुम मेरे साथ चलो । मैं मिलकर चेष्टा करूँगा कि आपका यह पुत्र अस्पताल में ले लिया जाय ।'

किन्तु जब अतुल अस्पताल में गया, तो बड़ा डाक्टर नहीं मिल पाया । पता चला कि वह अपनी कोठी पर पहुँच गया । बात करने से अतुल को इस बात का भी पता चल गया कि डाक्टर अब कल ही आयेगा, आज नहीं । अतएव, अतुल ने टैक्सी पकड़ी और बाबा को साथ

लिये डाक्टर की कोठी के रास्ते पर चढ़ गया। उसे पता था कि कोठी दूर है, नगर से बाहर है। उस समय दिन बहुत ढल चुका था। सूर्य सन्ध्या की तरफ जाने लगा था। लगभग एक घण्टे में अतुल वहाँ पहुँच गया। जाकर देखा कि डाक्टर अपने परिवार के साथ कहीं जाने को उद्यत था। वह गाड़ी में बैठने वाला था। पास जाते ही अतुल ने कहा—'संयोग है कि आपको पा गया।'

डाक्टर ने कहा—'कैसे कष्ट किया आपने ?' वह बोला—'आज बाबू जगजीवनराम की पुत्री की सालगिरह है। वहाँ जाना ज़रूरी है।'

अतुल बोला—'देखिये यह गरीब आदमी है। बूढ़ा है। गाँव से आया है। इसका जवान लड़का तपेदिक का मरीज़ है। अस्पताल में गया, परन्तु आपके सहायकों ने इसके पुत्र को लेने से इन्कार कर दिया।'

व्यस्त भाव में डाक्टर ने कहा—'हाँ, बड़ी विवशता है, अतुलबाबू ! पलंग कम हैं, रोगी अधिक हैं। स्थान का अभाव है।'

अतुल ने कहा—'परन्तु इस बूढ़े का सहारा न मिटने दीजिये।'

'हाँ, हाँ, आपका यहाँ तक आना ही मेरे लिए बहुत है। परन्तु परिस्थिति विपरीत है। वह बाधक है। क्षमा करें।' और यह कहते ही वह गाड़ी में बैठ गया।

लेकिन उस डाक्टर के वहाँ से जाते ही, अतुल का सिर घूम गया। उसे पता था कि यदि उस डाक्टर की जेब में रुपया डाल दिया जाता, तो काम हो जाता। समाज के प्राणों की रक्षा करने वाला जब स्वत: ही चोर बन गया, घूसखोर हो गया, तब भला क्या हो सकता था।

उस बंगले से मुड़ते हुए जब अतुल फिर सड़क पर पहुँचा तो तभी बूढ़े ने कहा—'बाबू, अस्पताल के सभी आदमी रिश्वत माँगते हैं। मुझसे कह चुके हैं।'

विषम भाव में अतुल बोला—'मुझे पता है ।' उसने कहा—'बाबा, इस नगर का प्रत्येक आदमी रिश्वतखोर है । अमानवीय तत्वों से भरा है । इन्सानियत का खून करता है ।'

चकित बनकर बाबा ने कहा—'बाबू यहाँ तो पैसा है । दरिया की तरह सोना-चाँदी बहता है । सुनता हूँ, यहाँ का इन्सान पढ़ा लिखा है । फिर भी ऐसा क्यों है ? लगता है कि यहाँ का आदमी भी चोर और बहुरूपिया है । इन्सानियत का गला घोटता है ।'

अतुल ने तीखे भाव से कहा—'बाबा, सभी कसाई हैं । मनुष्यता का खून करते हैं ।' यह कहते हुए उसने सामने से आती हुई टैक्सी रुकवाई और बूढ़े को साथ लेकर उसमें बैठ गया । तभी उसके मन में बात आई कि यह दुष्टता है । आदमी कोढ़ के पीब की तरह सड़ रहा है । संयोग की बात कि उसी समय नगर का एक विशाल और भव्य मन्दिर रास्ते में पड़ा । अतुल कभी उस मन्दिर में नहीं गया था । उसे पता था कि माँ प्रायः उस मन्दिर में जाती है । परन्तु अतुल तो घर पर रखे ठाकुर जी के पास भी कभी नहीं गया । उसका अभिमत था कि मनुष्य भले ही मूर्तिपूजक हो, भगवान को मानता हो, परन्तु उसके कर्म कभी भगवान और शास्त्रों के कथनानुसार नहीं बने । फलस्वरूप, उसकी दृष्टि में कसाई भला व्यक्ति था, जिसका व्यवसाय ही जानवर को काट कर उसका गोश्त बेचना था । वह कसाई जब सुबह-शाम मस्जिद में जाकर नमाज़ पढ़ता, तो अतुल उसका वह कर्म बुद्धिगम्य मानता । किन्तु सदाचार, दया और मानवता की आड़ में इन्सान के पेट पर लात मारने वाला अथवा गला काटने वाला व्यक्ति सचमुच ही नृशंस, क्रूर और बर्बर से कम नहीं दिखायी दिया । चोर और डाकू के समान, समाज का सभ्य व्यक्ति भी उसी पंक्ति में खड़ा हुआ दृष्टिगोचर हो रहा था ।

अतुल का दृष्टिपथ नगर के मेयर से मिलना था । जब वह उस

विशाल भवन के द्वार पर पहुँचा, तो वृद्ध को बाहर छोड़कर अन्दर प्रविष्ट हो गया। उस समय सूरज डूब चुका था, नगर विद्युत प्रकाश से जगमगा रहा था।

संयोग से नगर का मेयर अपने भवन के लॉन में बैठा मिल गया। अतुल को देखते ही, उसने तपाक से हाथ मिलाया और कहा—'आप यहाँ कैसे अतुलबाबू ?'

अतुल ने कहा—'एक आवश्यक कार्य था।' और उसने तभी सभी किस्सा कह सुनाया। वह बोला—'महोदय, बड़ी परेशानी है, हमारे समाज की। जिनके पास अधिकार है, वे उसका दुरुपयोग करते हैं। यदि उस वृद्ध किसान के पास पैसा होता, तो उसका जवान पुत्र अस्पताल में ले लिया जाता।'

मेयर सूखे भाव से मुस्कराया—'यदि वह पैसे वाला होता, तब तो अन्यन्त्र भी उपचार करा सकता था।' उसने कहा—'मैं पत्र देता हूँ, बीमार ले लिया जायगा।'

अतुल ने कहा—'आपका धन्यवाद।'

किन्तु उस प्रौढ़ व्यक्ति ने कहा—'अतुलजी, यह विषम समस्या है कि लोग धन के पीछे दौड़ते हैं। मनुष्यता को बेचते हैं। सरकार देश के समाज की सेवा करना चाहती है, परन्तु जो मध्यस्थ हैं, वे ऐसा नहीं करने देते। इन अस्पतालों का उपभोग भी पैसे वाले करते है। वे लाभ उठाते हैं।'

क्षुब्ध भाव में अतुल बोला—'हमारा शासक-वर्ग निर्बल है। जिनके हाथ में व्यवस्था है, वे चोर हैं। नीचे से ऊपर तक सभी एक ही पतनाले के नीचे खड़े हैं। और यह आप जानते हैं कि पतनाला ऊपर से गिरता है। जब अस्पताल का बड़ा डाक्टर रिश्वत लेगा, तो छोटे डाक्टर, नर्स और अन्य लोग भी ऐसा करेंगे।

मेयर ने कहा—'सभी विभागों में यही होता है। भ्रष्टाचार का दरिया बह रहा है।' वह मुस्कराया—'आपकी संस्था तो इस ओर अग्रसर है। किन्तु वह भी भ्रष्टाचार मिटाने में निष्क्रिय है। लगता है, परस्पराश्रित सम्बन्ध सभी को चुप रहने के लिए बाध्य करते हैं।'

अतुल ने साँस भरी—'श्रीमान, इस देश की व्यवस्था खराब है। मुझे लगता है, हमारे समाज का रोग असाध्य है। सत्य और कर्त्तव्य-निष्ठा का नेतृत्व अब समाप्त हो गया।'

उसी समय मेयर ने अस्पताल के प्रबन्धक के नाम पत्र लिखा और लिफाफे में रखकर अतुल को दे दिया। पत्र लेकर अतुल बोला—'आपका धन्यवाद। आपके द्वार पर खड़े बूढ़े को जीवन मिल जायगा।'

मेयर ने कहा—'कोई कठिनाई हो तो टेलिफोन कीजियेगा। आपका काम अवश्य होगा।'

अतुल विदा लेकर चल दिया। उसने बूढ़े को साथ लिया और ताँगे में बैठ गया। उसी रात में उस किसान का लड़का अस्पताल में दाखिल कर लिया गया। उस समय रात के दस बज चुके थे। उस काम से निवृत्त होकर जब अतुल सड़क पर आया, तो तब तक नगर का समाज अपने घरों में जा चुका था। सड़क पर सन्नाटा था। तभी अतुल को ध्यान आया कि उसे आज ही लता के घर जाना था। उसके समारोह में सम्मिलित होना था। सामने से रिक्शा आया और अतुल उसमें बैठ गया। वह कुछ ही देर में जगजीवन बाबू के बंगले पर पहुँच गया। उसे भरोसा था कि अब तक समारोह समाप्त हो चुका होगा। वहाँ शांति होगी। वह जाकर क्षमा मांग लेगा। अपनी विवशता बता देगा। किन्तु उस बगंले में प्रवेश करते ही अतुल ने देखा कि अभी वहाँ शोर था। म्यूज़िक हो रहा था। लता कुछ लड़कियों के साथ बैठी थी। वहीं पर कुछ युवक थे, जो कदाचित् उस पार्टी के विशिष्ट मेहमान थे।

अतुल को देखते ही, जगजीवन ने कहा—'अरे, कहाँ थे, आप ! सभी गुड़-गोबर कर दिया ।'

लता ने कहा—'होंगे कहाँ ! बैठे होंगे नदी पर ! उस पानी के कछुवे और मछली देखते होंगे !'

यह सुनते ही लता की सहेलियाँ और वे युवक हँस पड़े ।

लता ने कहा—'मै समझती थी कि आप शिक्षित हैं, समाज की परम्परा समझते है । परन्तु मेरा यह भ्रम था ।'

वही पर बैठे एक सुन्दर युवक ने कहा—'अतुल बाबू तो समाज सुधारक और नगर के सेवक है ।'

ताने मारते हुए तभी दूसरी लड़की बोली—'तभी इस प्रकार के समारोहों से दूर रहते हैं ।'

जगजीवन बाबू अपनी बात कह कर कमरे में चले गये थे । वे फिर लौट आये । लड़कियों को खिलखिला कर हसँते देख, वे चकित बने और चुपचाप व्यस्त भाव में बैठे अतुल की ओर देखकर बोले—'हॉ, अतुल बाबू ! कहॉ रहे आप ! भई, दिन में आपको लेने लता उस गॉव में गयी और तब भी आप समय पर नहीं आये ।'

अतुल ने कहा—'मुझे एक आवश्यक काम था । वह जरूरी था । अकस्मात् सिर पर आ पड़ा था ?'

लता ने कहा—'क्या वह काम यहाँ आने से ज़रूरी था ।'

सीधे-स्वभाव अतुल बोला—'हाँ, यहाँ का आना गौण था ।' और वह तभी खड़ा होकर बोला—'अच्छा राय साहब, अब मैं जाऊँगा । मैं दिन से ही घर से बाहर हूँ । अब थका हूँ । आपके पास आना था, सो आ गया । हाजरी दे चला ।'

विस्मय भाव से जगजीवन बाबू ने अतुल की ओर देखा—'भई, कुछ खाओ । बैठो ।'

लेकिन अतुल तो खड़ा हो चुका था। अतएव उसने कहा—'देखिये इस समय यहाँ जिस तरह का वातावरण है, उसमें मै फ़िट नही हूँ। वैसे भी मै मस्तिष्क से थका हूँ। मेरा नमस्कार !'

बरबस जगजीवन बाबू के मुँह से निकला—'नमस्कार।'

लेकिन उसी समय जब अतुल उस बंगले के द्वार पर पहुँचा, तो तभी लता ने पीछे से आकर कहा—'सुनियेगा।'

अतुल रुक गया। पास आते ही लता बोली—'तो आज आप मेरा अपमान कर रहे हैं। सभी के सामने नीचा दिखा रहे हैं।'

अतुल कुछ सकपकाया। परन्तु तुरन्त ही उसने कहा—'मैं इतनी क्षमता नहीं रखता। लेकिन तुम सरीखी अभद्र, और दम्भ से भरी किसी कुमारी का मैं अपमान करवाऊँ, तो इसे अशुभ भी नहीं मानूँगा।'

एकाएक लता के मुँह से निकला—'ओह !'

अतुल बोला—'मैं भूला नहीं हूँ कि तुम उस राधा का दो बार अपमान कर चुकी हो। वैसे तुम क्या हो, इतना मै जान चुका हूँ।' उसने कहा—'अच्छा ही था, मै आज तुम्हारे समारोह में सम्मिलित नही हुआ। यद्यपि यह सब मेरे अनजाने हुआ। किन्तु मेरे मन में बात है, जो कुछ होता है, भगवान के निर्देश पर होता है।' और यह कहते ही, वह तेज चाल से उस बंगले के बाहर निकल गया।

तभी वहाँ खड़ी रह गयी लता के मुँह से फूत्कार के समान फूट निकला—'दुष्ट···धृष्ट कहीं का !'

——

तेईस

किन्तु जब अतुल घर पहुँचा तो देखते ही मां ने कहा—'अरे, तू कहाँ गया था ? लता के घर से दो बार आदमी आया और लौट गया।'

अतुल ने बात सुन ली और कहा—'मैं उस घर हो आया, माँ !' वह बोला—'लाओ, मुझे कुछ खाने को दो। दिन भर का भूखा हूँ। आज बड़ा अशुभ दिन रहा।'

माँ हँसी—'तो क्या उस घर जाकर भी भूखा लौट आया ?' यह कहते ही माँ ने देखा कि उसका अतुल हँसी के मूड में नहीं है। भारी बना है। अतएव, मां ने आगे कुछ नहीं कहा। वह रसोई में गयी और थाली में खाना परोस लायी। उसी समय वह बोली—'ऐसे समय ही मुझे राधा याद आती है। जब तक वह रही, तो तेरे लिए जाने क्या-क्या बना कर देती रही। और मैं तो हूँ ही बुढ़िया, दस तरह की चीजें नहीं बना पाती।'

अतुल ने कहा—'माँ, तुम पेट भर देती हो, यह भी बहुत है। अन्ततः राधा पराई थी, दूसरे घर की थी। उसके भरोसे भला कैसे गुजारा होता ?'

लेकिन इतनी बात सुनकर मां ने साँस भरी—'अरे, बेटा ! वह लड़की पराये घर की होते हुए भी अपनी थी। ऐसी स्नेहमयी और ममतामयी मुझे कोई और नही दीख पड़ी।'

अतुल उस समय भूखा था, इसलिए वह माँ की बात सुन कर भी खाने में लगा रहा। उस समय रात के बारह के लगभग बज चुके थे।

खाना खाकर अतुल पड़ गया। कुछ देर उसके दिमाग में विभिन्न प्रकार की बातें आईं और चली गयीं। कभी देश की बात, कभी समाज के भ्रष्ट व्यक्ति की बात। लेकिन जब वह राधा की बात लिये-लिये लता की बात पर आया, उसके जीवन पर टिका, नैतिक और सामाजिक पहलू पर दृष्टिपात करने लगा, तो तभी-तब वह उपेक्षा तथा अनमने भाव से करवट बदल कर सोने की चेष्टा में लग गया।

फलस्वरूप उन दिनों अतुल व्यस्त अधिक रहने लगा था। वकालत के काम के अतिरिक्त उसे संस्था का काम भी देखना पड़ता। चूँकि वह पिछले दिनों दो-तीन विवादास्पद मुकदमों में विजयी रहा, तो बलात् उसका कचहरी का काम भी बढ़ गया। सामाजिक भ्रष्टाचार, चोर-बाजारी, तथा समाज के नैतिक चरित्र सम्बन्धित मुकदमे उसके पास अधिक आने लगे थे। इसलिए उन दिनों उसे इतनी फुरसत नहीं थी कि कभी पहले के समान माँ के पास बैठकर बातें करता, घर की या अपने विवाह की बात सोचता। चूँकि कुछ समय के लिए उसके घर से नौकर चला गया था, अवसर पाते ही, वह फिर लौट आया, तो माँ को आराम था। फलस्वरूप, धीरे-धीरे अतुल का ऐसा क्रम बना कि रात का खाना या तो वह अपने दफ्तर में मंगा कर खाता, अथवा रात के दस-ग्यारह बजे के बाद। मां यह देखती और साँस भर कर रह जाती। उसे यह अच्छा नहीं लगता था कि उसका बेटा ठण्डा भोजन करे। उसकी अभिलाषा थी कि अतुल को ताजा और गरम भोजन मिले। क्योंकि वह उसकी प्रकृति के अनुरूप था।

उन दिनों राय जगजीवन बाबू कचहरी में अतुल से प्राय: मिलते। अपेक्षाकृत वह अधिक ममत्व और अपनत्वता दिखाते। वह चाहते थे कि पुत्री के विवाह के प्रकरण को अन्तिम रूप दें। कदाचित् यह इसलिए भी था कि उस चतुर वकील के मन में स्वयं इस बात का चोर था कि अतुल उनकी पुत्री और धन के प्रति उतना तल्लीन नहीं, जितना पहले कभी था। निश्चय ही, उस व्यक्ति ने यह समझ लिया कि इस विषय में जहाँ उनकी पुत्री की अव्यावहारिकता रास्ते में बाधक थी, वहाँ गाँव में वह अध्यापिका का काम करने वाली राधा भी थी। फिर भी उस व्यक्ति को भरोसा था कि वह अतुल को हाथ से नहीं जाने देगा। उसका पैसा और पुत्री का रूप उसके जीवन के चारों ओर घेरा डाल देगा। किन्तु वह घेरा कब पड़े, अतुल कब उनकी गिरफ्त में आये, ऐसा सुयोग उस व्यक्ति को प्राप्त नहीं हो रहा था। पुत्री की सालगिरह का आयोजन इसी उद्देश्य का एक अंग था। लेकिन अतुल तब भी किनारा काट गया। हाथ में आया शिकार न पुत्री पा सकी, न पिता को ही अपनी सफलता पर गर्व करने का अवसर प्राप्त हुआ।

लेकिन एक दिन जब अतुल देर में घर आया, तो उसे देखते ही माँ बोली—'अरे, आ गया तू! हे राम! अब तू ऐसा हो गया है कि खोज करने पर भी नहीं पाया जाता। तुझसे कुछ कहना हो, तो नहीं कहा जाता।'

अतुल हँस दिया—'मैं प्रस्तुत हूँ, माँ! तुम अपनी बात कहो।' वह बोला—'मैं आज अस्पताल गया था। एक किसान का लड़का तपेदिक में पड़ा था, आज उसी के पास मैं पहुँचा था।'

माँ ने कहा—'ले, पहले खाना खा तू! फिर जा, उस राधा के पास! जाकर देख तो, उसका क्या हाल हो गया। आज उसकी माँ उसे बाहर से यहाँ ले आई है।'

सुनते ही अतुल जैसे खो गया। वह विस्मित बनकर बोला—'माँ, क्या हुआ राधा को! मुझे तो पता भी नही चला।'

माँ ने कहा—'उस कम्बख्त ने गाँव में रह कर रोग बढ़ा लिया। किसी को भी समाचार नहीं दिया। मैं उसके पास गयी, तो रो पड़ी। कहने लगी, ताई, मेरा मरना ही ठीक है! मेरे जीवित रहने का महत्व क्या है!'

एकाएक अतुल चीख पड़ा—'माँ!'

माँ बोली—'बेटा, आज कहती हूँ मैं, उस राधा के मन का मर्म तू नहीं समझ पाया। तू ऐसा पत्थर बना कि उसकी ओर नही देख सका।'

अतुल खड़ा हो गया और कमरे से बाहर जाता हुआ बोला—'माँ, सुबह लता के पिता आयेंगे, शायद माँ भी। मैं परेशान हूँ कि उनके मन में अपने जीवन की आस्था नहीं बैठा पाता। शायद मैं दुर्बल हूँ। निस्तेज हूँ। मैं अब प्राय: यह भी सोचता हूँ कि राय जगजीवन बाबू का रुपया अपनी ओर खेंचता है। परन्तु मैं आज तुमसे कहता हूँ मुझे वह कुछ नहीं चाहिए। सच, कुछ भी नहीं। और यह कहते ही वह तेजी के साथ मकान से निकल गया।

अतुल सीधा राधा के घर पहुँच गया। जाकर देखा कि सचमुच राधा स्याह पड़ चली है। अपेक्षाकृत दुर्बल है। यह देखते ही, अतुल उसकी ओर झुक गया—'राधा, यह सब क्या है? तुम्हें क्या बीमारी है?' और उसने पास बैठी राधा की माँ को लक्ष्य किया—'चाची, मुझे खबर भी नहीं दी। मुझे लिखना था।'

चाची ने कहा—'बेटा, मैंने तो बहुत कहा, इस राधा से। परन्तु जाने क्या बात इसके मन में आ गयी है कि तुम्हारा नाम लेते ही रोती है। अब तो चीखकर कह उठती है, अतुल बाबू अब मेरे नहीं रहे, मेरे

नहीं रहे। धनिक बाप के बेटे धन की ओर ही देखते हैं। जीवन का रूप और वैभव ही पसन्द करते हैं, अतुल बाबू !' यह कहते हुए वह दूसरी ओर बढ़ गयी।

एकाएक राधा ने क्षीण स्वर में कहा—'चुप रहो, माँ ! अतुल बाबू को परेशान न करो।'

किन्तु अतुल ने अपने दोनों हाथों की मुट्ठियाँ बाँध लीं। उसने अपना सिर राधा की चारपाई पर झुका दिया। तभी उसकी निगाह पड़ी अपने हाथ की उंगली पर। उस उंगली में हीरे जड़ी अंगूठी पड़ी थी। वह उसने निकाल ली। राधा का हाथ पास ही रखा था। वह पकड़ लिया और उसकी एक उंगली में वह अंगूठी डाल कर बोला—'जानती हो, यह कब डाली जाती है ? जानता हूँ, मुझसे अधिक तुम समझती होगी। एकांत रूप से इस बात का विश्वास रखो कि यह अतुल तुम्हारा है, किसी और का नहीं।'

लेकिन इतना सुनते ही, राधा ने कातर बनकर कहा—'मै अब जीवित नहीं रहूँगी, अतुल बाबू ! मर जाऊँगी। मै अपने लिए आपको अंधेरे में नहीं धकेलूँगी।'

अतुल खड़ा हो गया और बोला—'यह समझना मेरा काम है। मैं मूर्ख नहीं हूँ। तुम्हारी सद्‌भावना मेरे जीवन का सम्बल है। क्या इस बात को मानने से तुम इन्कार कर सकोगी ? धैर्य रखो, तुम रहोगी। इस अतुल को तुम्हारी आवश्यकता है। प्रातः आऊँगा। डाक्टर भी साथ लाऊँगा।' और वह तभी वहाँ से लौट गया।

घर आते ही अतुल ने देखा कि मां अपने ठाकुरजी के सामने बैठी माला फेर रही है। यह देख पाते ही, उसने आलोकित बनकर मां के दोनों कन्धे पकड़ लिये और एकाएक उल्लसित बनकर बोला—मां, जी चाहता है कि आज तेरे ठाकुरजी के समक्ष अपना सिर झुका दूँ। मैंने आज अंतिम रूप से वह वस्तु पा ली है कि जिसकी तुम्हें तलाश थी।'

यह कहते हुए अतुल खड़ा हो गया। अपने कमरे की ओर बढ़ गया। लेकिन जिस प्रकार की बात वह मां से कह गया, तो उसे सुन-कर मां सहसा विस्मय से भर गयी। वह समझ गयी कि लता के पिता ने अंतिम रूप से इस अतुल को अपने पक्ष में कर लिया, वह सफेद कबूतरी लता सफल हो गयी। मन में इतना सोचते ही, मां एकाएक पीली पड़ गयी। मुँह पर उदासी छा गयी। उसने माला रख दी और अपने भगवान को हाथ जोड़कर वहाँ से उठ चली। वह धड़कते मन के साथ अतुल के कमरे में गयी। देखा कि वह अपने पिता के आदमकद चित्र की ओर निगाह लगाये खड़ा था। उसकी पीठ दरवाज़े की ओर थी। अतएव, वह क्या कह रहा था, मन में क्या लिये था, माँ इतना नहीं समझ पायी।

उस अवस्था में ही जानकी ने अपनी छाती पकड़ी और अतुल के पीछे जाकर खड़ी होती हुई बोली—'अरे, क्या कहता था, तू ! कैसी रहस्यमयी पहेली पुकारता था। गया था, राधा के घर और क्या बात लेकर आया।'

मां की बात सुनते ही, अतुल मुड़ गया। देखा कि वह अतिशय गम्भीर था। कुछ देर पूर्व के सदृश उत्फुल्ल या भावविभोर नहीं था। लगा कि उसके मन का उद्वेग आँखों में उतर आया। उसी अवस्था में वह माँ की रूखी और उदास आँखों पर टिक कर बोला—'मां, ये मेरे पिताजी हैं। बहुत दिन के बाद मैं आज इनकी ओर देख पाया हूँ। देखता हूँ, चित्र पर धूल भी जमी है। मैं किसी समय स्वयं साफ करता था इस चित्र को, परन्तु अब जीवन के अंधेरे में ऐसा गया कि इस ओर से भी उन्मुख हो गया। और मैं यह सदा मानता रहा हूँ कि पिताजी का आशीष मेरा सम्बल रहा है, मेरा मार्ग-दर्शक।'

माँ ने साँस भरकर कहा—'बेटा, तू आज ऐसा कहता है, परन्तु मैने तो सदा ही यह अनुभव किया है। इस घर की चेतना और आत्मा

में तेरे पिताजी का दर्शन मुझे सदा-सर्वदा हुआ । सभी जानते हैं कि उन्होंने कभी अपने स्वार्थ के लिए दूसरे को नहीं सताया ।'

अतुल ने कहा—'माँ, पिताजी की यह भी तो आकांक्षा थी कि राधा इस घर में रहे । यहाँ से दूर न जाये ।'

मां ने धड़कते दिल से कहा—'हाँ, बेटा ! उनकी यह अभिलाषा थी ।' अतुल ने अपने स्वर पर ज़ोर दिया—'तो मां, पिताजी की आकांक्षा अब पूर्ण होगी । राधा इस घर की दुल्हन बनेगी, तुम्हारी बहू ।'

एकाएक मां ने स्वर पर ज़ोर दिया—'बेटा !'

अतुल कुर्सी पर बैठ गया और बोला—'मां, मैं उस राधा को अपनी अंगूठी पहना आया हूँ । सुबह जाना उसके पास, बहू के लिए बनाया जेवर भी उसे पहना आना ।'

किन्तु मां ने शंकित और पीड़ित बनकर कहा—'अरे, बेटा ! अब उस राधा को जीवन चाहिए । जीवन का प्रकाश चाहिए ।'

अतुल ने कहा—'मां, भूख लगी है ।' वह बोला—'तुम विश्वास रखो मां, राधा रहेगी । उसे कोई संक्रामक रोग नहीं है । उसके शरीर की और मन की व्यथा को मैंने समझ लिया है ।'

माँ लौट गयी । वह द्वार पर रुक कर बोली—'भगवान का शुक्र है कि तूने इस सत्य को संभाल लिया ।' और वह तभी रसोई घर की ओर बढ़ गयी । नौकर खाना बनाने में लगा था, जाकर उससे बोली—'अरे, रघुवा ! देख, तेरे बाबू को रबड़ी पसन्द आती है । ज़रा बाजार जा, और उस हलवाई की दुकान से ले आ । देख, जल्दी लौटना ।'

रघुवा चला गया । तभी जानकी के मन में बात आई, मेरा अतुल एक-न-एक दिन सचाई की ओर देखेगा, इसका मुझे पता था । सो, आज इसने वास्तविकता को समझ लिया ।

और मन के उन्हीं उद्‌गारों में भरी जानकी ने पुत्र को भोजन करा दिया । यदि रात अधिक न जगती, तो वह तभी राधा के घर जाती । उसे विश्वास था कि राधा अब सुखी होगी । वह अपने मन की बल्लियो पर उछल रही होगी ।

———